महर्षि मार्कण्डेय ने ब्रह्मा से पूछा—हे पितामह, संसार में जो परम गुप्त हो, जिससे मनुष्यों की रक्षा हो और जो किसी से न कहा गया हो वह मुझसे कहिए। १।

अथ देवीकवचम्

ॐ नमश्चण्डिकायै। मार्कण्डेय उवाच। ॐ यद्गुह्यं परमं लोके सर्वरक्षाकरं नृणाम्। यन्न कस्यचिदाख्यातं तन्मे ब्रूहि पितामह॥ १॥

ब्रह्मोवाच।

अस्ति गुह्यतमं विप्र सर्वभूतोपकारकम्। देव्यास्तु कवचं पुण्यं तच्छृणुष्व महामुने॥ २॥ प्रथमं शैलपुत्री च

ब्रह्मा ने कहा—हे महामुने, अति गुप्त और सब प्राणियों का उपकारक देवी का पवित्र कवच है, वह मैं तुमको बतलाता हूँ, सुनो। २। प्रथम शैलपुत्री, दूसरी ब्रह्मचारिणी,

तीसरी चन्द्रघंटा, चौथी कूष्मांडा। ३। पाँचवीं स्कन्द-माता, छठी कात्यायनी, सातवीं कालरात्री, आठवीं महागौरी। ४। नवीं सिद्धिदा, ये नव दुर्गा के नाम महात्मा ब्रह्मा ने कहे हैं। ५। आग में जलता हुआ, युद्ध में शत्रुओं से घिरा हुआ अथवा अत्यन्त दुःख में

द्वितीयं ब्रह्मचारिणी। तृतीयं चन्द्रघण्टेति कूष्माण्डेति चतुर्थकम्॥ ३॥ पञ्चमं स्कन्दमातेति षष्ठं कात्यायनीति च। सप्तमं कालरात्रीति महागौरीति चाष्टमम्॥ ४॥ नवमं सिद्धिदा प्रोक्ता नव दुर्गाः प्रकीर्तिताः। उक्तान्येतानि नामानि ब्रह्मणैव महात्मना॥ ५॥ अग्निना दह्यमानस्तु शत्रुमध्ये गतो रणे। विषमे दुर्गमे चैव भयार्ताः शरणं गताः॥ ६॥ न

पड़कर डरे हुए जो मनुष्य इन नामों की शरण लेते हैं, अर्थात् इनमें से किसी का स्मरण करते हैं। ६। उनका कुछ भी अशुभ नहीं होता। युद्ध के संकट में भी उनका अमंगल

नहीं होता। जो दुःखित मनुष्य इन देवियों का स्मरण करता है, देवियाँ उसे दुःखित नहीं देख सकतीं और उसकी विपत्ति दूर कर देती हैं। ७। जो मनुष्य भक्तिपूर्वक देवी का स्मरण करते हैं उनकी वृद्धि होती है। अब सप्तमातृ का वर्णन करते हैं। चामुण्डा

तेषां जायते किञ्चिदशुभं रणसङ्कटे। नापदं तस्य पश्यन्ति सर्वदुःखक्षयङ्करी ॥७॥ यैस्तु भक्त्या स्मृता नूनं तेषामृद्धिः प्रजायते। प्रेतसंस्था तु चामुण्डा वाराही महिषासना ॥८॥ ऐन्द्री गजसमारूढा वैष्णवी गरुडासना। माहेश्वरी वृषा-रूढा कौमारी शिखिवाहना॥९॥ब्राह्मी हंससमारूढा सर्वा-भरणभूषिता।नानाभरणशोभाढ्यानानारत्नोपशोभिता: १०

प्रेत पर, वाराही महिष पर, ऐन्द्री हाथी पर, वैष्णवी गरुड़ पर, माहेश्वरी बैल पर, कौमारी मयूर पर और ब्राह्मी हंस पर सवार हैं तथा सब आभूषणों से भूषित हैं। इनके सिवा अनेक प्रकार के आभूषणों तथा रत्नों से शोभित, रत्नों पर सवार, क्रोध में भरी

हुई और भी देवियाँ हैं। अब देवियों के आयुध बताते हैं। शंख, चक्र, गदा, शक्ति, हल, मुसल, खेटक, तोमर, परशु, पाश, कुन्त, त्रिशूल और सर्वश्रेष्ठ शार्ङ्ग आयुध है। दैत्यों के नाश के लिए और भक्तों का भय दूर करने के लिए तथा देवताओं के हित के लिए,

दृश्यन्ते रथमारूढा देव्यः क्रोधसमाकुलाः। शङ्खं चक्रं गदां शक्तिं हलं च मुसलायुधम्॥ ११॥ खेटकं तोमरं चैव परशुं पाशमेव च। कुन्तायुधं त्रिशूलं च शार्ङ्गमायुधमनुत्तमम्॥ १२॥ दैत्यानां देहनाशाय भक्तानामभयाय च। धारयन्त्यायुधानीत्थं देवानां च हिताय वै॥ १३॥ महाबले महोत्साहे महाभयविनाशिनि। त्राहि मां देवि दुष्प्रेक्ष्ये शत्रूणां भयव-

ये सब आयुध धारण करती हैं। ८-१३। हे महाबले, हे महोत्साहे, हे महाभय का विनाश करनेवाली, हे दुःख से दर्शन देनेवाला, हे शत्रुओं का भय बढ़ानेवाली, हे देवि,

मेरी रक्षा करो । १४ । ऐंद्री देवी पूर्व दिशा में मेरी रक्षा करें, अग्निरूपा देवी अग्निकोण में रक्षा करें, हे वाराहि, तुम दक्षिण में रक्षा करो, खड्गधारिणी नैऋति में रक्षा करें । १५ । वारुणी पश्चिम में, मृगवाहिनी वायव्य में, कामारी उत्तर में और

धिनि ॥ १४ ॥ प्राच्यां रक्षतु मामैन्द्री आग्नेय्यामग्नि-देवता । दक्षिणे रक्ष वाराहि नैर्ऋत्यां खड्गधारिणी ॥ १५ ॥ प्रतीच्यां वारुणी रक्षेद्वायव्यां मृगवाहिनी । रक्षेदुदीच्यां कौमारी ईशान्यां शूलधारिणी ॥ १६ ॥ ऊर्ध्वं ब्रह्माणि मे रक्षेदधस्ताद्वैष्णवी तथा । एवं दश दिशो रक्षेच्चामुण्डा शववाहना ॥ १७ ॥ जया मे चाग्रतः स्थातु विजया स्थातु

शूलधारिणी ईशान में रक्षा करें । १६ । हे ब्रह्माणि, ऊपर की ओर आप रक्षा करें और नीचे की ओर वैष्णवी रक्षा करें । इसी प्रकार प्रेतवाहिनी चामुण्डा दशों दिशाओं में रक्षा करें । १७ । जया देवी मेरी रक्षा के लिए आगे और विजया पीछे स्थित रहें ।

अजिता बाईं ओर और अपराजिता दाहिनी ओर रक्षा करें। १८। उद्योतिनी शिखा की रक्षा करें, उमा सिर पर स्थित होकर सिर की रक्षा करें, मालाधरी ललाट की और यशस्विनी भृकुटियों की रक्षा करें। १९। त्रिनेत्रा भौंहों के बीच की, यमघंटा

पृष्ठतः। अजिता वामपार्श्वे तु दक्षिणे चापराजिता ॥१८॥
शिखामुद्योतिनी रक्षेदुमा मूर्ध्नि व्यवस्थिता। मालाधरी
ललाटे च भ्रुवौ रक्षेद्यशस्विनी ॥ १९ ॥ त्रिनेत्रा च भ्रुवो-
र्मध्ये यमघण्टा च नासिके। शङ्खिनी चक्षुषोर्मध्ये श्रोत्र-
योर्द्वारवासिनी ॥ २० ॥ कपोलौ कालिका रक्षेत्कर्णमूले
तु शाङ्करी। नासिकायां सुगन्धा च उत्तरोष्ठे च चर्चिका २१॥

नासिका के छिद्रों की, शंखिनी नेत्रों की और द्वारवासिनी कानों की रक्षा करें। २०। कालिका कपोलों की, शांकरी कर्णमूल की, सुगन्धा नासिका की और चर्चिका ऊपर

के होठ की रक्षा करें । २१ । अमृतकला नीचे के होठ की, सरस्वती जिह्वा की, कौमारी दाँतों की और चण्डिका कंठ की रक्षा करें । २२ । घाँटी की चित्रघंटा, तालु की महा-माया, ठोढ़ी की कामाक्षी और वाणी की सर्वमंगला रक्षा करें । २३ । ग्रीवा की

अधरे चामृतकला जिह्वायां च सरस्वती । दन्तान्रक्षतु कौमारी कण्ठमध्ये च चण्डिका ॥ २२ ॥ घण्टिकां चित्र-घण्टा च महामाया च तालुके । कामाक्षी चिबुकं रक्षेद्वाचं मे सर्वमङ्गला ॥ २३ ॥ ग्रीवायां भद्रकाली च पृष्ठवंशे धनुर्धरी । नीलग्रीवा बहिः कण्ठे नलिकां नलकूबरी ॥ २४ ॥ खड्गधारिण्युभौ स्कन्धौ बाहू मे वज्रधारिणी । हस्तयो-

भद्रकाली, पृष्ठवंश की धनुर्धरी, कंठ के बाहर की नीलग्रीवा और नलिका की नलकूबरी रक्षा करें । २४ । दोनों कन्धों की खड्गिनी, भुजाओं की वज्रधारिणी, हाथों की दंडिनी

और अंगुलियों की अम्बिका रक्षा करें। २५। हाथों के नखों की शूलेश्वरी, बगलों की नलेश्वरी और दोनों स्तनों की महादेवी रक्षा करें, जो मन का शोक दूर करनेवाली

दण्डिनी रक्षेदम्बिका चांगुलीषु च ॥ २५ ॥ नखाञ्छूले-
श्वरी रक्षेत् कुक्षौ रक्षेन्नलेश्वरी। स्तनौ रक्षेन्महादेवी मनः
शोकविनाशिनी ॥ २६ ॥ हृदयं ललिता देवी ह्युदरे शूल-
धारिणी। नाभिं च कामिनी रक्षेद् गुह्यं गुह्येश्वरी तथा ॥२७॥
भूतनाथा च मेढ्रं च गुदं महिषवाहिनी। कट्यां भगवती
रक्षेज्जानुनी विन्ध्यवासिनी ॥ २८ ॥ जङ्घे महाबला रक्षे-

हैं। २६। ललिता देवी हृदय की, शूलधारिणी उदर की, कामिनी नाभि की और गुह्येश्वरी गुह्यस्थान की रक्षा करें। २७। लिंग की भूतनाथा, गुदा की महिषवाहिनी, कटि की भगवती और दोनों घुटनों की विन्ध्यवासिनी रक्षा करें। २८। महाबला जाँघों की

रक्षा करें, विनायकी घुटनों के बीच की रक्षा करें, नारसिंही गुल्फों की और मितौजसी पादपृष्ठ की रक्षा करें । २९ । श्रीधरी पैरों की अँगुलियों का, पातालवासिनी तलुओं की, दंष्ट्राकराली पैरों के नखों की और ऊर्ध्वकेशिना केशों की रक्षा करें । ३० । कौबेरी

ज्जानुमध्ये विनायकी । गुल्फयोर्नारसिंही च पादपृष्ठे मितौ-
जसी ॥ २९ ॥ पादाङ्गुलीः श्रीधरी च पादाधस्तलवासिनी ।
नखान्दंष्ट्राकराली च केशांश्चैवोर्ध्वकेशिनी ॥ ३० ॥ रोम-
कूपेषु कौबेरी त्वचं वागीश्वरी तथा । रक्तमज्जावसामां-
सान्यस्थिमेदांसि पार्वती ॥ ३१ ॥ अन्त्राणि कालरात्रिश्च
पित्तं च मुकुटेश्वरी । पद्मावती पद्मकोशे कफे चूडामणि-

रोएँ के छेदों का, वागीश्वरी त्वचा की और पार्वती रक्त, मज्जा, वसा, मांस, हड्डी तथा मेद की रक्षा करें । ३१ । कालरात्री आँतों की, मुकुटेश्वरी पित्त की, पद्मावती पद्मकोश

की और चूडामणि कफ की रक्षा करें। ३२। ज्वालामुखी नखों के तेज की और अभेद्या सर्वसंधियों की रक्षा करें। हे ब्रह्माणि, तुम वीर्य की रक्षा करो और छत्रेश्वरी छाया की रक्षा करें। ३३। हे धर्मचारिणि, तुम मेरे अहंकार, मन और बुद्धि की तथा

स्तथा॥ ३२॥ ज्वालामुखी नखज्वालामभेद्या सर्वसन्धिषु। शुक्रं ब्रह्माणि मे रक्षेच्छायां छत्रेश्वरी तथा ॥३३॥ अहङ्कारं मनो बुद्धिं रक्ष मे धर्मचारिणि। प्राणापानौ तथा व्यान-समानोदानमेव च ॥ ३४ ॥ यशः कीर्तिं च लक्ष्मीं च सदा रक्षतु चक्रिणी। गोत्रमिन्द्राणि मे रक्षेत्पशून्मे रक्ष चण्डिके॥३५॥ पुत्रान्रक्षेन्महालक्ष्मीर्भार्यां रक्षतु भैरवी।

प्राण, अपान, व्यान, समान और उदान की रक्षा करो। ३४। चक्रिणी यश, कीर्ति और लक्ष्मी की सदा रक्षा करें। हे इन्द्राणि, तुम मेरे कुल की रक्षा करो और हे चण्डिके, तुम मेरे पशुओं की रक्षा करो। ३५। महालक्ष्मी पुत्रों की रक्षा करें, भैरवी स्त्री की रक्षा

करें, क्षेमंकरी मार्ग की रक्षा करें, और सर्वव्यापिनी विजया सब प्रकार के भय से रक्षा करें। ३६। जो स्थान रक्षाहीन हैं, अर्थात् कवच में नहीं कहे गये हैं, हे देवि, तुम पापनाशिनी और जयन्ती हो उन सबकी रक्षा करो। ३७। जो मनुष्य अपना कल्याण

मार्गं क्षेमंकरी रक्षेद्विजया सर्वतः स्थिता ॥३६॥ रक्षाहीनं तु यत्स्थानं वर्जितं कवचेन तु। तत्सर्वं रक्ष मे देवि जयन्ती पापनाशिनी ॥ ३७॥ पदमेकं न गच्छेत्तु यदीच्छेच्छुभमात्मनः। कवचेनावृतो नित्यं यत्र यत्रैव गच्छति ॥३८॥ तत्र तत्रार्थलाभश्च विजयः सर्वकामिकः। यं यं चिन्तयते कामं तं तं प्राप्नोति निश्चितम् ॥ ३९ ॥ परमैश्वर्यमतुलं

चाहे, वह कवच के विना एक पद भी न चले, अर्थात् क्षण भर के लिए भी देवी को न भूले। मनुष्य देवी का स्मरण करता हुआ जहाँ जाता है वहाँ धन का लाभ, विजय और सब कामनाएँ सिद्ध होती हैं। वह मनुष्य जिस काम की चिन्ता करता है, वह काम अवश्य

सिद्ध होता है और उसी जन्म में अतुल ऐश्वर्य प्राप्त करता है। कवच धारण करने से मनुष्य संग्राम में पराजित न होकर निर्भय हो जाता है और तीनों लोकों में पूज्य होता है। देवी का यह कवच देवताओं को भी दुर्लभ है। ३८–४१। जो मनुष्य इसे श्रद्धा

प्राप्स्यते भूतले पुमान्। निर्भयो जायते मर्त्यः संग्रामेष्व-
पराजितः ॥ ४० ॥ त्रैलोक्ये तु भवेत्पूज्यः कवचेनावृतः
पुमान्। इदं तु देव्याः कवचं देवानामपि दुर्लभम् ॥ ४१ ॥
यः पठेत्प्रयतो नित्यं त्रिसन्ध्यं श्रद्धयान्वितः। दैवी कला
भवेत्तस्य त्रैलोक्ये चापराजितः ॥ ४२ ॥ जीवेद्वर्षशतं
साग्रमपमृत्युविवर्जितः। नश्यन्ति व्याधयः सर्वे लूता-

और नियम से नित्य तीनों काल में पढ़ता है उसमें दैवी कला हो जाती है, और वह तीनों लोकों में अपराजित तथा अपमृत्यु से रहित होकर एक-सौ-बीस वर्ष जीता है।

उसकी लूताविस्फोटक आदि सब व्याधियाँ नष्ट हो जाती हैं। स्थावर, जंगम और कृत्रिम विष, सब अभिचार, पृथ्वी भर के मन्त्र, यन्त्र, भूचर, खेचर, जलचर और उपदेशिक जलचर, साथ ही उत्पन्न हुए और कुल में उत्पन्न हुए रोग तथा गंडमाला, डाकिनी, शाकिनी,

विस्फोटकादयः ॥ ४३ ॥ स्थावरं जङ्गमं चापि कृत्रिमं चापि यद्विषम् । अभिचाराणि सर्वाणि मन्त्रयन्त्राणि भूतले ॥ ४४ ॥ भूचराः खेचराश्चैव जलजाश्चोपदेशिकाः । सहजाः कुलजा माला डाकिनी शाकिनी तथा ॥ ४५ ॥ अन्तरिक्षचरा घोरा डाकिन्यश्च महाबलाः । ग्रहभूत-पिशाचाश्च यक्षगन्धर्वराक्षसाः ॥ ४६ ॥ ब्रह्मराक्षसवेतालाः कूष्माण्डा भैरवादयः । नश्यन्ति दर्शनात्तस्य कवचे हृदि

अंतरिक्षचर और महाबलवाली घोर डाकिनियाँ, ग्रह, भूत, पिशाच, यक्ष, गन्धर्व, राक्षस, ब्रह्मराक्षस, वेताल, कूष्मांड और भैरव आदि उसको देखकर भाग जाते हैं। जिसके

हृदय में कवच होता है उसके सम्मान की उन्नति होती है। यह कवच राजा के तेज को बढ़ानेवाला है। जो मनुष्य कवच का पाठ करके सप्तशती का पाठ करता है उसका यश

संस्थिते ॥ ४७ ॥ मानोन्नतिर्भवेद्राज्ञस्तेजोवृद्धिकरं परम्। यशसा वर्धते सोऽपि कीर्तिमण्डितभूतले ॥ ४८ ॥ जपेत्सप्तशतीं चण्डीं कृत्वा तु कवचं पुरा। यावद्भूमण्डलं धत्ते सशैलवनकाननम् ॥ ४९ ॥ तावत्तिष्ठति मेदिन्यां सन्ततिः पुत्रपौत्रकी। देहान्ते परमं स्थानं यत्सुरैरपि दुर्लभम् ॥ ५० ॥ प्राप्नोति पुरुषो नित्यं महामायाप्रसादतः।

इति देव्याः कवचं समाप्तम्।

बढ़ता है और पृथ्वी भर में उसकी कीर्ति होती है। जब तक पृथ्वी पर पहाड़, वन और वृक्ष आदि हैं तब तक उसका पुत्र-पौत्रादि का सन्तति स्थित रहेगी। वह पुरुष मरने पर महामाया के प्रसाद से सब श्रेष्ठस्थान को जाता है, जो देवताओं को भी दुर्लभ है। ४२-५०।

अथ अर्गलास्तोत्रम्

ॐ नमश्चण्डिकायै

ॐ नमश्चण्डिकायै । जयन्ती, मंगला, काली, भद्रकाली, कपालिनी, दुर्गा, क्षमा, शिवा, धात्री, स्वाहा और स्वधारूपिणी देवी को नमस्कार है । १ । हे मधुकैटभनाशिनि,

जयन्ती मंगला काली भद्रकाली कपालिनी। दुर्गा क्षमा शिवा धात्री स्वाहा स्वधा नमोऽस्तु ते ॥ १ ॥ मधुकैटभ-विद्रावि विधातृवरदे नमः । रूपं देहि जयं देहि यशो देहि द्विषो जहि ॥ २ ॥ महिषासुरनिर्नाशविधात्रि वरदे नमः ।

हे ब्रह्मा को वर देनेवाली, तुमको नमस्कार है । रूप दो, जय दो, यश दो और शत्रुओं का नाश करो । २ । हे महिषासुरनाशिनि, हे वर देनेवाली, तुमको नमस्कार

है। रूप दो, जय दो, यश दो और शत्रुओं का नाश करो। ३। हे वन्दितचरणवाली, हे देवताओं का सौभाग्य देनेवाली, रूप दो, जय दो, यश दो और शत्रुओं का नाश करो। ४। हे रक्तबीजविनाशिनि, हे चण्डमुण्डविनाशिनि, हे देवि, रूप दो, जय दो,

रूपं देहि जयं देहि यशो देहि द्विषो जहि ॥ ३ ॥ वन्दितांघ्रि-युगे देवि देवसौभाग्यदायिनि। रूपं देहि जयं देहि यशो देहि द्विषो जहि। रक्तबीजवधे देवि चण्डमुण्डविनाशिनि। रूपं देहि जयं देहि यशो देहि द्विषो जहि ॥ ५ ॥ अचिन्त्य-रूपचरिते सर्वशत्रुविनाशिनि। रूपं देहि जयं देहि यशो देहि द्विषो जहि ॥ ६ ॥ न तेभ्यः सर्वदा भक्त्या चण्डिके

यश दो और शत्रुओं नाश करो। ५। हे अचिन्त्यरूप और चरितवाली, हे सर्वशत्रु-विनाशिनि, रूप दो, जय दो, यश दो और शत्रुओं का नाश करो। ६। हे चण्डिके,

सर्वदा भक्तिपूर्वक नम्र रहनेवाले मनुष्यों को और मुझ विनीत को रूप दो, जय दो, यश दो और शत्रुओं का नाश करो । ७ । हे चण्डिके, हे व्याधिनाशिनि, जो मनुष्य भक्ति-पूर्वक तुम्हारी स्तुति करते हैं उनको रूप दो, जय दो, यश दो और उनके शत्रुओं का

प्रणताय मे । रूपं देहि जयं देहि यशो देहि द्विषो जहि ॥७॥ स्तुवद्भ्यो भक्तिपूर्वं त्वां चण्डिके व्याधिनाशिनि । रूपं देहि जयं देहि यशो देहि द्विषो जहि ॥ ८ ॥ चण्डिके सततं ये त्वामर्चयन्तीह भक्तितः । रूपं देहि जयं देहि यशो देहि द्विषो जहि ॥ ९ ॥ देहि सौभाग्यमारोग्यं देहि देवि परं सुखम् । रूपं देहि जयं देहि यशो देहि द्विषो जहि ॥ १० ॥

नाश करो । ८ । हे चण्डिके, जो पुरुष हमेशा भक्ति से तुम्हारी पूजा करते हैं उनको रूप दो, जय दो, यश दो और उनके शत्रुओं का नाश करो । ९ । हे देवि, मुझे सौभाग्य, आरोग्य और परम सुख दो, रूप दो, जय दो, यश दो और शत्रुओं का नाश

करो। १० । हे देवि, शत्रुओं का नाश करो और अधिक बल बढ़ाओ, रूप दो, जय दो, यश दो और शत्रुओं का नाश करो। ११। हे देवि, कल्याण करो और विपुल संपत्ति दो, रूप दो, जय दो, यश दो और शत्रुओं का नाश करो। १२। अपने भक्त

विधेहि द्विषतां नाशं विधेहि बलमुच्चकैः। रूपं देहि जयं देहि यशो देहि द्विषो जहि ॥ ११ ॥ विधेहि देवि कल्याणं विधेहि विपुलां श्रियम्। रूपं देहि जयं देहि यशो देहि द्विषो जहि ॥ १२ ॥ विद्यावन्तं यशस्वन्तं लक्ष्मीवन्तं जनं कुरु। रूपं देहि जयं देहि यशो देहि द्विषो जहि ॥ १३ ॥ प्रचण्ड-दैत्यदर्पघ्ने चण्डिके प्रणताय मे। रूपं देहि जयं देहि यशो

(मुझ) को विद्यावान्, यशस्वी और लक्ष्मीवान् करो, रूप दो, जय दो, यश दो और शत्रुओं का नाश करो। १३। हे उग्र दैत्यों का गर्व नष्ट करनेवाली, हे चण्डिके, मुझ

विनीत को रूप दो, जय दो, यश दो और मेरे शत्रुओं का नाश करो । १४ । हे चार भुजावाली, हे ब्रह्मा से स्तुति की गई, हे परमेश्वरि, रूप दो, जय दो, यश दो और शत्रुओं का नाश करो । १५ । हे निरन्तर कृष्णजी से भक्तिपूर्वक स्तुति की गई, हे

देहि द्विषो जहि ॥ १४॥ चतुर्भुजे चतुर्वक्त्रसंस्तुते परमेश्वरि। रूपं देहि जयं देहि यशो देहि द्विषो जहि ॥ १५ ॥ कृष्णेन संस्तुते देवि शश्वद्भक्त्या तथाम्बिके। रूपं देहि जयं देहि यशो देहि द्विषो जहि ॥ १६ ॥ हिमाचलसुतानाथपूजिते परमेश्वरि। रूपं देहि जयं देहि यशो देहि द्विषो जहि॥१७॥ सुरासुरशिरोरत्ननिघृष्टचरणेऽम्बिके। रूपं देहि जयं देहि

अम्बिके, हे देवि, रूप दो, जय दो, यश दो और शत्रुओं का नाश करो । १६ । हे शिवजी से पूजित परमेश्वरि, रूप दो, जय दो, यश दो और शत्रुओं का नाश करो । १७ । हे देवताओं और दैत्यों के शिरोरत्नों से स्पर्शित चरणोंवाली, हे अम्बिके, रूप दो, जय

दो, यश दो और शत्रुओं का नाश करो। १८। हे इन्द्र द्वारा सद्भाव से पूजित, हे परमेश्वरि, रूप दो, जय दो, यश दो और शत्रुओं का नाश करो। १९। अपने प्रचण्ड भुजदण्डों से दैत्यों का अभिमान नष्ट करनेवाली हे देवि, रूप दो, जय दो, यश दो

यशो देहि द्विषो जहि ॥ १८ ॥ इन्द्राणीपतिसद्भावपूजिते परमेश्वरि। रूपं देहि जयं देहि यशो देहि द्विषो जहि ॥१९॥ देवि प्रचण्डदोर्दण्डदैत्यदर्पविनाशिनि। रूपं देहि जयं देहि यशो देहि द्विषो जहि ॥ २० ॥ देवि भक्तजनोद्दाम-दत्तानन्दोदयेऽम्बिके। रूपं देहि जयं देहि यशो देहि द्विषो जहि ॥ २१ ॥ पत्नीं मनोरमां देहि मनोवृत्तानुसा-

और शत्रुओं का नाश करो। २०। हे भक्तजनों को अत्यन्त आनन्द देनेवाली अम्बिके, रूप दो, जय दो, यश दो, और शत्रुओं का नाश करो। २१। मेरी इच्छा के

अनुसार चलनेवाली, कठिन संसार-सागर से पार करनेवाली और अच्छे कुल में उत्पन्न

रिणीम् । तारिणीं दुर्गसंसारसागरस्य कुलोद्भवाम् ॥२२॥
इदं स्तोत्रं पठित्वा तु महास्तोत्रं पठेन्नरः । स तुसप्तशती-
संख्यावरमाप्नोति सम्पदः ॥ २३ ॥

इति अर्गलास्तोत्रं समाप्तम् ।

सुन्दरी स्त्री मुझे दो । २२ । जो मनुष्य इस स्तोत्र को पढ़कर सप्तशती-स्तोत्र को पढ़ता है वही सप्तशती के पाठ का श्रेष्ठ फल और सम्पत्ति प्राप्त करता है । २३ ।

अथ कीलकस्तोत्रम्

——:o:——

मार्कण्डेयजी कहते हैं—निर्मल ज्ञानस्वरूप, वेदत्रयी रूप दिव्यचक्षु, कल्याण की प्राप्ति के कारणरूप, अर्धचन्द्र धारण करनेवाले महादेवजी को नमस्कार है ।१। सप्तशती-स्तोत्र का पाठ सब मन्त्रों का निष्कीलन है, यह जानकर इसका पाठ करना चाहिए।

ॐ नमश्चण्डिकायै । मार्कण्डेय उवाच । विशुद्धज्ञान-देहाय त्रिवेदीदिव्यचक्षुषे । श्रेयःप्राप्तिनिमित्ताय नमः सोमार्द्धधारिणे ॥ १ ॥ सर्वमेतद्विजानीयान्मन्त्राणामभि-कीलकम् । सोऽपि क्षेममवाप्नोति सततं जाप्यतत्परः ॥ २ ॥

यद्यपि दूसरे मन्त्रों का जप करने से भी मनुष्यों का कल्याण होता है और जप करने-वालों के उच्चाटन आदि सब काम तथा वस्तुएँ सिद्ध होती हैं, किन्तु सप्तशती स्तोत्र का

केवल पाठ करने से ही देवी प्रसन्न हो जाती है। इस स्तोत्र का पाठ करनेवाले को अन्य किसी मन्त्र अथवा औषध या साधन की आवश्यकता नहीं है, दूसरे मन्त्रों का जप किये विना ही, केवल इस स्तोत्र के पाठ से उच्चाटन आदि सब अभीष्ट काम सिद्ध

सिद्ध्यन्त्युच्चाटनादीनि वस्तूनि सकलान्यपि। एतेन स्तुवतां देवी स्तोत्रमात्रेण सिद्ध्यति ॥ ३ ॥ न मन्त्रो नौषधं तत्र न किञ्चिदपि विद्यते। विना जाप्येन सिद्ध्येत सर्वमुच्चाटनादिकम् ॥ ४ ॥ समग्राण्यपि सेत्स्यन्ति लोकशङ्कामिमां हरः। कृत्वा निमन्त्रया-

हो जाते हैं। २–४। शिवजी को सन्देह हुआ कि मन्त्रों के जप तथा सप्तशती-स्तोत्र के पाठ से मनुष्यों के सब काम सिद्ध हो जायँगे, इसलिए उन्होंने मन्त्रों को कील दिया और मनुष्यों से कहा कि हम इनकी निष्कीलन-विधि बताते हैं, उस विधि के अनुसार

पाठ करने से इस स्तोत्र का पाठ शुभप्रद होगा। ५। शिवजी ने चण्डिका-स्तोत्र को ही दूसरे मन्त्रों की अपेक्षा श्रेष्ठ अर्थात् सबका निचोड़ बताया है, क्योंकि इस स्तोत्र-पाठ के फल की कभी समाप्ति नहीं होती, किन्तु दूसरे मन्त्रों के जप के फल की

मास सर्वमेवमिदं शुभम् ॥ ५ ॥ स्तोत्रं वै चण्डिकायास्तु तच्च गुह्यं चकार सः। समाप्तिर्न च पुण्यस्य तां यथावन्नियन्त्रणाम् ॥ ६ ॥ सोऽपि क्षेममवाप्नोति सर्वमेव न संशयः। कृष्णायां वा चतुर्दश्यामष्टम्यां वा समाहितः ॥७॥ ददाति प्रतिगृह्णाति नान्यथैषा प्रसीदति। इत्थंरूपेण

समाप्ति हो जाती है, इसलिए उनकी न्यूनता यथार्थ है। ६। दूसरे मन्त्रों का जप करनेवाला मनुष्य भी यदि इस स्तोत्र का पाठ करे तो निस्सन्देह उसका कल्याण होता है, क्योंकि दूसरे मन्त्रों का निष्कीलन करनेवाला यही स्तोत्र है। अब निष्कीलन-विधि बताते हैं। जो मनुष्य कृष्णपक्ष की अष्टमी या चतुर्दशी को एकाग्रचित्त होकर न्याय से उपार्जित अपना सब धन देवी को समर्पण कर देता है

और देवी की आज्ञा लेकर उनका प्रसादरूप वह धन ग्रहण करता है। फिर उसे धर्म-शास्त्रोक्त मार्ग से व्यय करता हुआ देवी के अधीन रहता है, उसके ऊपर देवी प्रसन्न होती है। इसके सिवा और कोई उपाय नहीं है। इस प्रकार शिवजी ने सब मन्त्रों को

कीलेन महादेवेन कीलितम् ॥ यो निष्कीलां विधायैनां नित्यं जपति संस्फुटम्। स सिद्धः स गणः सोऽपि गन्धर्वो जायतेऽवने ॥ ९ ॥ न चैवाप्यटतस्तस्य भयं क्वापीह जायते। नाल्पमृत्युवशं याति मृतो मोक्षमवाप्नुयात् ॥ १० ॥ ज्ञात्वा

कील दिया है। ७-८। जो पुरुष निष्कीलन-विधि करके चण्डिका-स्तोत्र का स्पष्ट पाठ करता है वही सिद्ध होता है, वही देवी का गण होता है और वही संसार की रक्षा करने में समर्थ होता है। ९। वह संसार भर में चाहे जहाँ घूमे, उसे कहीं डर नहीं रहता। वह अल्पायु नहीं होता, बल्कि बहुत दिनों तक जीवित रहकर मरने पर मोक्ष

प्राप्त करता है। १०। इस कीलक का जानकर, उसका निष्कीलन करके पाठ करना चाहिए, क्योंकि निष्कीलन किये विना पाठ का फल नहीं मिलता। इसलिए पण्डितों को चाहिए कि कीलक को जानकर और उसका निष्कीलन करके पाठ करें। ११।

प्रारभ्य कुर्वीत ह्यकुर्वाणो विनश्यति। ततो ज्ञात्वैव सम्पन्न-मिदं प्रारभ्यते बुधैः ॥ ११ ॥ सौभाग्यादि च यत्किञ्चिद्-दृश्यते ललनाजने। तत्सर्वं तत्प्रसादेन तेन जाप्यमिदं शुभम् ॥ १२ ॥ शनैस्तु जाप्यमानेऽस्मिन्स्तोत्रे संपत्ति-रुच्चकैः। भवत्येव समग्रापि ततः प्रारभ्यमेव तत् ॥ १३ ॥

स्त्रियों में सौभाग्य आदि जो कुछ देख पड़ता है वह सब देवी का ही प्रसाद है। अत-एव कल्याण करनेवाले चण्डिका-स्तोत्र का पाठ करना सबका कर्तव्य है। १२। धीरे-धीरे पाठ करने से भी कुछ कल्याण होता है, किन्तु ऊँचे स्वर से पाठ करने पर पूर्णतया कल्याण होता है। इसलिए ऊँचे स्वर से ही पाठ करना चाहिए। १३। जिसकी कृपा

से ऐश्वर्य, सौभाग्य, आरोग्य, सम्पत्ति, शत्रुओं का विनाश और मोक्ष मिलता है, उस

ऐश्वर्यं यत्प्रसादेन सौभाग्यारोग्यसम्पदः। शत्रुहानिः परो मोक्षः स्तूयते सा न किं जनैः ॥ १४ ॥

इति भगवत्याः कीलकस्तोत्रं समाप्तम्।

देवी की स्तुति मनुष्य क्यों न करें, अर्थात् सबको करनी चाहिए। १४।

अथ नवार्णमन्त्रजपविधिः

ॐ अस्य श्रीनवार्णमन्त्रस्य ब्रह्मविष्णुमहेश्वरा ऋषयः गायत्र्युष्णिगनुष्टुप्छन्दांसि श्रीमहाकालीमहालक्ष्मीमहासरस्वत्यो देवताः नन्दाशाकम्भरीभीमाः शक्तयः रक्तदन्तिकादुर्गाभ्रामर्यो बीजानि अग्निर्वायुःसूर्यस्तत्त्वानि महाकालीमहालक्ष्मीमहासरस्वतीप्रीत्यर्थं जपे विनियोगः। अथ ऋष्यादिन्यासः। ॐ ब्रह्मविष्णुमहेश्वरऋषिभ्यो नमः शिरसि। ॐ गायत्र्युष्णिगनुष्टुप्छन्दोभ्यो नमः मुखे। महाकालीमहालक्ष्मीमहासरस्वतीदेवताभ्यो नमः

हृदि। ऐं बीजाय नमो गुह्ये। ह्रीं शक्तये नमः पादयोः। क्लीं कीलकाय नमः नाभौ। ततः ऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डायै विच्चे इति मूलेन करौ संशोध्य। ॐ ऐं अंगुष्ठाभ्यां नमः। ॐ ह्रीं तर्जनीभ्यां नमः। ॐ क्लीं मध्यमाभ्यां नमः। ॐ चामुण्डायै अनामिकाभ्यां नमः। ॐ विच्चे कनिष्ठिकाभ्यां नमः। ॐ ऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डायै विच्चे करतलकरपृष्ठाभ्यां नमः॥ अथ हृदयादिषडङ्गन्यासः। ॐ ऐं हृदयाय नमः। ॐ ह्रीं शिरसे स्वाहा। ॐ क्लीं शिखायै वषट्। ॐ चामुण्डायै कवचाय हुं। ॐ विच्चे नेत्रत्रयाय वौषट्। ॐ ऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डायै विच्चे अस्त्राय फट्॥

अथ बीजन्यासः। ॐ ऐं नमः शिखायाम्। ॐ ह्रीं नमः दक्षिणनेत्रे। ॐ क्लीं नमः वामनेत्रे। ॐ चां नमः दक्षिणकर्णे। ॐ मुं नमः वामकर्णे। ॐ डां नमः दक्षिणनासारन्ध्रे। ॐ यैं नमः वामनासारन्ध्रे। ॐ विं नमः मुखे। ॐ च्चें नमः गुह्ये॥ अथ व्यापकन्यासः। ॐ ऐं प्राच्यै नमः। ॐ ऐं आग्नेय्यै नमः। ॐ ह्रीं दक्षिणायै नमः। ॐ ह्रीं नैर्ऋत्यै नमः। ॐ क्लीं प्रतीच्यै नमः। ॐ क्लीं वायव्यै नमः। ॐ चामुण्डायै उदीच्यै नमः। ॐ विच्चे ईशान्यै नमः। ॐ ऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डायै विच्चे ऊर्ध्वायै नमः। ॐ ऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डायै विच्चे भूम्यै नमः॥ अथ ध्यानम्॥ ॐ शङ्खं चक्रं

गदां बाणान् चापं परिघशलके। भुशुण्डीं च शिरः खड्गं
दधतीं दशवक्त्रकाम् ॥ १ ॥ तामसीं श्यामलां नौमि महा-
कालीं दशांघ्रिकाम्। मालां च परशुं बाणान् गदां कुलिश-
मेव च ॥ २ ॥ पद्मं धनुः कुण्डिकां च दण्डं शक्तिमसिं
तथा॥ खेटकं जलजं घण्टां सुरापात्रं च शूलकम् ॥ ३ ॥
पाशं सुदर्शनं चैव दधतीं लोहितप्रभाम्। पद्मे स्थितां
महालक्ष्मीं भजे महिषमर्दिनीम् ॥ ४ ॥ घण्टां शूलं हलं
शंखं मुशलारिधनुःशरान्। दधतीमुज्ज्वलां नौमि देवीं
गौरीसमुद्भवाम् ॥ ५ ॥

अथ ऋग्वेदोक्तं रात्रिसूक्तम्

तत्रादौ ऋग्वेदोक्तं रात्रिसूक्तम्। ॐ रात्रीव्यख्यदायती
पुरुत्रा देव्यक्षभिः ॥ विश्वाअधिश्रियोधित ॥ १ ॥ ओर्वप्रा
अमर्त्या निवतो देव्युद्वतः। ज्योतिषाबाधते तमः ॥ २ ॥
निरुस्वसारमस्कृतोषसं देव्यायती। अपेदुहासते तमः ॥ ३ ॥
सा नो अद्य यस्यां वयं नि ते यामन्न विक्ष्महि ॥ वृक्षे न
वसतिं वयः ॥ ४ ॥ निग्रामासो अविक्षत निपद्वंतो निप-
क्षिणः ॥ निश्येनासश्चिदर्थिनः ॥ ५ ॥ यावया वृक्यं १ वृकं
यवयस्तेनमूर्म्ये ॥ अथानः सुतरा भव ॥ ६ ॥ उपमापेपि-
शत्तमकृष्णं व्यक्तमस्थित ॥ उपऋणेव यातय ॥ ७ ॥ उप

तेगा इवाकरं वृणीष्व दुहितर्दिवः रात्रिस्तोमं नु जिग्युषे ॥८॥
इति ऋग्वेदोक्तं रात्रिसूक्तम् ॥

तन्त्रोक्तं रात्रिसूक्तम्

विश्वेश्वरीं जगद्धात्रीं स्थितिसंहारकारिणीम् ॥ निद्रां भगवतीं विष्णोरतुलां तेजसः प्रभुः ॥ १ ॥ ब्रह्मोवाच ॥ त्वं स्वाहा त्वं स्वधा त्वं हि वषट्कारः स्वरात्मिका । सुधा त्वमक्षरे नित्ये त्रिधा मात्रात्मिका स्थिता ॥ २ ॥ अर्धमात्रा स्थिता नित्या याऽनुच्चार्या विशेषतः । त्वमेव सा त्वं सावित्री त्वं देवि जननी परा ॥ ३ ॥ त्वयैव धार्यते विश्वं

त्वयैतत्सृज्यते जगत् ॥ त्वयैतत्पाल्यते देवि त्वमत्स्यन्ते
च सर्वदा ॥ ४ ॥ विसृष्टौ सृष्टिरूपा त्वं स्थितिरूपा च
पालने । तथा संहृतिरूपान्ते जगतोऽस्य जगन्मये ॥ ५ ॥
महाविद्या महामाया महामेधा महास्मृतिः ॥ महामोहा
च भवती महादेवी महासुरी ॥ ६ ॥ प्रकृतिस्त्वं च
सर्वस्य गुणत्रयविभाविनी ॥ कालरात्रिर्महारात्रिर्मोह-
रात्रिश्च दारुणा ॥ त्वं श्रीस्त्वमीश्वरी त्वं ह्रीस्त्वं बुद्धिर्बोध-
लक्षणा । लज्जा पुष्टिस्तथा तुष्टिस्त्वं शान्तिः क्षान्तिरेव
च ॥ ८ ॥ खड्गिनी शूलिनी घोरा गदिनी चक्रिणी तथा ॥
शङ्खिनी चापिनी बाणभुशुण्डीपरिघायुधा ॥ ९ ॥ सौम्या-

सौम्यतराशेषसौम्येभ्यस्त्वतिसुन्दरी ॥ परापराणां परमा त्वमेव परमेश्वरी ॥ १० ॥ यच्च किञ्चित्क्वचिद्वस्तु सदसद्वाखिलात्मिके ॥ तस्य सर्वस्य या शक्तिः सा त्वं किं स्तूयसे तदा ॥ ११ ॥ यया त्वया जगत्स्रष्टा जगत्पात्यत्ति यो जगत् ॥ सोऽपि निद्रावशं नीतः कस्त्वां स्तोतुमिहेश्वरः १२ ॥ विष्णुः शरीरग्रहणमहमीशान एव च । कारितास्ते यतोऽतस्त्वां कः स्तोतुं शक्तिमान् भवेत् ॥ १३ ॥ सा त्वमित्थं प्रभावैः स्वैरुदारैर्देवि संस्तुता ॥ मोहयैतौ दुराधर्षावसुरौ मधुकैटभौ ॥ १४ ॥ प्रबोधं च जगत्स्वामी नीयतामच्युतो लघु ॥ बोधश्च क्रियतामस्य हन्तुमेतौ महासुरौ ॥ १५ ॥

इति तन्त्रोक्तं रात्रिसूक्तम् ॥

सप्तशतीन्यासः

अथ प्रथममध्यमोत्तमचरित्राणां ब्रह्मविष्णुरुद्रा ऋषयः श्रीमहाकालीमहालक्ष्मीमहासरस्वत्यो देवताः गायत्र्युष्णिगनुष्टुप्छन्दांसि नन्दाशाकम्भरीभीमाः शक्तयः रक्तदन्तिकादुर्गाभ्रामर्यो बीजानि अग्निर्वायुस्सूर्यस्तत्त्वानि ऋग्यजुस्सामवेदा ध्यानानि सकलकामनासिद्धये श्री महाकाली-महालक्ष्मी-महासरस्वती-देवीनाम्प्रीत्यर्थे जपे विनियोगः ॥ तत्रादौ न्यासः ॥ खड्गिनी शूलिनी घोरा अङ्गुष्ठाभ्यां नमः ॥ शूलेन पाहि नो देवि तर्जनीभ्यां नमः ॥ प्राच्यां रक्ष प्रतीच्यां च मध्यमाभ्यां नमः ॥

सौम्यानि यानि रूपाणि अनामिकाभ्यां नमः ॥ खड्गशूल-
गदादीनि कनिष्ठिकाभ्यां नमः ॥ सर्वस्वरूपे सर्वेशे करतल-
करपृष्ठाभ्यां नमः । एवं हृदयादिन्यासः । खड्गिनी
शूलिनी घोरा हृदयाय नमः ॥ शूलेन पाहि नो
देवि शिरसे स्वाहा ॥ प्राच्यां रक्ष प्रतीच्यां च शिखायै
वषट् ॥ सौम्यानि यानि रूपाणि कवचाय हुं ॥ खड्गशूल-
गदादीनि नेत्रत्रयाय वौषट् ॥ सर्वस्वरूपे सर्वेशे अस्त्राय
फट् ॥ अथ ध्यानम् ॥ खड्गं चक्रगदेषुचापपरिघाञ्छूलं
भुशुण्डीं शिरः शङ्खं संदधतीं करैस्त्रिनयनां सर्वाङ्गभूषा-
वृताम् । यां हन्तुं मधुकैटभौ जलजभूस्तुष्टाव सुप्ते हरौ

नीलाश्मद्युतिमास्यपादयुगलां सेवे महाकालिकाम् ॥ १ ॥
इति ध्यानम् ॥ प्रथमचरित्रस्य ब्रह्मा ऋषिः महाकाली देवता गायत्री छन्दः नन्दा शक्तिः रक्तदन्तिका बीजं अग्निस्तत्त्वं ऋग्वेदस्वरूपं श्रीमहाकालीप्रीत्यर्थे प्रथमचरित्रजपे विनियोगः ।

ॐ मार्कण्डेय उवाच ॥ १ ॥ सावर्णिः सूर्यतनयो यो मनुः कथ्यतेऽष्टमः । निशामय तदुत्पत्तिं विस्तराद्गदतो मम ॥ २ ॥ महामायानुभावेन यथा मन्वन्तराधिपः । स

मार्कण्डेय कहते हैं—सूर्य के पुत्र सावर्णि (सूर्य की छाया से उत्पन्न), जिनको आठवाँ मनु कहते हैं, उनकी उत्पत्ति सुनो, मैं विस्तार के साथ कहता हूँ । १-२ । महामाया भगवती की कृपा से सूर्य के पुत्र महाभाग सावर्णि जिस प्रकार मन्वन्तर के

स्वामी हुए सो सुनो । ३ । स्वारोचिष मन्वन्तर में, चैत्र के वंश में उत्पन्न सुरथ सम्पूर्ण पृथ्वीमंडल के राजा हुए । ४ । राजा सुरथ पुत्रों के समान अपनी प्रजा का पालन करते थे । उसी समय कोलाविध्वंसी राजा (जिन्होंने कोलापुर का विध्वंस किया था)

बभूव महाभागः सावर्णिस्तनयो रवेः ॥ ३ ॥ स्वारोचिषेऽन्तरे पूर्वं चैत्रवंशसमुद्भवः । सुरथो नाम राजाभूत्समस्ते क्षितिमण्डले ॥ ४ ॥ तस्य पालयतः सम्यक् प्रजाः पुत्रानिवौरसान् । बभूवुः शत्रवो भूपाः कोलाविध्वंसिनस्तदा ॥ ५ ॥ तस्य तैरभवद्युद्धमतिप्रबलदण्डिनः । न्यूनैरपि स तैर्युद्धे कोलाविध्वंसिभिर्जितः ॥ ६ ॥ ततः स्वपुर-

उनके शत्रु हो गये । ५ । महाराज सुरथ के साथ उनका युद्ध हुआ । यद्यपि कोलाविध्वंसी राजाओं के साथ सेना कम थी और सुरथ के साथ बहुत बड़ी सेना थी, तो भी

राजा सुरथ युद्ध में हार गये । ६ । प्रबल शत्रुओं से हारकर, महाराज सुरथ अपने नगर में आकर अपने देश का राज्य करने लगे । ७ । किन्तु वहाँ भी बलवान् दुष्ट मन्त्रियों ने उनको दुर्बल जानकर ख़ज़ाना और सेना सब अपने अधीन कर लिया । ८ । तब राजा सुरथ

मायातो निजदेशाधिपोऽभवत् । आक्रान्तः स महाभाग-
स्तैस्तदा प्रबलारिभिः ॥ ७ ॥ अमात्यैर्बलिभिर्दुष्टैर्दुर्बलस्य
दुरात्मभिः । कोशो बलं चापहृतं तत्रापि स्वपुरे ततः ॥ ८ ॥
ततो मृगयाव्याजेन हृतस्वाम्यः स भूपतिः । एकाकी हय-
मारुह्य जगाम गहनं वनम् ॥ ९ ॥ स तत्राश्रममद्राक्षीद्-
द्विजवर्यस्य मेधसः । प्रशान्तश्वापदाकीर्णं मुनिशिष्योप-

राज्यच्युत होकर, शिकार के बहाने, घोड़े पर चढ़कर, अकेले घने वन को चले गये । ९ । वहाँ उन्होंने मेधा ऋषि का आश्रम देखा । वह आश्रम मुनि तथा उनके शिष्यों से शोभित

था। वहाँ रहनेवाले हिंसक जीव किसी की हिंसा नहीं करते थे। १०। मुनि ने राजा का बड़ा सत्कार किया और राजा इधर-उधर विचरते हुए कुछ दिनों तक उस आश्रम में रहे। ११। किन्तु वहाँ राजा को अपने नगर और प्रजा की ममता होने लगी। वे

शोभितम् ॥ १० ॥ तस्थौ कञ्चित्स कालं च मुनिना तेन सत्कृतः। इतश्चेतश्च विचरँस्तस्मिन्मुनिवराश्रमे ॥ ११ ॥ सोऽचिन्तयत्तदा तत्र ममत्वाकृष्टचेतनः। मत्पूर्वैः पालितं पूर्वं मया हीनं पुरं हि तत् ॥ १२ ॥ मद्भृत्यैस्तैरसद्वृत्तैर्धर्मतः पाल्यते न वा। न जाने स प्रधानो मे शूरहस्ती सदा-मदः ॥ १३ ॥ मम वैरिवशं यातः कान् भोगानुपलप्स्यते।

सोचने लगे कि जिस नगर का मेरे पूर्वजों ने पालन किया था, वह अब मुझसे छूट गया। १२। नहीं मालूम, मेरे दुराचारी नौकर-चाकर धर्म से उसकी रक्षा करते हैं या नहीं। मेरा मतवाला शूर हाथी शत्रुओं के वश में पड़कर न जाने किन भोगों को भोगता

होगा। जो मेरे नौकर मेरी प्रसन्नता से धन और भोजन पाते थे, वे अब दूसरे राजाओं की सेवा करते होंगे। जो धन बड़े कष्ट से संचित किया गया था उसे अब फ़ज़ूल ख़र्च करनेवाले मेरे नौकर-चाकर ख़र्च करके नष्ट कर देंगे। इसी प्रकार राजा सुरथ और भी

ये ममानुगता नित्यं प्रसादधनभोजनैः ॥ १४ ॥ अनुवृत्तिं ध्रुवं तेऽद्य कुर्वन्त्यन्यमहीभृताम् । असम्यग्व्ययशीलैस्तैः कुर्वद्भिः सततं व्ययम् ॥ १५ ॥ सञ्चितः सोऽतिदुःखेन क्षयं कोशो गमिष्यति। एतच्चान्यच्च सततं चिन्तयामास पार्थिवः ॥ १६ ॥ तत्र विप्राश्रमाभ्याशे वैश्यमेकं ददर्श सः। स पृष्टस्तेन कस्त्वं भो हेतुश्चागमनेऽत्र कः ॥ १७ ॥ सशोक

बहुत-सी चिन्ताएँ करने लगे। १३-१६। एक दिन राजा को उस आश्रम के पास एक वैश्य देख पड़ा। राजा ने उससे पूछा—तुम कौन हो, और यहाँ आने का क्या कारण

है ? । १७ । तुम चिन्तित और उदास देख पड़ते हो, इसका क्या कारण है ? राजा का यह विनम्र वचन सुनकर वैश्य ने नम्रता से उत्तर दिया । १८–१९ । वैश्य बोला– मैं वैश्य हूँ, धनिकों के कुल में उत्पन्न हुआ हूँ, मेरा नाम समाधि है । २०–२१ । मेरे

इव कस्मात्त्वं दुर्म्मना इव लक्ष्यसे । इत्याकर्ण्य वचस्तस्य भूपतेः प्रणयोदितम् ॥ १८ ॥ प्रत्युवाच स तं वैश्यः प्रश्रयावनतो नृपम् ॥ १९ ॥ वैश्य उवाच ॥ २० ॥ समाधिर्नाम वैश्योऽहमुत्पन्नो धनिनां कुले ॥ २१ ॥ पुत्रदारैर्निरस्तश्च धनलोभादसाधुभिः । विहीनश्च धनैर्दारैः पुत्रैरादाय मे धनम् ॥ २२ ॥ वनमभ्यागतो दुःखी निरस्तश्चा-

दुष्ट स्त्री-पुत्रों ने धन के लोभ से मेरा सर्वस्व छीनकर मुझे घर से निकाल दिया है, और मुझ निर्धन को मेरे मित्र और भाई-बन्धुओं ने भी त्याग दिया है, इसलिए मैं दुखित होकर वन को चला आया हूँ । अब यहाँ मुझे स्त्री, पुत्रों और बन्धुओं का कुशल

के हाल नहीं मिलते। नहीं मालूम, उनके घरों में कुशल है या नहीं, और मेरे पुत्रों के आचरण अब अच्छे हैं या नहीं। २२-२५। राजा ने कहा-जिन लोभी स्त्री-पुत्रादिकों

सबन्धुभिः। सोऽहं न वेद्मि पुत्राणां कुशलाकुशलात्मिकाम्॥ २३॥ प्रवृत्तिं स्वजनानाञ्च दाराणाञ्चात्र संस्थितः। किं नु तेषां गृहे क्षेममक्षेमं किं नु साम्प्रतम्॥ २४॥ कथं ते किं नु सद्वृत्ता दुर्वृत्ताः किं नु मे सुताः॥ २५॥ राजोवाच॥ २६॥ यैर्निरस्तो भवाँल्लुब्धैः पुत्रदारादिभिर्धनैः॥२७॥ तेषु किं भवतः स्नेहमनुबध्नाति मानसम्॥२८॥ वैश्य उवाच॥ २९॥ एवमेतद्यथा प्राह भवानस्मद्गतं

ने धन के लोभ से तुमको घर से निकाल दिया, उनका स्नेह अब तुम्हारे चित्त में क्यों बना है। २६-२८। वैश्य ने उत्तर दिया-जो बात आप कहते हैं वही मैं भी सोचता

हूँ, किन्तु क्या करूँ, मेरे चित्त में निठुरता नहीं आती। जिन लोगों ने धन के लोभ से पिता, पति और मित्र के स्नेह को त्यागकर मुझे घर से निकाल दिया, उन्हीं के स्नेह में मेरा मन फँसा है। हे महामते, यह जानकर भी मेरा चित्त उन्हीं अवगुणी बन्धुओं

वचः ॥ ३० ॥ किं करोमि न बध्नाति मम निष्ठुरतां मनः। यैः सन्त्यज्य पितृस्नेहं धनलुब्धैर्निराकृतः ॥ ३१ ॥ पति-स्वजनहार्दं च हार्दितेष्वेव मे मनः। किमेतन्नाभिजानामि जानन्नपि महामते ॥ ३२ ॥ यत्प्रेमप्रवणं चित्तं विगुणेष्वपि बन्धुषु। तेषां कृते मे निःश्वासो दौर्मनस्यं च जायते ॥ ३३ ॥ करोमि किं यन्न मनस्तेष्वप्रीतिषु निष्ठुरम् ॥ ३४ ॥ मार्क-

में क्यों प्रेम करता है, यह बात मेरी समझ में नहीं आती। उनके लिए मुझे शोक और चिन्ता होती है; पर क्या करूँ, उन निर्मोहियों के प्रति मेरा मन कठोर नहीं

होता । २६–३४ । मार्कण्डेय कहते हैं—हे विप्र, उसके बाद दोनों मिलकर मुनि के पास गये । ३५–३६ । समाधि वैश्य और महाराज सुरथ मुनि से न्यायपर्वक यथोचित संभाषण करके बैठ गये । राजा और वैश्य अपने विषय में कुछ बातें करने लगे । ३७–३८ ।

ण्डेय उवाच ॥ ३५ ॥ ततस्तौ सहितौ विप्र तं मुनिं समुपस्थितौ ॥ ३६ ॥ समाधिर्नाम वैश्योऽसौ स च पार्थिवसत्तमः । कृत्वा तु तौ यथान्यायं यथार्हं तेन संविदम् ॥ ३७ ॥ उपविष्टौ कथाः काश्चिच्चक्रतुर्वैश्यपार्थिवौ ॥ ३८ ॥ राजोवाच ॥ ३९ ॥ भगवंस्त्वामहं प्रष्टुमिच्छाम्येकं वदस्व तत् ॥ ४० ॥ दुःखाय यन्मे मनसः स्वचित्तायत्ततां विना ।

उसके बाद राजा ने मुनि से कहा—भगवन्, मैं आपसे कुछ पूछना चाहता हूँ, सो आप बताइए । ३९–४० । मेरा मन मेरे वश में नहीं है, इसलिए मुझे बड़ा दुःख मिल रहा है ।

बात यह है कि मुझे अपने राज्य, नौकर-चाकर, हाथी-घोड़ा और ख़ज़ाना आदि में बड़ी ममता रहती है। यद्यपि मैं जानता हूँ कि अब उन सबसे अलग हो गया हूँ, उनमें प्रीति रखने से दुःख होगा, तो भी अज्ञानी की तरह मेरा चित्त उन्हीं में फँसा रहता है।

ममत्वं गतराज्यस्य राज्याङ्गेष्वखिलेष्वपि ॥ ४१ ॥ जानतोऽपि यथाज्ञस्य किमेतन्मुनिसत्तम। अयंच निकृतः पुत्रैर्दारैर्भृत्यैस्तथोज्झितः ॥ ४२ ॥ स्वजनेन च सन्त्यक्तस्तेषु हार्दी तथाप्यति। एवमेष तथाहं च द्वावप्यत्यन्तदुःखितौ ॥ ४३ ॥ दृष्टदोषेऽपि विषये ममत्वाकृष्टमानसौ। तत्केनैतन्महाभाग

इसका क्या कारण है? यह जो मेरे साथ वैश्य है, इसे भी इसके बेटे, स्त्री-कुटुम्बियों और भाई-बन्धुओं ने घर से निकाल दिया है, परन्तु इतने पर भी चित्त में उनका स्नेह बना है। हम दोनों इसी विषय में बहुत दुखित हैं। ४१–४३। यद्यपि उन लोगों की दुष्टता जानते हैं तो भी उनकी ममता हम लोगों के चित्त से नहीं जाती। हे महाभाग,

इसका क्या कारण है कि हम लोग इन बातों को समझते हुए भी मूर्खों की तरह मोह में फँसे हैं। मोह तो अज्ञानी मनुष्यों को होना चाहिए, हम लोग ज्ञानवान् होकर क्यों

यन्मोहो ज्ञानिनोरपि ॥ ४४ ॥ ममास्य च भवत्येषा विवेकान्धस्य मूढता ॥ ४५ ॥ ऋषिरुवाच ॥ ४६ ॥ ज्ञानमस्ति समस्तस्य जन्तोर्विषयगोचरे ॥ ४७ ॥ विषयश्च महाभाग याति चैवं पृथक् पृथक्। दिवान्धाः प्राणिनः केचिद्रात्रावन्धास्तथा परे ॥ ४८ ॥ केचिद्दिवा तथा रात्रौ प्राणिनस्तुल्य-

मूर्खता करते हैं ?। ४४–४५। महाराज सुरथ का यह प्रश्न सुनकर मेधा ऋषि बोले—महाराज, विषयों (रूप-रस आदि) के समझने का ज्ञान तो सभी प्राणियों को है और विषय भी सबके अलग-अलग हैं। बहुत-से प्राणी दिन में अन्धे रहते हैं, कोई रात में नहीं देखते, बहुतों को दिन-रात में बराबर सूझता है और बहुत-से प्राणियों को दिन-

रात में कभी नहीं सूझता। मनुष्य ज्ञानवान् होते हैं सही, किन्तु केवल मनुष्य ही ज्ञानी नहीं हैं, पशु-पक्षी और मृग आदिकों को भी ज्ञान होता है। विषयों का ज्ञान जैसा

दृष्टयः। ज्ञानिनो मनुजाः सत्यं किन्तु ते नहि केवलम् ॥४९॥
यतो हि ज्ञानिनः सर्वे पशुपक्षिमृगादयः। ज्ञानं च तन्मनुष्याणां यत्तेषां मृगपक्षिणाम् ॥५०॥ मनुष्याणां च यत्तेषां तुल्यमन्यत्तथोभयोः। ज्ञानेऽपि सति पश्यैतान्पतगाञ्छावचञ्चुषु ॥५१॥ कणमोक्षादृतान्मोहात्पीड्यमानानपि क्षुधा। मानुषा मनुजव्याघ्र साभिलाषाः सुतान्प्रति ॥५२॥

मनुष्यों को है वैसा ही पशु-पक्षियों को भी है। इसलिए साधारण ज्ञान में पशु-पक्षी भी मनुष्यों के समान ही हैं। देखो, पक्षी भूख से पीड़ित रहने पर भी और बच्चों के खाने से हमारी भूख न जायगी, यह जानते हुए भी, ममता के वश होकर अपना आहार बच्चों

की चोंच में दे देते हैं और आप भूखे रह जाते हैं। महाराज, मनुष्य भी उपकार की आशा से पुत्रों का मोह करते हैं। क्या यह बातें तुम नहीं देखते हो ? संसार का पालन करनेवाले विष्णु की महामाया के प्रभाव से मनुष्य ज्ञानवान् होने पर भी मोह में फँसे

लोभात्प्रत्युपकाराय नन्वेते किं न पश्यसि। तथापि ममतावर्त्तें मोहगर्तें निपातिताः ॥ ५३ ॥ महामायाप्रभावेण संसारस्थितिकारिणः। तन्नात्र विस्मयः कार्यो योगनिद्रा जगत्पतेः ॥ ५४ ॥ महामाया हरेश्चैतत्तया संमोह्यते जगत्। ज्ञानिनामपि चेतांसि देवी भगवती हि सा ॥ ५५ ॥ बलादाकृष्य मोहाय महामाया प्रयच्छति। तया विसृज्यते

रहते हैं। इसमें कुछ आश्चर्य न करना चाहिए; क्योंकि जगत्पति भगवान् विष्णु की योगनिद्रा महामाया में सम्पूर्ण जगत् मोहित है। वह महामाया देवी भगवती ज्ञानियों के भी चित्त खींचकर मोह में फँसा देती है। वह भगवती इस चराचर जगत् को

उत्पन्न करती है, और वही प्रसन्न होकर, वरदान देकर, मनुष्यों को मुक्ति देती है। वह भगवती उत्कृष्ट ज्ञानस्वरूप, मुक्ति का कारण और सनातनी है। वही भगवती संसार के बन्धन का कारण और सब ईश्वरों की ईश्वरी है। ४६–५८। यह

विश्वं जगदेतच्चराचरम् ॥ ५६ ॥ सैषा प्रसन्ना वरदा नृणां भवति मुक्तये । सा विद्या परमा मुक्तेर्हेतुभूता सनातनी ॥ ५७ ॥ संसारबन्धहेतुश्च सैव सर्वेश्वरेश्वरी ॥ ५८ ॥ राजोवाच ॥ ५९ ॥ भगवन् का हि सा देवी महामायेति यां भवान् ॥ ६० ॥ ब्रवीति कथमुत्पन्ना सा कर्मास्याश्च किं द्विज। यत्स्वभावा च सा देवी यत्स्वरूपा यदुद्भवा ॥६१॥

सुनकर राजा सुरथ ने पूछा—भगवन्, जिसे आप महामाया कहते हैं, वह भगवती कौन है ? वह कैसे उत्पन्न हुई और उसके कर्म क्या हैं ? हे ब्रह्मन्, मैं उसका स्वरूप,

उत्पत्ति और स्वभाव आपसे सुना चाहता हूँ। ऋषि ने कहा—वह भगवती जगन्मूर्ति और नित्या है, यह सम्पूर्ण जगत् उसी का बनाया हुआ है, तो भी भक्तों के हित के लिए अनेक प्रकार से उसकी उत्पत्ति हुई है, सो मैं कहता हूँ, सुनो—जब देवताओं का

तत्सर्वं श्रोतुमिच्छामि त्वत्तो ब्रह्मविदांवर ॥ ६२ ॥ ऋषिरुवाच ॥ ६३ ॥ नित्यैव सा जगन्मूर्तिस्तया सर्वमिदं ततम् ॥ ६४ ॥ तथापि तत्समुत्पत्तिर्बहुधा श्रूयतां मम। देवानां कार्यसिद्ध्यर्थमाविर्भवति सा यदा ॥ ६५ ॥ उत्पन्नेति तदा लोके सा नित्याप्यभिधीयते। योगनिद्रां यदा विष्णुर्जगत्येकार्णवीकृते ॥ ६६ ॥ आस्तीर्य शेषमभजत्

कार्य सिद्ध करने के लिए वह उत्पन्न होती है तब नित्या होने पर भी वह उत्पन्ना कहलाती है। कल्प के अन्त में जब जगत् जलमय हो गया और विष्णु भगवान् शेषशय्या पर

सो गये तब उनके कान के मैल से मधु और कैटभ नाम के दो भयानक असुर उत्पन्न होकर ब्रह्मा को मारने दौड़े। विष्णु भगवान् की नाभि में फूले हुए कमल पर बैठे हुए ब्रह्मा ने उन दोनों उग्र असुरों को देखकर, और जनार्दन विष्णु को सोया हुआ जान-

कल्पान्ते भगवान् प्रभुः । तदा द्वावसुरौ घोरौ विख्यातौ
मधुकैटभौ ॥ ६७ ॥ विष्णुकर्णमलोद्भूतौ हन्तुं ब्रह्माण-
मुद्यतौ। स नाभिकमले विष्णोः स्थितो ब्रह्मा प्रजापतिः॥ ६८॥
दृष्ट्वा तावसुरौ चोग्रौ प्रसुप्तं च जनार्दनम्। तुष्टाव योगनिद्रां
तामेकाग्रहृदयस्थितः ॥ ६९ ॥ विबोधनार्थाय हरेर्हरिनेत्र-
कृतालयाम् । विश्वेश्वरीं जगद्धात्रीं स्थितिसंहारकारि-

कर, उनको जगाने के लिए, उनके नेत्रों में जो योगनिद्रा प्राप्त थीं, एकाग्र चित्त से उनकी स्तुति करने लगे । ब्रह्मा ने योगनिद्रा, विश्वेश्वरी, जगद्धात्री, स्थितिसंहारकारिणी,

विष्णु के तेज की अनुपम मूर्ति भगवती की इस प्रकार स्तुति की। ५९-७१। ब्रह्मा ने कहा—हे भगवती, स्वाहा, स्वधा और वषट्काररूपिणी आप ही हैं। स्वररूपिणी और सुधा आप ही हैं। हे अविनाशिनि, हे नित्ये, तीन प्रकार की मात्रा (ह्रस्व, दीर्घ, प्लुत

णीम्॥७०॥निद्रां भगवतीं विष्णोरतुलां तेजसः प्रभुः॥७१॥ ब्रह्मोवाच॥ ७२॥ त्वं स्वाहा त्वं स्वधा त्वं हि वषट्कारः स्वरात्मिका ॥ ७३ ॥ सुधा त्वमक्षरे नित्ये त्रिधामात्रात्मिका स्थिता। अर्धमात्रा स्थिता नित्या यानुच्चार्या विशेषतः ॥ ७४ ॥ त्वमेव सा त्वं सावित्री त्वं देवि जननी

अथवा अकार, उकार, मकार-प्रणवरूप) आप ही हैं। अर्धमात्रारूपिणी होकर आप स्थित हैं। आप नित्या हैं। स्वर की सहायता विना जिनका विशेषरूप से उच्चारण नहीं हो सकता, वह व्यंजनरूपिणी आप ही हैं। ७२-७४। आप ही सावित्री हैं। हे देवि,

आपही सबकी माता हैं, आप ही इस विश्व को उत्पन्न करती हैं और आप ही धारण करती हैं। ७५। आप ही पालन करती हैं और हे देवि, आपही भक्षण कर लेती हैं। हे जगन्मये, संसार की सृष्टि करते समय आप सृष्टिरूप, पालन करने के समय स्थिति-

परा। त्वयैतद्धार्यते विश्वं त्वयैतत्सृज्यते जगत् ॥ ७५ ॥ त्वयैतत्पाल्यते देवि त्वमत्स्यन्ते च सर्वदा ॥ विसृष्टौ सृष्टि-रूपा त्वं स्थितिरूपा च पालने ॥ ७६ ॥ तथा संहृतिरूपा-न्ते जगतोऽस्य जगन्मये। महाविद्या महामाया महामेधा महास्मृतिः ॥ ७७ ॥ महामोहा च भवती महादेवी महा-सुरी। प्रकृतिस्त्वं च सर्वस्य गुणत्रयविभाविनी ॥ ७८ ॥

रूप और विनाश करने के समय संहार-रूप धारण करती हैं। हे देवि, महाविद्या, महा-माया, महामेधा, महास्मृति, महामोहा, महादेवी और महासुरी आप ही हैं। सम्पूर्ण जगत् की त्रिगुणमयी (सतोगुणी, तमोगुणी और रजोगुणी) प्रकृति आप ही हैं। ७६-७८।

भयावनी कालरात्रि, महारात्रि और मोहरात्रि आप ही हैं। श्री (लक्ष्मीरूप), ईश्वरी (ऐश्वर्ययुक्त), और ह्री (लज्जाबीज) बोधलक्षणा-बुद्धि, लज्जा, तुष्टि, पुष्टि, शान्ति और क्षान्ति भी आप ही हैं। खड्ग, शूल, गदा, चक्र, शङ्ख, धनुष, बाण, भुशुण्डी, परिघ और

कालरात्रिर्महारात्रिर्मोहरात्रिश्च दारुणा। त्वं श्रीस्त्वमीश्वरी त्वं ह्रीस्त्वं बुद्धिर्बोधलक्षणा ॥ ७९ ॥ लज्जा पुष्टिस्तथा तुष्टिस्त्वं शान्तिः क्षान्तिरेव च ॥ खड्गिनी शूलिनी घोरा गदिनी चक्रिणी तथा ॥ ८० ॥ शङ्खिनी चापिनी बाण-भुशुण्डीपरिघायुधा। सौम्यासौम्यतराशेषसौम्येभ्यस्त्व-तिसुन्दरी ॥ ८१ ॥ परापराणां परमा त्वमेव परमेश्वरी।

एक हाथ में मुण्ड आप धारण करती हैं। आप सौम्या और सौम्यतरा हैं तथा सब सुन्दर वस्तुओं से बढ़कर सुन्दरी हैं। ७९-८१। आप ब्रह्मा आदि सब देवताओं से

श्रेष्ठ और परमेश्वरी हैं। हे अखिलात्मिके, जगत् में सत् और असत् जितनी वस्तुएँ हैं, उनमें जो शक्ति है, वह आप ही हैं। फिर आपकी स्तुति कैसे की जा सकती है। आपने जगत् की उत्पत्ति, पालन और विनाश करनेवाले भगवान् विष्णु को भी

यच्च किञ्चित्क्वचिद्वस्तु सदसद्वाखिलात्मिके ॥ ८२ ॥ तस्य सर्वस्य या शक्तिः सा त्वं किं स्तूयसे तदा। यया त्वया जगत्स्रष्टा जगत्पातात्ति यो जगत् ॥ ८३ ॥ सोपि निद्रा-वशं नीतः कस्त्वां स्तोतुमिहेश्वरः। विष्णुः शरीरग्रहण-महमीशान एव च ॥ ८४ ॥ कारितास्ते यतोऽतस्त्वां कः

निद्रा के वश कर दिया। अब आपकी स्तुति कौन कर सकता है। मुझको और विष्णु तथा महादेव को आपने शरीर धारण करा दिया (अर्थात् शरीरधारी ममता में फँस जाते हैं, इसलिए उनमें आपकी स्तुति करने की सामर्थ्य नहीं रह जाती और जो शरीरधारी नहीं हैं, वे मुक्त हो गये; वे आपकी स्तुति कैसे करेंगे) तो आपकी स्तुति करने में सामर्थ्य

किसकी है । हे देवि, आपके उदार-प्रभाव (माहात्म्य) से ही आपकी स्तुति होती है । ८२-८५ । आप इन दोनों दुर्धर्ष मधु-कैटभ असुरों को मोह उत्पन्न कीजिए और जगत् के स्वामी अच्युत भगवान् विष्णु को शीघ्र जगाकर इन महाअसुरों को मारने के

स्तोतुं शक्तिमान्भवेत् । सा त्वामित्थं प्रभावैः स्वैरुदारैर्देवि संस्तुता ॥ ८५ ॥ मोहयैतौ दुराधर्षावसुरौ मधुकैटभौ । प्रबोधं च जगत्स्वामी नीयतामच्युतो लघु ॥ ८६ ॥ बोधश्च क्रियतामस्य हन्तुमेतौ महासुरौ ॥ ८७ ॥ ऋषिरुवाच ॥ ८८ ॥ एवं स्तुता तदा देवी तामसी तत्र वेधसा ॥ ८९ ॥ विष्णोः प्रबोधनार्थाय निहन्तुं मधुकैटभौ । नेत्रास्यनासिकाबाहु-

लिए प्रेरित कीजिए । ८६-८७ । मेधा ऋषि कहते हैं—महाराज, ब्रह्मा ने जब इस प्रकार तामसी देवी की स्तुति की, तब वह महामाया विष्णु भगवान् को जगाने के लिए और मधु-कैटभ का विनाश करने के लिए भगवान् के नेत्र, मुख, नासिका, बाहु, हृदय और

छाती से निकलकर ब्रह्मा को दर्शन देने के लिए खड़ी हो गईं। योगनिद्रा महामाया के निकलने से भगवान् विष्णु शेषशय्या पर उठ बैठे और उस एकार्णव में उन दोनों असुरों

हृदयेभ्यस्तथोरसः ॥ ६० ॥ निर्गम्य दर्शने तस्थौ ब्रह्मणोऽव्यक्तजन्मनः । उत्तस्थौ च जगन्नाथस्तया मुक्तो जनार्दनः ॥ ६१ ॥ एकार्णवेऽहिशयनात्ततः स ददृशे च तौ । मधुकैटभौ दुरात्मानावतिवीर्यपराक्रमौ ॥ ६२ ॥ क्रोधरक्तेक्षणावत्तुं ब्रह्माणं जनितोद्यमौ । समुत्थाय ततस्ताभ्यां युयुधे भगवान् हरिः ॥ ६३ ॥ पञ्चवर्षसहस्राणि बाहुप्रहरणो

को देखने लगे। महापराक्रमी असुरों ने भी उनको देखा। ८८-६२। क्रोध से लाल-लाल आँखें किये, ब्रह्मा को खा जाने के लिए उद्यत, उन दुष्टों को देखकर, विष्णु भगवान् उठकर उनसे युद्ध करने लगे। ६३। पाँच हजार वर्ष उनसे बाहु-युद्ध हुआ। उसके

बाद बल से उन्मत्त मधु-कैटभ महामाया से मोहित होकर विष्णु से बोले—हम तुम्हारे युद्ध से बहुत प्रसन्न हुए, तुम हमसे वर माँगो । ६४-६५ । भगवान् विष्णु ने कहा—जो तुम दोनों मुझ पर प्रसन्न हो, तो मैं यह वर माँगता हूँ कि मेरे हाथ से तुम्हारी मृत्यु

विभुः । तावप्यतिबलोन्मत्तौ महामायाविमोहितौ ॥६४॥ उक्तवन्तौ वरोऽस्मत्तो व्रियतामिति केशवम् ॥ ६५ ॥ भगवानुवाच ॥ ६६ ॥ भवेतामद्य मे तुष्टौ मम वध्यावुभावपि ॥ ६७ ॥ किमन्येन वरेणात्र एतावद्धि वृतं मम ॥६८॥ ऋषिरुवाच ॥ ६९ ॥ वञ्चिताभ्यामिति तदा सर्वमापोमयं जगत् ॥ १०० ॥ विलोक्य ताभ्यां गदितो भगवान्कमले-

हो और कोई वर मुझे न चाहिए । इतने से ही मेरा प्रयोजन है । ६६-६८ । मेधा ऋषि कहते हैं—हे सुरथ, जब वे दोनों इस प्रकार भगवान् विष्णु से वंचित हुए, तब वे सम्पूर्ण

जगत् को जलमय देखकर बोले—जहाँ पृथ्वी पानी में डूबी न हो वहाँ हमको मारो। ९९-१०१। ऋषि कहते हैं—मधु-कैटभ के यह कहने पर शंख-चक्र-गदाधारी विष्णु ने "अच्छा" कहकर उन दोनों के सिर अपनी जाँघ अथवा पेड़ (जघन का अर्थ पेड़ू भी

क्षणः। आवां जहि न यत्रोर्वी सलिलेन परिप्लुता॥१०१॥
ऋषिरुवाच॥ १०२॥ तथेत्युक्त्वा भगवता शङ्खचक्रगदा-
भृता। कृत्वा चक्रेण वै छिन्ने जघने शिरसी तयोः॥१०३॥
एवमेषा समुत्पन्ना ब्रह्मणा संस्तुता स्वयम्। प्रभावमस्या
देव्यास्तु भूयः शृणु वदामि ते॥ १०४॥

इति मार्कण्डेयपुराणे सावर्णिके मन्वन्तरे देवीमाहा-
त्म्ये मधुकैटभवधः प्रथमोऽध्यायः॥ १॥ उवाच १४
अर्द्ध० २४ श्लो० ६६ मं० १०४

है) पर रखकर चक्र से काट डाला। १०२-१०३। इस प्रकार ब्रह्मा के स्तुति करने पर वह देवी स्वयं उत्पन्न हुई। अब और भी उसका प्रभाव कहता हूँ, सुनो। १०४।

अथ ध्यानम् ।

अक्षस्रक्परशुं गदेषुकुलिशं पद्मं धनुष्कुण्डिकां दण्डं शक्तिमसिञ्च चर्म जलजं घण्टां सुराभाजनम् ॥ शूलं पाशसुदर्शने च दधतीं हस्तैः प्रवालप्रभां सेवे सैरिभमर्दिनीमिह महालक्ष्मीं सरोजस्थिताम् ॥ २ ॥ ॐ अस्य श्री मध्यमचरित्रस्य विष्णुर्ऋषिः महालक्ष्मीर्देवता उष्णिक्छन्दः शाकम्भरीशक्तिः दुर्गाबीजं वायुस्तत्त्वं यजुर्वेदस्वरूपं महालक्ष्मीप्रीत्यर्थे मध्यमचरित्रजपे विनियोगः ॥ २ ॥

मेधा ऋषि कहते हैं—राजन्, प्राचीन समय में असुरों के राजा महिषासुर और देवताओं के राजा इन्द्र से सौ वर्ष युद्ध हुआ। १-२। उस युद्ध में बलवान् असुरों ने देवताओं को जीत लिया और महिषासुर इन्द्र बन बैठा। ३। देवता परास्त होकर प्रजापति ब्रह्मा

ऋषिरुवाच ॥ १ ॥ देवासुरमभूद्युद्धं पूर्णमब्दशतं पुरा।
महिषेऽसुराणामधिपे देवानां च पुरन्दरे ॥ २ ॥ तत्रासुरै-
र्महावीर्यैर्देवसैन्यं पराजितम्। जित्वा च सकलान्देवा-
निन्द्रोऽभून्महिषासुरः ॥ ३ ॥ ततः पराजिता देवाः पद्म-
योनिं प्रजापतिम् ॥ पुरस्कृत्य गतास्तत्र यत्रेशगरुड-
ध्वजौ ॥ ४ ॥ यथावृत्तं तयोस्तद्वन्महिषासुरचेष्टितम्।

के पास गये और ब्रह्मा को साथ लेकर जहाँ भगवान् विष्णु और महादेव थे, वहाँ गये। ४। देवताओं ने उनसे युद्ध का सब वृत्तान्त, जिस प्रकार महिषासुर विजयी

होकर इन्द्र हुआ और देवता परास्त हुए, विस्तार के साथ कहा । ५ । देवताओं ने कहा—भगवन्, महिषासुर ने सूर्य, चन्द्रमा, इन्द्र, वायु, अग्नि, यम और वरुण आदि सब देवताओं के अधिकार छीन लिया है और उनको स्वर्ग से निकाल दिया है । अब देवता

त्रिदशाः कथयामासुर्देवाभिभवविस्तरम् ॥ ५ ॥ सूर्येन्द्राग्न्यनिलेन्दूनां यमस्य वरुणस्य च । अन्येषां चाधिकारान्स स्वयमेवाधितिष्ठति ॥ ६ ॥ स्वर्गान्निराकृताः सर्वे तेन देवगणा भुवि । विचरन्ति यथा मर्त्या महिषेण दुरात्मना ॥ ७ ॥ एतद्वः कथितं सर्वममरारिविचेष्टितम् । शरणं वः प्रपन्नाः स्मो वधस्तस्य विचिन्त्यताम् ॥ ८ ॥ इत्थं

मनुष्यों की तरह पृथ्वी पर घूमते हैं । ६-७ । भगवन्, महिषासुर ने जो उपद्रव किया है, वह हम लोगों ने आपसे निवेदन किया । हम लोग आपकी शरण में आये हैं । आप

उसके मारने का उपाय सोचिए। ८। देवताओं की यह प्रार्थना सुनकर भगवान् विष्णु और महादेव को बड़ा क्रोध हुआ। क्रोध से उनकी भौंहें चढ़ गईं और मुँह तमतमा गया। ६। अत्यन्त कुपित भगवान् विष्णु के मुँह से एक बहुत बड़ा तेज निकला।

निशम्य देवानां वचांसि मधुसूदनः। चकार कोपं शम्भुश्च भ्रुकुटीकुटिलाननौ ॥ ६ ॥ ततोऽतिकोपपूर्णस्य चक्रिणो वदनात्ततः। निश्चक्राम महत्तेजो ब्रह्मणः शङ्करस्य च ॥१०॥ अन्येषां चैव देवानां शक्रादीनां शरीरतः। निर्गतं सुमहत्तेजस्तच्चैक्यं समगच्छत ॥ ११ ॥ अतीव तेजसः कूटं ज्वलन्तमिव पर्वतम्। ददृशुस्ते सुरास्तत्र ज्वालाव्याप्त-

उसी प्रकार ब्रह्मा और महादेव के भी मुँह से तेज निकला। १०। इन्द्र आदि जितने देवता थे उनकी देह से भी तेज निकला और वह सब इकट्ठा हो गया। ११। देवताओं ने देखा कि वह तेज-पुंज प्रज्वलित पहाड़ के समान हो गया और उसका प्रकाश सब

दिशाओं में फैल गया । १२ । फिर वही अतुल तेज, जो देवताओं की देह से निकल-
कर एकत्र हुआ था, एक स्त्री का रूप बन गया और उसका प्रकाश तीनों लोकों में फैल
गया । १३ । शिव के तेज से उस स्त्री का मुँह, यम के तेज से सिर के बाल, विष्णु के

दिगन्तरम् ॥ १२ ॥ अतुलं तत्र तत्तेजः सर्वदेवशरीरजम् ।
एकस्थं तदभून्नारी व्याप्तलोकत्रयं त्विषा ॥ १३ ॥ यद-
भूच्छाम्भवं तेजस्तेनाजायत तन्मुखम् । याम्येन चाभव-
न्केशा बाहवो विष्णुतेजसा ॥ १४ ॥ सौम्येन स्तनयोर्युग्मं
मध्यमैन्द्रेण चाभवत् । वारुणेन च जङ्घोरू नितम्बस्तेजसा
भुवः ॥ १५ ॥ ब्रह्मणस्तेजसा पादौ तदङ्गुल्योऽर्कतेजसा ।

तेज से भुजाएँ, चन्द्रमा के तेज से दोनों स्तन, इन्द्र के तेज से देह का मध्य भाग, वरुण के
तेज से जांघें और पृथ्वी के तेज से उसके नितम्ब बन गये । १४-१५ । ब्रह्मा के तेज से

दोनों पैर, सूर्य के तेज से पैरों की अँगुलियाँ, वसुओं के तेज से हाथों की अँगुलियाँ, कुबेर के तेज से नाक, प्रजापति के तेज से दाँत, अग्नि के तेज से तीन आँखें, दोनों सन्ध्याओं के तेज से भौंहें और वायु के तेज से दो कान बन गये। इस प्रकार देवताओं के तेज से

वसूनां च कराङ्गुल्यः कौबेरेण च नासिका ॥ १६ ॥ तस्यास्तु दन्ताः सम्भूताः प्राजापत्येन तेजसा । नयनत्रितयं जज्ञे तथा पावकतेजसा ॥ १७ ॥ भ्रुवौ च सन्ध्ययोस्तेजः श्रवणावनिलस्य च । अन्येषां चैव देवानां सम्भवस्तेजसां शिवा ॥ १८ ॥ ततः समस्तदेवानां तेजोराशिसमुद्भवाम् । तां विलोक्य मुदं प्रापुरमरा महिषार्दिताः ॥ १९ ॥ शूलं

शिवा देवी उत्पन्न हुई। १६-१८। देवताओं के तेज-पुंज से उत्पन्न उस देवी को देखकर महिषासुर से पीड़ित देवता बड़े प्रसन्न हुए। १९। उसके बाद शिवजी ने अपने त्रिशूल से

एक दूसरा त्रिशूल निकालकर उस देवी को दे दिया। विष्णु ने अपने चक्र से एक चक्र उत्पन्न करके दिया। २०। इसी प्रकार वरुण ने शंख, अग्नि ने शक्ति, पवन ने धनुष और बाणों से भरा हुआ तरकस दिया। २१। देवराज इन्द्र ने अपने वज्र से

शूलाद्विनिष्कृष्य ददौ तस्यै पिनाकधृक्। चक्रं च दत्तवान् कृष्णः समुत्पाद्य स्वचक्रतः॥ २०॥ शङ्खं च वरुणः शक्तिं ददौ तस्यै हुताशनः। मारुतो दत्तवांश्चापं बाणपूर्णे तथेषुधी॥ २१॥ वज्रमिन्द्रः समुत्पाद्य कुलिशादमराधिपः। ददौ तस्यै सहस्राक्षो घण्टामैरावताद् गजात्॥ २२॥ कालदण्डाद्यमो दण्डं पाशं चाम्बुपतिर्ददौ। प्रजापति-

वज्र उत्पन्न करके दिया और ऐरावत हाथी से घंटा निकालकर दे दिया। २२। यम ने दंड से दंड निकालकर और वरुण ने पाश से पाश निकालकर दिया। प्रजापति

ब्रह्मा ने रुद्राक्ष की माला और कमंडलु दिया । २३ । सूर्य ने देवी के रोमकूपों में अपनी किरणें दे दीं, काल ने ढाल और चमकती हुई तलवार दी । २४ । समुद्र ने

श्चाक्षमालां ददौ ब्रह्मा कमण्डलुम् ॥ २३ ॥ समस्तरोम-
कूपेषु निजरश्मीन् दिवाकरः । कालश्च दत्तवान् खड्गं
तस्याश्चर्म च निर्मलम् ॥ २४ ॥ क्षीरोदश्चामलं हारमजरे
च तथाम्बरे । चूडामणिं तथा दिव्यं कुण्डले कटकानि
च २५ अर्धचन्द्रं तथा शुभ्रं केयूरान्सर्वबाहुषु । नूपुरौ विमलौ
तद्वद् ग्रैवेयकमनुत्तमम् ॥ २६ ॥ अङ्गुलीयकरत्नानि सम-

एक बहुत अच्छा हार, दो नये वस्त्र, दिव्य चूड़ामणि, दोनों कानों के कुंडल, कंकण, अर्धचन्द्र के समान ललाट का भूषण, सब भुजाओं के बिजायठ, पैरों के नूपुर, गले

का उत्तम हार और सब अँगुलियों के लिए जड़ाऊ अँगूठियाँ दीं। विश्वकर्मा ने एक अच्छा फरसा, अभेद्य कवच और अनेक प्रकार के अस्त्र दिये। समुद्र ने सिर और गले में पहनने के लिए कमल के फूलों की माला और हाथ में रखने के लिए एक बहुत

स्तास्वङ्गुलीषु च। विश्वकर्मा ददौ तस्यै परशुं चातिनिर्मलम् ॥ २७ ॥ अस्त्राण्यनेकरूपाणि तथाभेद्यं च दंशनम्। अम्लानपङ्कजां मालां शिरस्युरसि चापराम् ॥२८॥ अददज्जलधिस्तस्यै पङ्कजं चातिशोभनम्। हिमवान्वाहनं सिंहं रत्नानि विविधानि च ॥ २९ ॥ ददावशून्यं सुरया पानपात्रं धनाधिपः। शेषश्च सर्वनागेशो महामणिविभू-

सुन्दर कमल दिया। हिमवान् पर्वत ने सवारी के लिए एक सिंह दिया और अनेक प्रकार के रत्न दिये। २५-२९। कुबेर ने मदिरा से भरा हुआ एक प्याला दिया।

पृथ्वी को धारण करनेवाले नागराज शेष ने रत्नों से भूषित नागहार दिया। इसी प्रकार अन्य देवताओं ने भी आभूषण और अस्त्र-शस्त्र देकर देवी का सम्मान किया। तब वह देवी खिलखिलाकर हँसी और बड़े ज़ोर से गरजी उसके गरजने का भयानक

षितम् ॥ ३० ॥ नागहारं ददौ तस्यै धत्ते यः पृथिवीमिमाम्। अन्यैरपि सुरैर्देवी भूषणैरायुधैस्तथा ॥ ३१ ॥ सम्मानिता ननादोच्चैः साट्टहासं मुहुर्मुहुः। तस्या नादेन घोरेण कृत्स्नमापूरितं नभः ॥ ३२ ॥ अमायतातिमहता प्रतिशब्दो महानभूत्। चुक्षुभुः सकला लोकाः समुद्राश्च चकम्पिरे ॥ ३३ ॥ चचाल वसुधा चेलुः सकलाश्च मही-

शब्द आकाश में फैल गया। ३०-३२। उस शब्द की प्रतिध्वनि सब लोकों में फैल गई और सर्वत्र हलचल मच गई [illegible] । समुद्र काँपने लगे, पृथ्वी डगमगाने लगी और पर्वत

हिलने लगे। देवता प्रसन्न होकर "सिंहवाहिनी देवी की जय" बोलने लगे। ३३-३४। मुनि लोग बड़ी भक्ति से सिर झुकाकर देवी की स्तुति करने लगे। तीनों लोकों में यह हलचल देखकर असुरों की सेना अस्त्र-शस्त्र लेकर युद्ध के लिए तैयार हो गई। महिषा-

धराः। जयेति देवाश्च मुदा तामूचुः सिंहवाहिनीम् ॥३४॥
तुष्टुवुर्मुनयश्चैनां भक्तिनम्रात्ममूर्तयः। दृष्ट्वा समस्तं संक्षुब्धं
त्रैलोक्यममरारयः ॥ ३५ ॥ सन्नद्धाखिलसैन्यास्ते समु-
त्तस्थुरुदायुधाः। आः किमेतदिति क्रोधादाभाष्य महिषा-
सुरः॥३६॥ अभ्यधावत तं शब्दमशेषैरसुरैर्वृतः। स ददर्श
ततो देवीं व्याप्तलोकत्रयां त्विषा ॥ ३७॥ पादाक्रान्त्या

सुर उस शब्द को सुनकर बड़े क्रोध से "यह क्या है" कहकर असुरों के साथ, जिधर से गरजने का शब्द आता था उसी ओर दौड़ा, और वहाँ जाकर अपने तेज से तीनों लोकों को प्रकाशित करती हुई देवी को देखा। ३५-३७। उस देवी के चलने से

पृथ्वी दबी जा रही थी। उसके किरीट आकाश को छू रहे थे। उसके धनुष की ज्या के शब्द से पाताल आदि नीचे के सब लोक काँप रहे थे। ३८। वह देवी अपनी हज़ार भुजाएँ सब दिशाओं में फैलाये खड़ा थी। उसके साथ असुरों का युद्ध होने

नतभुवं किरीटोल्लिखिताम्बराम्। क्षोभिताशेषपातालां धनुर्ज्यानिःस्वनेन ताम्॥ ३८॥ दिशो भुजसहस्रेण समन्ताद् व्याप्य संस्थिताम्। ततः प्रववृते युद्धं तया देव्या सुरद्विषाम्॥ ३९॥ शस्त्रास्त्रैर्बहुधामुक्तैरादीपितदिगन्तरम्। महिषासुरसेनानीश्चिक्षुराख्यो महासुरः॥ ४०॥ युयुधे चामरश्चान्यैश्चतुरङ्गबलान्वितः। रथानामयुतैः षड्भिरु-

लगा। ३९। अनेक प्रकार के अस्त्र-शस्त्र चलने लगे। उनकी चमक से सब दिशाएँ प्रकाशित हो गईं। महिषासुर के सेनापति महाअसुर चिक्षुर और चामर शूरवीर असुरों की चतुरंगिणी सेना लेकर युद्ध करने लगे। उदग्र नाम का असुर साठ हज़ार रथ अपने

साथ लेकर युद्ध करने लगा । ४०-४१ । महाहनु नाम का असुर एक करोड़ सेना लेकर देवी के साथ लड़ने लगा और महाअसुर असिलोमा पाँच करोड़ सैनिक लेकर युद्ध में आया । ४२ । वाष्कल नामक असुर साठ लाख रथ और असंख्य हाथी-घोड़ों की सेना

दग्राख्यो महासुरः ॥ ४१ ॥ अयुध्यतायुतानां च सहस्रेण
महाहनुः । पञ्चाशद्भिश्च नियुतैरसिलोमा महासुरः ॥४२॥
अयुतानां शतैः षड्भिर्वाष्कलो युयुधे रणे । गजवाजि-
सहस्रौघैरनेकैः परिवारितः ॥ ४३ ॥ वृतो रथानां कोट्या
च युद्धे तस्मिन्नयुध्यत । बिडालाख्योऽयुतानां च पञ्चा-
शद्भिरथायुतैः ॥ ४४ ॥ युयुधे संयुगे तत्र रथानां परिवारितः ।

लेकर युद्ध करने लगा । ४३ । बिडाल नामक असुर एक करोड़ पाँच लाख रथ साथ लेकर युद्ध करने लगा । ४४ । और भी बहुत-से असुर दस-दस हज़ार रथ और हाथी-घोड़े

लेकर देवी से युद्ध करने लगे । ४५ । महिषासुर भी करोड़ों रथ, घोड़े और हाथी लेकर युद्धभूमि में आया । असुरों की सेना तोमर, भिन्दिपाल, शक्ति, मुसल, खड्ग,

अन्ये च तत्रायुतशो रथनागहयैर्वृताः ॥ ४५ ॥ युयुधुः संयुगे देव्या सह तत्र महासुराः । कोटिकोटिसहस्रैस्तु रथानां दन्तिनां तथा ॥ ४६ ॥ हयानां च वृतो युद्धे तत्राभून्महिषासुरः । तोमरैर्भिन्दिपालैश्च शक्तिभिर्मुसलैस्तथा ॥ ४७ ॥ युयुधुः संयुगे देव्या खड्गैः परशुपट्टिशैः । केचिच्च चिक्षिपुः शक्तीः केचित्पाशाँस्तथापरे ॥ ४८ ॥ देवीं खड्गप्रहारैस्तु ते तां हन्तुं प्रचक्रमुः । सापि देवी ततस्तानि

परशु और पट्टिश आदि शस्त्रों से युद्ध करने लगी । कोई शक्ति और कोई पाश फेंककर देवी से युद्ध करते थे । ४६-४८ । कोई-कोई असुर खड्ग लेकर देवी को मारने दौड़े ।

देवी ने उन असुरों के अस्त्र-शस्त्र खेल की तरह अपने अस्त्रों से काटकर खंड-खंड कर दिये और देवी के मुँह पर क्लेश और क्रोध का विकार न हुआ। यह देखकर देवता और ऋषि उनकी स्तुति करने लगे। ४९-५०। उसके बाद देवी उन असुरों पर अस्त्र-

शस्त्राण्यस्त्राणि चण्डिका ॥ ४९ ॥ लीलयैव प्रचिच्छेद निजशस्त्रास्त्रवर्षिणी। अनायस्ताननना देवी स्तूयमाना सुरर्षिभिः॥ ५० ॥मुमोचासुरदेहेषु शस्त्राण्यस्त्राणि चेश्वरी। सोऽपि क्रुद्धो धुतसटो देव्या वाहनकेशरी ॥ ५१ ॥ चचा-रासुरसैन्येषु वनेष्विव हुताशनः। निश्वासान्मुमुचे यांश्च युध्यमाना रणेऽम्बिका ॥ ५२ ॥ त एव सद्यः सम्भूता गणाः

शस्त्र का प्रहार करने लगीं। उनका वाहन सिंह भी कुपित होकर गर्दन के बाल हिलाता हुआ उसी प्रकार सेना में विचरने लगा, जैसे वन में आग दौड़ती है। उसी समय अम्बिका देवी की श्वास से लाखों गण उत्पन्न हो गये। देवी का शक्ति से

उन्नत होकर परशु, भिन्दिपाल, तलवार और पट्टिश से असुरों का विनाश करने लगे तथा ढोल, मृदंग और शंख बजाने लगे । देवी ने त्रिशूल, गदा और शक्ति बरसाकर

शतसहस्रशः । युयुधुस्ते परशुभिर्भिन्दिपालासिपट्टिशैः ५३
नाशयन्तोऽसुरगणान्देवीशक्त्युपबृंहिताः । अवादयन्त
पटहान् गणाः शङ्खांस्तथापरे ॥ ५४ ॥ मृदङ्गांश्च तथैवान्ये
तस्मिन्युद्धमहोत्सवे । ततो देवी त्रिशूलेन गदया शक्ति-
वृष्टिभिः ॥ ५५ ॥ खड्गादिभिश्च शतशो निजघान महा-
सुरान् । पातयामास चैवान्यान् घण्टास्वनविमोहि-
तान् ॥ ५६ ॥ असुरान्भुवि पाशेन बद्ध्वा चान्यानकर्षयत् ।

तथा खड्ग आदि का प्रहार करके सैकड़ों असुरों को मार डाला । बहुत-से असुरों को घंटा के शब्द से मोहित करके पृथ्वी पर गिरा दिया । ५१-५६ । कितने ही असुरों

को पाश में बाँधकर घसीट लिया और बहुतों को तीक्ष्ण खड्ग से काट डाला। ५७। कितने ही दानव देवी की गदा के प्रहार से पृथ्वी पर गिरकर मर गये। कोई-कोई मुसल के प्रहार से घायल होकर रुधिर का वमन करने लगे। ५८। बहुत-से असुर

केचिद् द्विधा कृतास्तीक्ष्णैः खड्गपातैस्तथापरे॥ ५७॥ विपोथिता निपातेन गदया भुवि शेरते। वेमुश्च केचिद्रुधिरं मुसलेन भृशं हताः॥ ५८॥ केचिन्निपतिता भूमौ भिन्नाः शूलेन वक्षसि। निरन्तराः शरौघेण कृताः केचिद्रणाजिरे॥ ५९॥ श्येनानुकारिणः प्राणान्मुमुचुस्त्रिदशार्दनाः। केषाञ्चिद्बाहवश्छिन्नाश्छिन्नग्रीवास्तथापरे॥ ६०॥ शिरांसि

छाती में शूल लगने से और बहुत-से बाणों के प्रहार से रणभूमि में गिरकर मर गये। ५९। देवताओं को पीड़ित करनेवाले असुर बाज पक्षी की तरह पृथ्वी पर गिरकर मरने लगे। बहुतों की भुजाएँ कट गईं और बहुतों के गले कट गये। ६०। कितनों

के सिर कट गये, कितने ही असुर आधे धड़ से कटकर मर गये और बहुत-से असुर जाँघें कट जाने से पृथ्वी पर गिर पड़े। ६१। देवी ने किसी की एक आँख फोड़ दी, किसी की एक भुजा काट डाली और किसी को आधे धड़ से काट कर दो खंड कर दिया। बहुत-

पेतुरन्येषामन्ये मध्ये विदारिताः। विच्छिन्नजङ्घास्त्वपरे पेतुरुर्व्यां महासुराः ॥ ६१ ॥ एकबाह्वक्षिचरणाः केचिद्देव्या द्विधाकृताः। छिन्नेऽपि चान्ये शिरसि पतिताः पुनरुत्थिताः ॥ ६२ ॥ कबन्धा युयुधुर्देव्या गृहीतपरमायुधाः। ननृतुश्चापरे तत्र युद्धे तूर्यलयाश्रिताः ॥ ६३ ॥ कबन्धाश्छिन्नशिरसः खड्गशक्त्यृष्टिपाणयः। तिष्ठ तिष्ठेति भाषन्तो

से असुर सिर कट जाने पर गिरकर फिर उठ खड़े हुए। ६२। कबन्ध बड़े-बड़े आयुध लेकर देवी से युद्ध करने लगे। कितने ही कबन्ध युद्ध में बाजे की लय के साथ नाचने लगे। ६३। जिनके सिर कट गये थे वे कबन्ध, खड्ग, शक्ति और ऋष्टि हाथ में

लेकर "खड़ी रह, खड़ी रह" कहते हुए देवी की ओर झपटे। ६४। जहाँ युद्ध हुआ वहाँ हाथी, घोड़े, रथ और असुरों के रुंड-मुंड से पृथ्वी भर गई। ६५। युद्धभूमि में हाथी, घोड़े और असुरों के रुधिर की नदी बह चला। ६६। अम्बिका ने क्षण-भर

देवीमन्ये महासुराः ॥ ६४ ॥ पातितैः रथनागाश्वैरसुरैश्च वसुन्धरा। अगम्या साभवत्तत्र यत्राभूत्स महारणः ॥६५॥ शोणितौघा महानद्यः सद्यस्तत्र विसुस्रवुः। मध्ये चासुर-सैन्यस्य वारणासुरवाजिनाम् ॥ ६६ ॥ क्षणेन तन्महा-सैन्यमसुराणां तथाम्बिका। निन्ये क्षयं यथा वह्निस्तृणदा-रुमहाचयम् ॥ ६७ ॥ स च सिंहो महानादमुत्सृजन्धुत-

में असुरों की सेना का उसी प्रकार नाश कर दिया जैसे सूखे तृण और काठ के ढेर को आग बहुत जल्द जला देती है। ६७। देवी का वाहन सिंह जब गर्दन के बाल

हिलाकर गरजता था तब मानों असुरों के प्राण निकाल लेता था । ६८ । देवी के

केसरः । शरीरेभ्योऽमरारीणामसूनिव विचिन्वति ॥ ६८ ॥
देव्या गणैश्च तैस्तत्र कृतं युद्धं तथासुरैः । यथैषां तुष्टुवुर्देवाः
पुष्पवृष्टिमुचो दिवि ॥ ६९ ॥

इति श्रीमार्कण्डेयपुराणे सावर्णिके मन्वन्तरे देवी-
माहात्म्ये महिषासुरसैन्यवधो नाम द्वितीयोऽध्यायः ॥ २ ॥
उवाच १ श्लो० ६८ मं० ६९ एवमादितः १७३

गण जो असुरों से युद्ध करते थे उन पर देवता फूल बरसाकर उनकी प्रशंसा करने
लगे । ६९ ।

अथ ध्यानम् ॥ उद्यद्भानुसहस्रकान्तिमरुणक्षौमां शिरो-
मालिकां रक्तालिप्तपयोधरां जपवटीं विद्यामभीतिं वराम्।
हस्ताब्जैर्दधतीं त्रिनेत्रविलसद्वक्त्रारविन्दश्रियं देवीं बद्ध-
हिमांशुरत्नमुकुटां वन्दे सुमन्दस्मिताम् ॥ ३ ॥

ऋषिरुवाच ॥ १ ॥ निहन्यमानं तत्सैन्यमवलोक्य
महासुरः । सेनानीश्चिक्षुरः कोपाद्ययौ योद्धुमथाम्बि-
काम् ॥ २ ॥ स देवीं शरवर्षेण ववर्ष समरेऽसुरः । यथा मेरु-

मेधा ऋषि कहते हैं—महाराज, महिषासुर के सेनापति चिक्षुर ने जब सेना का विनाश होते देखा, तब बड़े क्रोध से युद्ध करने के लिए देवी के सामने आया। १–२। जैसे बादल मेरु पर्वत के शिखर पर पानी बरसाते हैं, वैसे ही वह असुर देवी के ऊपर

बाण बरसाने लगा । ३ । देवी ने खेल की तरह अपने बाणों से उसके बाण काट डाले और घोड़ों समेत उसके सारथि को भी मार डाला । ४ । रथ की बड़ी ऊँची ध्वजा और धनुष को भी काट डाला । फिर अपने बाणों से उसका शरीर छेद डाला । ५ ।

गिरेः श्रृङ्गं तोयवर्षेण तोयदः ॥ ३ ॥ तस्य च्छित्त्वा ततो देवी लीलयैव शरोत्करान् । जघान तुरगान्बाणैर्यन्तारं चैव वाजिनाम् ॥४॥ चिच्छेद च धनुः सद्यो ध्वजं चातिसमुच्छ्रितम् । विव्याध चैव गात्रेषु छिन्नधन्वानमाशुगैः ५ स छिन्नधन्वा विरथो हताश्वो हतसारथिः । अभ्यधावत तां देवीं खड्गचर्मधरोऽसुरः ॥ ६ ॥ सिंहमाहत्य खड्गेन

धनुष, रथ, घोड़े और सारथि के कट जाने पर वह ढाल-तलवार लेकर देवी की ओर दौड़ा । ६ । उसने सिंह के सिर पर एक तीक्ष्ण खड्ग मारकर बड़े वेग से देवी की बाईं

भुजा पर एक प्रहार किया । ७। वह खड्ग देवी की भुजा पर गिरते ही टूट गया। तब उसने क्रोध से लाल आँखें करके एक शूल उठाकर देवी पर चलाया। वह शूल आकाश में जाकर, अपने तेज से सूर्य के समान प्रकाशित होकर, जब देवी पर गिरने

तीक्ष्णधारेण मूर्धनि । आजघान भुजे सव्ये देवी मप्यतिवेगवान् ॥ ७ ॥ तस्याः खड्गो भुजं प्राप्य पफाल नृपनन्दन । ततो जग्राह शूलं स कोपादरुणलोचनः ॥ ८ ॥ चिक्षेप च ततस्तत्तु भद्रकाल्यां महासुरः । जाज्वल्यमानं तेजोभी रविबिम्बमिवाम्बरात् ॥ ९ ॥ दृष्ट्वा तदापतच्छूलं देवीशूलममुञ्चत । तेन तच्छतधा नीतं शूलं स च महासुरः ॥ १० ॥ हते तस्मिन्महावीर्ये महिषस्य चमूपतौ ।

लगा तब देवी ने अपने शूल से उसके सैकड़ों टुकड़े कर दिये और उस असुर को भी मार डाला । ८-१० । महिषासुर के सेनापति महाबली चिक्षुर के मारे जाने पर

चामर नाम का असुर हाथी पर सवार होकर देवी के सामने आया । ११ । उसने देवी के ऊपर एक शक्ति चलाई । देवी ने उसे हुंकार शब्द से निस्तेज करके पृथ्वी पर गिरा दिया । १२ । चामर ने अपनी शक्ति को गिरी हुई देखकर बड़े क्रोध से

आजगाम गजारूढश्चामरस्त्रिदशार्दनः ॥ ११ ॥ सोऽपि शक्तिं मुमोचाथ देव्यास्तामम्बिका द्रुतम् । हुङ्काराभिहतां भूमौ पातयामास निष्प्रभाम् ॥ १२ ॥ भग्नां शक्तिं निपतितां दृष्ट्वा क्रोधसमन्वितः । चिक्षेप चामरः शूलं बाणै-स्तदपि साच्छिनत् ॥ १३ ॥ ततः सिंहः समुत्पत्य गज-कुम्भान्तरस्थितः । बाहुयुद्धेन युयुधे तेनोच्चैस्त्रिदशा-

देवी के ऊपर शूल चलाया । देवी ने उसे बाणों से काट डाला । १३ । उसके बाद देवी का वाहन सिंह कूदकर चामर के हाथी के सिर पर चढ़ गया और वहीं उस असुर

से बाहुयुद्ध करने लगा। १४। अन्त में वह असुर और सिंह दोनों लड़ते हुए पृथ्वी पर आये और बड़े क्रोध से एक दूसरे पर प्रहार करने लगे। १५। उसके बाद सिंह ने बड़े वेग से कूदकर एक ऐसा थप्पड़ मारा कि उस असुर का सिर धड़ से अलग हो गया। १६। तब उदग्र नाम का असुर युद्ध करने लगा। उसे भी देवी ने शिला और

रिणा ॥ १४ ॥ युद्ध्यमानौ ततस्तौ तु तस्मान्नागान्महीं गतौ। युयुधातेऽतिसंरब्धौ प्रहारैरतिदारुणैः ॥ १५ ॥ ततो वेगात्खमुत्पत्य निपत्य च मृगारिणा। करप्रहारेण शिरश्चामरस्य पृथक्कृतम् ॥ १६ ॥ उदग्रश्च रणे देव्या शिलावृक्षादिभिर्हतः। दन्तमुष्टितलैश्चैव करालश्च निपातितः १७ देवी क्रुद्धा गदापातैश्चूर्णयामास चोद्धतम्। वाष्कलं

वृक्ष आदि से मार डाला। तब कराल नाम का असुर देवी के सामने आया। देवी ने उसे भी दाँत, घूँसा और लातों से मार डाला। १७। फिर देवी ने कुपित होकर

उद्धत को गदा से मारकर चूर्ण कर दिया ; वाष्कल को भिन्दिपाल से, ताम्र तथा अन्धक को बाणों से, उग्रास्य, उग्रवीर्य और महाहनु को त्रिशूल से मार डाला।१८-१९। तलवार से बिडाल का सिर काट डाला। दुर्धर और दुर्मुख को बाणों से मारकर

भिन्दिपालेन बाणैस्ताम्रं तथान्धकम् ॥ १८ ॥ उग्रास्य-मुग्रवीर्यं च तथैव च महाहनुम् । त्रिनेत्रा च त्रिशूलेन जघान परमेश्वरी ॥ १९ ॥ बिडालस्यासिना कायात्पातयामास वै शिरः । दुर्द्धरं दुर्मुखं चोभौ शरैर्निन्ये यमक्षयम् ॥ २० ॥ एवं संक्षीयमाणे तु स्वसैन्ये महिषासुरः । माहिषेण स्वरूपेण त्रासयामास तान्गणान् ॥ २१ ॥

यमराज के घर भेज दिया ।२०। इस प्रकार जब महिषासुर की सेना नष्ट हो गई तब वह भैंसे का रूप धारण करके देवी के गणों को डराने लगा ।२१। कितनों को

मुँह से, कितनों को खुरों से, कितनों को पूँछ से और कितनों को सींगों से मार डाला । २२ । कितनों को वेग से दौड़कर कुचल डाला । कितनों को गरजने के शब्द से, कितनों को चारों ओर दौड़कर और कितनों को श्वास की वायु से पृथ्वी

कांँश्चित्तुण्डप्रहारेण खुरक्षेपैस्तथापरान् । लाङ्गूलताडितांँश्चान्याञ्छृङ्गाभ्याञ्च विदारितान् ॥ २२ ॥ वेगेन काँश्चिदपरान्नादेन भ्रमणेन च । निश्वासपवनेनान्यान्पातयामास भूतले ॥ २३ ॥ निपात्य प्रमथानीकमभ्यधावत सोऽसुरः । सिंहं हन्तुं महादेव्याः कोपं चक्रे ततोऽम्बिका ॥ २४ ॥ सोऽपि कोपान्महावीर्यः खुरक्षुण्णमही-

पर गिरा दिया । २३ । इस प्रकार वह गणों की सेना पृथ्वी पर गिराकर देवी के सिंह को मारने दौड़ा । तब देवी को बड़ा क्रोध आया । २४ । महापराक्रमी महिषा-

सुर कुपित होकर खुरों से पृथ्वी खोदने, सींगों से बड़े-बड़े पर्वत फेंकने और गरजने लगा । २५ । उसके दौड़ने से पृथ्वी खुद गई और फट गई । पूँछ के पटकने से समुद्र का पानी सब ओर फैल गया । २६ । सींगों के हिलाने से बादल टुकड़े-टुकड़े होकर

ततः । शृङ्गाभ्यां पर्वतानुच्चांश्चिक्षेप च ननाद च ॥ २५ ॥
वेगभ्रमणविक्षुण्णा मही तस्य व्यशीर्यत । लाङ्गूलेना-
हतश्चाब्धिः प्लावयामास सर्वतः ॥ २६ ॥ धुतशृङ्ग-
विभिन्नाश्च खण्डं खण्डं ययुर्घनाः । श्वासानिलास्ताः
शतशो निपेतुर्नभसोऽचलाः ॥ २७ ॥ इति क्रोधसमा-
ध्मातमापतन्तं महासुरम् । दृष्ट्वा सा चण्डिका कोपं तद्व-

उड़ गये । श्वास की वायु से सैकड़ों पर्वत ऊपर को उड़कर गिरने लगे । २७ । इस प्रकार क्रोध से झपटते हुए महिषासुर को देखकर चंडिका देवी ने उसे मारने के लिए

क्रोध किया । २८ । देवी ने पाश फेंककर उसे बाँध लिया । पाश में बँध जाने पर उसने भैंसे का रूप छोड़कर शीघ्र ही सिंह का रूप धारण कर लिया । देवी जब तक उसका सिर काटें तब तक वह हाथ में खड्ग लेकर पुरुष-रूप देख पड़ने लगा । २९-३० ।

धाय तदाकरोत् ॥ २८ ॥ सा क्षिप्त्वा तस्य वै पाशं तं बबन्ध महासुरम् । तत्याज माहिषं रूपं सोऽपि बद्धो महामृधे ॥ २९ ॥ ततः सिंहोऽभवत्सद्यो यावत्तस्याम्बिकाशिरः । छिनत्ति तावत्पुरुषः खड्गपाणिरदृश्यत ॥ ३० ॥ तत एवाशु पुरुषं देवी चिच्छेद सायकैः । तं खड्गचर्मणा सार्द्धं ततः सोऽभून्महागजः ॥ ३१ ॥ करेण च महासिंहं तं चकर्ष

देवी ने बड़ी शीघ्रता से बाणों से उसे छेद डाला, और उसकी ढाल-तलवार भी काट डाली । तब वह बड़े भारी हाथी का रूप धारण करके सूँड़ से सिंह को खींचने और

गरजने लगा । यह देखकर देवी ने तलवार से उसकी सूँड़ काट डाली । ३१-३२ । तब उसने फिर भैंसे का रूप धारण कर लिया और पहले की तरह तीनों लोकों के चराचर जीवों को व्याकुल करने लगा । ३३ । तब जगत् की माता

जगर्ज च । कर्षतस्तु करं देवी खड्गेन निरकृन्तत ॥ ३२ ॥
ततो महासुरो भूयो माहिषं वपुरास्थितः । तथैव क्षोभयामास त्रैलोक्यं सचराचरम् ॥ ३३ ॥ ततः क्रुद्धा जगन्माता चण्डिका पानमुत्तमम् । पपौ पुनः पुनश्चैव जहासारुणलोचना ॥ ३४ ॥ ननर्द चासुरः सोऽपि बलवीर्यमदोद्धतः । विषाणाभ्यां च चिक्षेप चण्डिकां प्रति भूधरान् ॥ ३५ ॥

चंडिका कुपित होकर, बारबार उत्तम मदिरा पीकर, लाल-लाल आँखें करके हँसने लगीं । ३४ । बल-वीर्य के गर्व से उन्मत्त वह असुर भी गरजने लगा और सींगों से

पर्वत उठा-उठाकर देवी पर फेंकने लगा । ३५ । देवी ने उसके फेंके हुए पर्वतों को बाणों से चूर कर दिया । उस समय मदिरा के नशे में उनका मुँह लाल हो गया था । वे अस्पष्ट शब्दों में बोलीं । ३६ । देवी ने कहा—रे मूढ, जब तक मैं मदिरा पीती हूँ, तब

सा च तान् प्रहितांस्तेन चूर्णयन्ती शरोत्करैः । उवाच तं मदोद्धूतमुखरागाकुलाक्षरम् ॥ ३६ ॥ देव्युवाच ॥ ३७ ॥ गर्ज गर्ज क्षणं मूढ मधु यावत्पिबाम्यहम् । मया त्वयि हतेऽत्रैव गर्जिष्यन्त्याशु देवताः ॥ ३८ ॥ ऋषिरुवाच ॥ ३९ ॥ एवमुक्त्वा समुत्पत्य सारूढा तं महासुरम् । पादेनाक्रम्य

तक तू क्षण भर और गरज ले; मैं तुझे अभी मार डालूँगी । जब तू मारा जायगा, तब देवता गरजेंगे । ३७-३८ । मेधा ऋषि कहते हैं—यह कहकर देवी कूदकर महिषासुर के ऊपर चढ़ बैठीं और लात से उसका गला दबाकर शूल से छेदने

लगीं । ३९-४० । देवी के पैर के नीचे दबा हुआ महिषासुर किसी तरह अपना ऊपर का धड़ निकाल सका, इतने में देवी ने अपने पराक्रम से फिर उसे दबा लिया और

कण्ठे च शूलेनैनमताडयत् ॥ ४० ॥ ततः सोऽपि पदाक्रान्तस्तया निजमुखात्ततः । अर्धनिष्क्रान्त एवाति देव्या वीर्येण संवृतः ॥ ४१ ॥ अर्धनिष्क्रान्त एवासौ युध्यमानो महासुरः । तया महासिना देव्या शिरश्छित्त्वा निपातितः ॥ ४२ ॥ ततो हाहाकृतं सर्वं दैत्यसैन्यं ननाश तत् । प्रहर्षं च परं जग्मुः सकला देवतागणाः ॥ ४३ ॥ तुष्टुवुस्तां

तलवार से उसका सिर काटकर पृथ्वी पर गिरा दिया । ४१-४२ । महिषासुर के मरने पर बची हुई दैत्य-सेना हाहाकार करती हुई भाग गई । देवता और महर्षि

प्रसन्न होकर देवी की स्तुति करने लगे। गन्धर्व गाने लगे और अप्सराएँ नाचने लगीं। ४३-४४।

सुरा देवीं सह दिव्यैर्महर्षिभिः। जगुर्गन्धर्वपतयो ननृतुश्चाप्सरोगणाः॥ ४४॥

इति श्रीमार्कण्डेयपुराणे सावर्णिके मन्वन्तरे देवीमाहात्म्ये महिषासुरवधो नाम तृतीयोऽध्यायः॥ ३॥ उवाच ३ श्लो० ४१ मं० ४४ एवमादितः २१७

अथ ध्यानम् ॥ कालाभ्राभां कटाक्षैररिकुलभयदां मौलिबद्धेन्दुरेखां शङ्खं चक्रं कृपाणं त्रिशिखमपि करैरुद्वहन्तीं त्रिनेत्राम् । सिंहस्कन्धाधिरूढां त्रिभुवनमखिलं तेजसा पूरयन्तीं ध्याये दुर्गां जयाख्यां त्रिदशपतिनुतां सेवितां सिद्धिकामैः ॥ ४ ॥

ऋषिरुवाच ॥ १ ॥ शक्रादयः सुरगणा निहतेऽतिवीर्ये तस्मिन्दुरात्मनि सुरारिबले च देव्या । तां तुष्टुवुः प्रणतिनम्रशिरोधरांसा वाग्भिः प्रहर्षपुलकोद्गमचारुदेहाः ॥ २ ॥

मेधा ऋषि कहते हैं—हे सुरथ, जब देवी ने महापराक्रमी दुरात्मा महिषासुर और उसकी सेना को मार डाला, तब इन्द्र आदि देवता सिर और कन्धा झुकाकर हर्ष से पुलकित होकर, देवी की स्तुति करने लगे—हम लोग भक्तिपूर्वक उस अम्बिका देवी

को प्रणाम करते हैं, जो सब देवताओं के तेज से उत्पन्न हुई है। जो अपनी शक्ति से सम्पूर्ण जगत् को उत्पन्न करती है और देवताओं तथा ऋषियों की पूज्य है। वह देवी हम लोगों का कल्याण करे। १–३। ब्रह्मा, विष्णु और महादेव भी जिसके अतुल

देव्या यया ततमिदं जगदात्मशक्त्या निश्शेषदेवगणश-
क्तिसमूहमूर्त्या। तामम्बिकामखिलदेवमहर्षिपूज्यां भक्त्या
नताःस्म विदधातु शुभानि सा नः॥ ३॥ यस्याः प्रभाव-
मतुलं भगवाननन्तो ब्रह्मा हरश्च नहि वक्तुमलं बलं च।
सा चण्डिकाखिलजगत्परिपालनाय नाशाय चाशुभ-
भयस्य मतिं करोतु॥ ४॥ या श्रीः स्वयं सुकृतिनां भवने-

प्रभाव का बखान नहीं कर सकते, वह भगवती जगत् का पालन और पाप से उत्पन्न भय का विनाश करे। ४। जो देवी पुण्यवान् पुरुषों के घरों में लक्ष्मी-रूप से, पापियों

के घरों में दरिद्र-रूप से, शुद्ध अन्तःकरणवालों के हृदय में बुद्धि-रूप से, सज्जनों के हृदय में श्रद्धारूप से और कुलीनों के हृदय में लज्जा-रूप से स्थित है, उस देवी को हम लोग प्रणाम करते हैं। हे देवि, इस जगत् की रक्षा करो। ५। हे देवि, हम लोग

ष्वलक्ष्मीः पापात्मनां कृतधियां हृदयेषु बुद्धिः। श्रद्धा सतां कुलजनप्रभवस्य लज्जा तां त्वां नताःस्म परिपालय देवि विश्वम् ॥ ५ ॥ किं वर्णयाम तव रूपमचिन्त्यमेतत्किञ्चातिवीर्यमसुरक्षयकारिभूरि। किं चाहवेषु चरितानि तवाद्भुतानि सर्वेषु देव्यसुरदेवगणादिकेषु ॥ ६ ॥ हेतुः समस्तजगतां त्रिगुणापि दोषैर्न ज्ञायसे हरिहरादिभिरप्यपारा।

आपके इस अचिन्त्य-रूप का, असुरों के विनाश करनेवाले पराक्रम का और समर में आपके अद्भुत चरित्र का किस प्रकार वर्णन करें, अर्थात् हम लोगों में आपके गुणों का वर्णन करने की शक्ति नहीं है। ६। आप सम्पूर्ण जगत् की उत्पत्ति का कारण हैं

और सतोगुण, रजोगुण, तमोगुण से युक्त हैं। रागद्वेष आदि दोषों के कारण ब्रह्मा, विष्णु और महेश भी आपकी अपार महिमा नहीं जान सकते। सम्पूर्ण जगत् आपके अंश से उत्पन्न और आपही के आश्रित हैं। आप सब विकारों से रहित, परम

सर्वाश्रयाखिलमिदं जगदंशभूतमव्याकृता हि परमा प्रकृतिस्त्वमाद्या ॥ ७ ॥ यस्याः समस्तसुरतासमुदीरणेन तृप्तिं प्रयाति सकलेषु मखेषु देवि। स्वाहासि वै पितृगणस्य च तृप्तिहेतुरुच्चार्यसे त्वमत एव जनैः स्वधा च ॥ ८ ॥ या मुक्तिहेतुरविचिन्त्य महाव्रता च अभ्यस्यसे सुनियते-

प्रकृति, और आदि शक्ति हैं। ७। हे देवि, यज्ञ में आप ही का नाम (स्वाहा) उच्चारण करने से देवता, पितृकर्म में आपही का नाम (स्वधा) उच्चारण करने से पितर तृप्त होते हैं। इसी लिये देवकर्म में "स्वाहा" और पितृकर्म में "स्वधा" का उच्चारण किया जाता है। ८। हे देवि, आप भगवती और श्रेष्ठ ब्रह्मविद्या हैं। आप ही मुक्ति

का कारण और अचिन्त्य ब्रह्मज्ञान-रूप हैं, इसी से तत्त्व के जानकार, मोक्ष चाहनेवाले जितेन्द्रिय महर्षिगण रागद्वेष आदि दोषों को त्यागकर आपकी आराधना करते हैं। ९। हे देवि, आप वाणी-रूप हैं, और दोषरहित ऋग्वेद, यजुर्वेद तथा प्रणव और उत्तम पदों से

न्द्रियतत्त्वसारैः । मोक्षार्थिभिर्मुनिभिरस्तसमस्तदोषै-
र्विद्यासि सा भगवती परमा हि देवि ॥ ९ ॥ शब्दात्मिका-
सुविमलर्ग्यजुषां निधानमुद्गीथरम्यपदपाठवतां च साम्नाम्।
देवी त्रयी भगवती भवभावनाय वार्ता च सर्वजगतां पर-
मार्त्तिहन्त्री ॥ १० ॥ मेधासि देवि विदिताखिलशास्त्रसारा
दुर्गासि दुर्गभवसागरनौरसङ्गा । श्रीः कैटभारिहृदयैक-

युक्त सामवेद का आश्रय हैं। आप ही वेदत्रयी, देवी, भगवती और संसार का पालन करने के लिये कृषि-रूप हैं। आप ही संसार की घोर विपत्ति दूर करती हैं। १०। हे देवि, सब शास्त्रों का मर्म जाननेवाली मेधा आप ही हैं। दुर्गम भवसागर की नौका आप

ही हैं, इसी से आपका नाम दुर्गा है। आप कैटभ को मारनेवाले विष्णु के हृदय में लक्ष्मी-रूप से निवास करती हैं, और शिव ने जिसे अपने वामभाग में बैठाया है, वह गौरी आपही हैं। ११। हे देवि, बड़े आश्चर्य की बात है कि आपके मुस्कराते हुए मुख

कृताधिवासा गौरी त्वमेव शशिमौलिकृतप्रतिष्ठा ॥ ११ ॥
ईषत्सहासममलं परिपूर्णचन्द्रबिम्बानुकारि कनकोत्तम-कान्तिकान्तम्। अत्यद्भुतं प्रहृतमात्तरुषा तथापि वक्त्रं विलोक्य सहसा महिषासुरेण ॥ १२ ॥ दृष्ट्वा तु देवि कुपितं भ्रुकुटीकरालमुद्यच्छशाङ्कसदृशच्छवि यन्न सद्यः। प्राणान्

को, जो पूर्णमासी के निर्मल चन्द्रमा और सुवर्ण की उत्तम कान्ति के समान है, देखकर भी महिषासुर ने बड़े क्रोध से प्रहार किया (अर्थात् वह बड़ा क्रूर था, सम्पूर्ण जगत् को मोहित करनेवाले आपके मुख को देखकर भी मोहित न हुआ)। १२। हे देवि, आपका तिरछी भौंहों से भयानक, उदयकाल के चन्द्रमा के समान सुन्दर, कुपित

मुख देखकर महिषासुर शीघ्र ही मर नहीं गया, यह और भी आश्चर्य की बात है ; क्योंकि कुपित यमराज को देखकर कौन जी सकता है। १३। हे देवि, आप प्रसन्न होकर हम लोगों का कल्याण कीजिए। आप कुपित होकर कुल का विनाश कर देती

मुमोच महिषस्तदतीव चित्रं कैर्जीव्यते हि कुपितान्तक-दर्शनेन॥ १३॥ देवि प्रसीद परमा भवती भवाय सद्यो विनाशयसि कोपवती कुलानि। विज्ञातमेतदधुनैव यद-स्तमेतन्नीतं बलं सुविपुलं महिषासुरस्य॥ १४॥ ते संमता जनपदेषु धनानि तेषां तेषां यशांसि न च सीदति धर्मवर्गः।

हैं। यह बात हम लोगों को अभी मालूम हुई कि आपने क्रुद्ध होकर महिषासुर की बहुत बड़ी सेना का विनाश कर दिया। १४। हे देवि, जिन लोगों पर आप सदा प्रसन्न रहती हैं, वे धन्य हैं; उन्हीं का सब देशों में सम्मान होता है, उन्हीं को धन और

यश मिलता है, उन्हीं का धर्म सुरक्षित रहता है, उन्हीं को स्त्री, पुत्र और सेवक मिलते हैं। १५। हे देवि, जिन पुण्यात्माओं पर आप प्रसन्न रहती हैं, वे आपकी दया से, हमेशा बड़ी श्रद्धा से नित्य-नैमित्तिक धर्म-कर्म करते हैं। और आपकी दया से स्वर्ग को

धन्यास्त एव निभृतात्मजभृत्यदारा येषां सदाभ्युदयदा भवती प्रसन्ना ॥ १५ ॥ धर्म्याणि देवि सकलानि सदैव कर्माण्यत्यादृतः प्रतिदिनं सुकृती करोति। स्वर्गं प्रयाति च ततो भवतीप्रसादाल्लोकत्रयेऽपि फलदा ननु देवि तेन १६॥ दुर्गे स्मृता हरसि भीतिमशेषजन्तोः स्वस्थैः स्मृता मति-मतीव शुभां ददासि। दारिद्र्यदुःखभयहारिणि का त्वद-

जाते हैं। इसलिए तीनों लोकों में फल देनेवाली आप ही हैं। १६। हे देवि, संकट पड़ने पर जो आपका स्मरण करते हैं, उनका भय आप दूर कर देती हैं, और जो एकाग्रचित्त होकर आपका स्मरण करते हैं, उनको आप अच्छी बुद्धि देती हैं। आप

दरिद्रता, दुःख और भय का नाश करनेवाली हैं। आपके सिवा सबका उपकार करने के लिए दयावान् दूसरा कोई नहीं है। १७। हे देवि, महिषासुर आदि के मरने पर संसार सुखी होगा, और नरक में जाने के लिए पाप करनेवाले दानव युद्ध में प्राण

न्या सर्वोपकारकरणाय सदार्द्रचित्ता ॥ १७ ॥ एभिर्हतै-
र्जगदुपैति सुखं तथैते कुर्वन्तु नाम नरकाय चिराय पापम्।
संग्राममृत्युमधिगम्य दिवं प्रयान्तु मत्वेति नूनमहिता-
न्विनिहंसि देवि ॥ १८ ॥ दृष्ट्वैव किं न भवती प्रकरोति
भस्म सर्वासुरानरिषु यत्प्रहिणोषि शस्त्रम्। लोकान्प्रयान्तु

त्यागकर स्वर्ग प्राप्त करेंगे. इन्हीं दो कारणों से आपने शत्रुओं को मार डाला। १८। हे देवि, आपकी कोप-दृष्टि से हा दैत्य भस्म हो सकते थे, शस्त्र चलाने की कोई आवश्यकता न थी। किन्तु आपने शस्त्र इसलिए चलाया कि आपके शस्त्र के प्रहार से

निष्पाप होकर वे स्वर्ग को जायँ। इससे ज्ञात होता है कि शत्रुओं पर भी आप दया करती हैं। १९। हे देवि, असुरों की आँखें जो आपके शूल और भयानक खड्ग की चमक से न फूटीं, इसका यह कारण है कि वे लोग आपका मुख देखते थे, जो

रिपवोऽपि हि शस्त्रपूता इत्थं मतिर्भवति तेष्वपि तेऽतिसाध्वी ॥ १९ ॥ खड्गप्रभानिकरविस्फुरणैस्तथोग्रैः शूलाग्रकान्तिनिवहेन दृशोऽसुराणाम्। यन्नागता विलयमंशुमदिन्दुखण्डयोग्याननं तव विलोकयतां तदेतत् ॥ २० ॥ दुर्वृत्तवृत्तशमनं तव देवि शीलं रूपं तथैतदविचिन्त्यमतुल्यमन्यैः। वीर्यं च हन्तृहृतदेवपराक्रमाणां वैरिष्वपि

अमृतकिरणयुक्त अर्धचन्द्र के समान है। २०। हे देवि, आप अचिन्त्य रूप और अनुपम हैं। आपका स्वभाव है कि आप दुष्टों के दुराचार का विनाश कर देती हैं। इसी से आपने देवताओं को सतानेवाले असुरों को अपने पराक्रम से

मार डाला । इस प्रकार आपने शत्रुओं पर भी दया की है । २१ । हे देवि, आपके पराक्रम की उपमा किससे दी जा सकती है ? और शत्रुओं को भय देनेवाला तथा दूसरों का मन हरनेवाला आपका जैसा रूप किसका है ? हे वरदे, चित्त

प्रकटितैव दया त्वयेत्थम् ॥ २१ ॥ केनोपमा भवतु तेऽस्य पराक्रमस्य रूपं च शत्रुभयकार्यतिहारि कुत्र । चित्ते कृपा समरनिष्ठुरता च दृष्टा त्वय्येव देवि वरदे भुवनत्रयेऽपि २२॥ त्रैलोक्यमेतदखिलं रिपुनाशनेन त्रातं त्वया समरमूर्द्धनि तेऽपि हत्वा । नीता दिवं रिपुगणा भयमप्यपास्तमस्माक-

में दया और युद्ध में निठुरता, यह दो बातें एक साथ आपमें ही देखी जाती हैं, आपके सिवा तीनों लोकों में ऐसा कोई नहीं है । २२ । हे देवि, आपने शत्रुओं का विनाश करके तीनों लोकों की रक्षा की, और युद्ध में मारकर शत्रुओं को स्वर्ग लोक प्राप्त

कराया, तथा हम लोगों का भय दूर किया । आपको प्रणाम है । २३ । हे अम्बिके, आप अपने शूल से, खड्ग से, घंटा के शब्द से और धनुष की ज्या के शब्द से हम लोगों की रक्षा कीजिए । २४ । हे चंडिके, अपने शूल को घुमाकर पूर्व, पश्चिम, दक्षिण,

मुन्मदसुरारिभवं नमस्ते ॥ २३ ॥ शूलेन पाहि नो देवि पाहि खड्गेन चाम्बिके। घण्टास्वनेन नः पाहि चापज्यानिः-स्वनेन च ॥ २४ ॥ प्राच्यां रक्ष प्रतीच्यां च चण्डिके रक्ष दक्षिणे । भ्रामणेनात्मशूलस्य उत्तरस्यां तथेश्वरि ॥ २५ ॥ सौम्यानि यानि रूपाणि त्रैलोक्ये विचरन्ति ते। यानि चात्यन्तघोराणि तै रक्षास्मांस्तथा भुवम् ॥ २६ ॥ खड्ग-

उत्तर, चारों दिशाओं में तथा आग्नेय आदि चारों कोनों में हम लोगों की रक्षा कीजिए । २५ । अपने सौम्य-रूपों से, जिनसे लोकों की सृष्टि करती हैं और अति भयानक रूपों से जिनसे लोकों का संहार करती हैं, हमारी तथा सम्पूर्ण जगत् की रक्षा

कीजिए । २६ । हे अम्बिके, आपके हाथ में खड्ग, शूल और गदा आदि जितने अस्त्र हैं, उनसे हम लोगों की चारों ओर से रक्षा कीजिए । २७ । मेधा ऋषि कहते हैं—हे सुरथ, देवताओं ने जब नन्दन वन के दिव्य फूलों और चन्दन आदि सुगन्धित वस्तुओं से

शूलगदादीनि यानि चास्त्राणि तेऽम्बिके । करपल्लव-
सङ्गीनि तैरस्मान् रक्ष सर्वतः ॥ २७ ॥ ऋषिरुवाच ॥२८॥
एवं स्तुता सुरैर्दिव्यैः कुसुमैर्नन्दनोद्भवैः । अर्चिता जगतां
धात्री तथा गन्धानुलेपनैः ॥ २९ ॥ भक्त्या समस्तैस्त्रिदशै-
र्दिव्यैर्धूपैस्तु धूपिता । प्राह प्रसादसुमुखी समस्तान्प्रण-
तान् सुरान् ॥ ३० ॥ देव्युवाच ॥ ३१ ॥ व्रियतां त्रिदशाः

पूजन तथा दिव्य धूप से धूपित करके बड़ी भक्ति से इस प्रकार देवी की स्तुति की, तब जगद्धात्री भगवती प्रसन्न होकर बोलीं । २८–३० । देवी ने कहा—हे देवताओ, जो

तुम्हारी इच्छा हो, वह वर माँगो । ३१–३२ । देवता बोले—हे भगवती, आपने हम लोगों की सब इच्छाएँ पूरी कर दीं, अब कुछ बाकी नहीं है । ३३–३४ । क्योंकि हम लोगों के शत्रु महिषासुर को आपने मार डाला ; किन्तु हे महेश्वरी, यदि आप वर

सर्वं यदस्मत्तोऽभिवाञ्छितम् ॥ ३२ ॥ देवा ऊचुः ॥ ३३ ॥ भगवत्या कृतं सर्वं न किञ्चिदवशिष्यते ॥ ३४ ॥ यदयं निहतः शत्रुरस्माकं महिषासुरः । यदि चापि वरो देयस्त्व-यास्माकं महेश्वरि ॥ ३५ ॥ संस्मृता संस्मृता त्वन्नो हिंसेथाः परमापदः । यश्च मर्त्यः स्तवैरेभिस्त्वां स्तोष्यत्यमला-नने ॥ ३६ ॥ तस्य वित्तर्द्धिविभवैर्धनदारादिसम्पदाम् ।

देना चाहती हैं तो जब कभी हम लोग आपका स्मरण करें तब आप हमारी विपत्तियाँ दूर कर दें और जो कोई मनुष्य इन स्तोत्रों से आपकी स्तुति करे । ३५–३६ । उसके धन,

ऐश्वर्य, स्त्री और पुत्र आदि की वृद्धि हो। हे अम्बिके, हम लोगों पर सदा प्रसन्न रहिए। ३७। ऋषि कहते हैं—इस प्रकार अपने और सम्पूर्ण जगत् के लिए देवताओं के प्रार्थना करने पर भद्रकाली प्रसन्न होकर 'एवमस्तु' कहकर अन्तर्धान हो

वृद्धयेऽस्मत्प्रसन्ना त्वं भवेथाः सर्वदाम्बिके ॥ ३७ ॥ ऋषिरुवाच ॥ ३८ ॥ इति प्रसादिता देवैर्जगतोऽर्थे तथात्मनः। तथेत्युक्त्वा भद्रकाली बभूवान्तर्हिता नृप ॥ ३९ ॥ इत्येतत्कथितं भूप सम्भूता सा यथा पुरा। देवी देवशरीरेभ्यो जगत्त्रयहितैषिणी ॥ ४० ॥ पुनश्च गौरीदेहात्सा समुद्भूता यथाभवत्। वधाय दुष्टदैत्यानां तथा शुम्भनिशु-

गई। ३८—३९। हे राजन्, तीनों लोकों का हित करनेवाली भगवती जिस प्रकार देवताओं के शरीर से उत्पन्न हुई, वह वृत्तान्त हमने कहा। ४०। उसके बाद फिर जिस प्रकार देवताओं का उपकार करनेवाली देवी शुम्भ-निशुम्भ आदि दुष्ट दैत्यों को मारने

और सब लोकों की रक्षा करने के लिए गौरी की देह से उत्पन्न हुई, वह वृत्तान्त भी विस्तार के साथ कहते हैं, सुनो। ४१–४२।

म्भयोः ॥ ४१ ॥ रक्षणाय च लोकानां देवानामुपकारिणी।
तच्छृणुष्व मयाख्यातं यथावत्कथयामि ते ॥ ४२ ॥

इति श्रीमार्कण्डेयपुराणे सावर्णिके मन्वन्तरे देवीमाहात्म्ये शक्रादिस्तुतिर्नाम चतुर्थोऽध्यायः ॥ ४ ॥
उवाच ५ अर्ध० २ श्लो० ३५ मं० ४२ एवमादितः २५९

अथ ध्यानम् ॥

घण्टाशूलहलानि शङ्खमुसले चक्रं धनुः सायकं।
हस्ताब्जैर्दधतीं घनान्तविलसच्छीतांशुतुल्यप्रभाम् ।
गौरीदेहसमुद्भवां त्रिजगतामाधारभूतां महा-
पूर्वामत्र सरस्वतीमनुभजे शुम्भादिदैत्यार्दिनीम् ५

ॐ अस्य श्रीउत्तमचरित्रस्य रुद्रऋषिः महासरस्वती देवता अनुष्टप्छन्दः भीमा शक्तिः भ्रामरी बीजं सूर्यस्तत्त्वं सामवेदस्वरूपं महासरस्वतीप्रीत्यर्थे उत्तमचरित्रजपे विनियोगः ॥ ३ ॥

मेधा ऋषि कहते हैं—हे सुरथ, पूर्व समय में शुम्भ-निशुम्भ दो असुरों ने अपने बल और अहंकार से इन्द्र का राज्य तथा सब देवताओं के यज्ञ-भाग छीनकर तीनों लोकों को अपने वश में कर लिया था। १-२। उन दोनों असुरों ने सूर्य, चन्द्रमा, कुबेर, यम, वरुण, पवन और

ऋषिरुवाच ॥ १ ॥ पुरा शुम्भनिशुम्भाभ्यामसुराभ्यां शचीपतेः। त्रैलोक्यं यज्ञभागाश्च हृता मदबलाश्रयात् ॥२॥ तावेव सूर्यतां तद्वदधिकारं तथैन्दवम्। कौबेरमथ याम्यं च चक्राते वरुणस्य च ॥ ३ ॥ तावेव पवनर्द्धिं च चक्रतुर्वह्निकर्म च। ततो देवा विनिर्धूता भ्रष्टराज्याः पराजिताः ॥४॥ हृताधिकारास्त्रिदशास्ताभ्यां सर्वे निराकृताः। महासुराभ्यां तां देवीं संस्मरन्त्यपराजिताम् ॥ ५ ॥ तयास्माकं वरो

अग्नि के भी अधिकार छीन लिये और देवताओं को परास्त करके राज्य से निकाल दिया ३-४। तब असुरों के डर से काँपते हुए देवता अपराजिता देवी का इस प्रकार स्मरण करने लगे।५।

देवी ने हम लोगों को वर दिया था कि विपत्ति पड़ने पर जब हमारा स्मरण करोगे, तब हम उसी समय तुम्हारी सब विपत्तियाँ दूर कर देंगी। यह सोचकर देवता हिमालय पर्वत पर जाकर देवी विष्णुमाया की स्तुति करने लगे। ६-७। देवताओं ने

दत्तो यथापत्सु स्मृताखिलाः। भवतां नाशयिष्यामि तत्क्षणात्परमापदः ॥ ६ ॥ इति कृत्वा मतिं देवा हिमवन्तं नगेश्वरम्। जग्मुस्तत्र ततो देवीं विष्णुमायां प्रतुष्टुवुः ॥७॥ देवा ऊचुः ॥ ८ ॥ नमो देव्यै महादेव्यै शिवायै सततं नमः। नमः प्रकृत्यै भद्रायै नियताः प्रणताःस्म ताम् ॥ ९ ॥ रौद्रायै नमो नित्यायै गौर्यै धात्र्यै नमोनमः। ज्योत्स्नायै चेन्दु-

कहा—देवी, महादेवी और शिवा को हमारा प्रणाम है। प्रकृति देवी और भद्रा देवी को हम लोग प्रणाम करते हैं। ८-९। रौद्रा, नित्या, गौरी, धात्री, ज्योत्स्ना, इन्दुरूपिणी

और परमानन्दमयी देवी को निरन्तर नमस्कार है। १०। कल्याण करनेवाली, वृद्धि और सिद्धि देनेवाली भगवती को तथा राक्षसों और राजाओं की लक्ष्मी और शिवशक्ति शर्वाणी को हम लोग बार-बार प्रणाम करते हैं। ११। संसार-सागर से पार करनेवाली

रूपिण्यै सुखायै सततं नमः ॥ १० ॥ कल्याण्यै प्रणतां वृद्ध्यै सिद्ध्यै कुर्मो नमोनमः। नैर्ऋत्यै भूभृतां लक्ष्म्यै शर्वाण्यै ते नमोनमः ॥ ११ ॥ दुर्गायै दुर्गपारायै सारायै सर्वकारिण्यै। ख्यात्यै तथैव कृष्णायै धूम्रायै सततं नमः ॥ १२ ॥ अतिसौम्यातिरौद्रायै नतास्तस्यै नमोनमः।

दुर्गा को, सम्पूर्ण जगत् की सृष्टि करनेवाली और प्रकृति-पुरुष में भेदज्ञानरूपिणी देवी को तथा काली और धूम्रा (जिनका रूप धुआँ का-सा है) को निरन्तर प्रणाम है। १२। अतिसौम्या, अर्थात् विद्या-रूप से संसार का दुःख नष्ट करनेवाली तथा

अतिरौद्रा, अर्थात् अविद्या-रूप से संसार में प्रवृत्ति करानेवाली देवी को विनीतभाव से बार-बार प्रणाम है। संसार की प्रतिष्ठा-रूपिणी और कार्यरूपिणी देवी को हम लोग प्रणाम करते हैं। १३। जो देवी सब प्राणियों में विष्णुमाया नाम से कही जाती हैं,

नमो जगत्प्रतिष्ठायै देव्यै कृत्यै नमोनमः ॥ १३ ॥ या देवी सर्वभूतेषु विष्णुमायेति शब्दिता । नमस्तस्यै ॥ १४ ॥ नमस्तस्यै ॥ १५ ॥ नमस्तस्यै नमोनमः ॥ १६ ॥ या देवी सर्वभूतेषु चेतनेत्यभिधीयते । नमस्तस्यै ॥ १७ ॥ नमस्तस्यै ॥ १८ ॥ नमस्तस्यै नमोनमः ॥ १९ ॥ या देवी सर्वभूतेषु बुद्धिरूपेण संस्थिता । नमस्तस्यै ॥ २० ॥ नमस्तस्यै ॥ २१ ॥

उनको हम लोग बार-बार प्रणाम करते हैं। १४–१५। जो देवी सब प्राणियों में चेतना नाम से कही जाती हैं, उनको हम लोग बार-बार प्रणाम करते हैं। १७–१९। जो देवी सब प्राणियों में बुद्धि-रूप से स्थित हैं उनको हम लोग बार-बार प्रणाम क[illegible]

टीका [illegible]

हैं। २०–२२। जो देवी सब प्राणियों में निद्रा-रूप से स्थित हैं, उनको हम लोग बार-बार प्रणाम करते हैं। २३–२५। जो देवी सब प्राणियों में क्षुधा-रूप से स्थित हैं,

नमस्तस्यै नमोनमः ॥ २२ ॥ या देवी सर्वभूतेषु निद्रारूपेण संस्थिता। नमस्तस्यै ॥ २३ ॥ नमस्तस्यै ॥ २४ ॥ नमस्तस्यै नमोनमः ॥ २५ ॥ या देवी सर्वभूतेषु क्षुधारूपेण संस्थिता। नमस्तस्यै ॥ २६ ॥ नमस्तस्यै ॥ २७ ॥ नमस्तस्यै नमोनमः ॥ २८ ॥ या देवी सर्वभूतेषु छायारूपेण संस्थिता। नमस्तस्यै ॥ २९ ॥ नमस्तस्यै ॥ ३० ॥ नमस्तस्यै नमोनमः ॥ ३१ ॥ या देवी सर्वभूतेषु शक्तिरूपेण

उनको हम लोग बार-बार प्रणाम करते हैं। २६–२८। जो देवी सब प्राणियों में छाया रूप से स्थित हैं, उनको हम लोग बार-बार प्रणाम करते हैं। २९–३१। जो देवी सब

प्राणियों में शक्ति-रूप से स्थित हैं, उनको हम लोग बार-बार प्रणाम करते हैं । ३२–३४ ।
जो देवी सब प्राणियों में तृष्णा-रूप से स्थित हैं, उनको हम लोग बार-बार प्रणाम

संस्थिता । नमस्तस्यै ॥ ३२ ॥ नमस्तस्यै ॥ ३३ ॥ नमस्तस्यै नमोनमः ॥ ३४ ॥ या देवी सर्वभूतेषु तृष्णारूपेण संस्थिता । नमस्तस्यै ॥ ३५ ॥ नमस्तस्यै ॥ ३६ ॥ नमस्तस्यै नमोनमः ॥ ३७ ॥ या देवी सर्वभूतेषु क्षान्तिरूपेण संस्थिता । नमस्तस्यै ॥ ३८ ॥ नमस्तस्यै ॥ ३९ ॥ नमस्तस्यै नमोनमः ॥ ४० ॥ या देवी सर्वभूतेषु जातिरूपेण संस्थिता । नमस्तस्यै ॥ ४१ ॥ नमस्तस्यै ॥ ४२ ॥ नमस्तस्यै

करते हैं । ३५–३७ । जो देवी सब प्राणियों में क्षमा-रूप से स्थित हैं, उनको हम लोग बार-बार प्रणाम करते हैं । ३८–४० । जो देवी सब प्राणियों में जाति-रूप से स्थित हैं,

उनको हम लोग बार-बार प्रणाम करते हैं । ४१—४३ । जो देवी सब प्राणियों में लज्जा-
रूप से स्थित हैं, उनको हम लोग बार-बार प्रणाम करते हैं । ४४--४६ । जो देवी सब

नमोनमः ॥ ४३ ॥ या देवी सर्वभूतेषु लज्जारूपेण संस्थिता ।
नमस्तस्यै ॥ ४४ ॥ नमस्तस्यै ॥ ४५ ॥ नमस्तस्यै नमो-
नमः ॥ ४६ ॥ या देवी सर्वभूतेषु शान्तिरूपेण संस्थिता ।
नमस्तस्यै ॥ ४७ ॥ नमस्तस्यै ॥ ४८ ॥ नमस्तस्यै नमो-
नमः ॥ ४९ ॥ या देवी सर्वभूतेषु श्रद्धारूपेण संस्थिता ।
नमस्तस्यै ॥ ५० ॥ नमस्तस्यै ॥ ५१ ॥ नमस्तस्यै नमो-
नमः ॥ ५२ ॥ या देवी सर्वभूतेषु कान्तिरूपेण संस्थिता ।

प्राणियों में शान्ति-रूप से स्थित हैं, उनको हम लोग बार-बार प्रणाम करते हैं ।४७—४९।
जो देवी सब प्राणियों में श्रद्धा-रूप से स्थित हैं, उनको हम लोग बार-बार प्रणाम
करते हैं । ५०—५२ । जो देवी सब प्राणियों में कान्ति-रूप से स्थित हैं, उनको

हम लोग बार-बार प्रणाम करते हैं। ५३—५५। जो देवी सब प्राणियों में लक्ष्मी-रूप से स्थित हैं, उनको हम लोग बार-बार प्रणाम करते हैं। ५६—५८। जो देवी सब

नमस्तस्यै ॥ ५३ ॥ नमस्तस्यै ॥ ५४ ॥ नमस्तस्यै नमो-
नमः ॥ ५५ ॥ या देवी सर्वभूतेषु लक्ष्मीरूपेण संस्थिता।
नमस्तस्यै ॥ ५६ ॥ नमस्तस्यै ॥ ५७ ॥ नमस्तस्यै नमो-
नमः ॥ ५८ ॥ या देवी सर्वभूतेषु वृत्तिरूपेण संस्थिता।
नमस्तस्यै ॥ ५९ ॥ नमस्तस्यै ॥ ६० ॥ नमस्तस्यै नमो-
नमः ॥ ६१ ॥ या देवी सर्वभूतेषु स्मृतिरूपेण संस्थिता।
नमस्तस्यै ॥ ६२ ॥ नमस्तस्यै ॥ ६३ ॥ नमस्तस्यै नमो-

प्राणियों में वृत्ति-रूप से स्थित हैं, उनको हम लोग बार-बार प्रणाम करते हैं। ५९—६१। जो देवी सब प्राणियों में स्मृति-रूप से स्थित हैं, उनको हम लोग बार-बार

प्रणाम करते हैं। ६२–६४। जो देवी सब प्राणियों में दया-रूप से स्थित हैं, उनको हम लोग बार-बार प्रणाम करते हैं। ६५–६७। जो देवी सब प्राणियों में सन्तोष-रूप से

नमः ॥ ६४ ॥ या देवी सर्वभूतेषु दयारूपेण संस्थिता।
नमस्तस्यै ॥ ६५ ॥ नमस्तस्यै ॥ ६६ ॥ नमस्तस्यै नमो
नमः ॥ ६७ ॥ या देवी सर्वभूतेषु तुष्टिरूपेण संस्थिता।
नमस्तस्यै ॥ ६८ ॥ नमस्तस्यै ॥ ६९ ॥ नमस्तस्यै नमो-
नमः ॥ ७० ॥ या देवी सर्वभूतेषु मातृरूपेण संस्थिता।
नमस्तस्यै॥७१॥नमस्तस्यै॥७२॥ नमस्तस्यै नमोनमः७३

स्थित हैं, उनको हम लोग बार-बार प्रणाम करते हैं। ६८–७०। जो देवी सब प्राणियों में मातृ-रूप-से स्थित हैं, उनको हम लोग बार-बार प्रणाम करते हैं। ७१–७३।

जो देवी सब प्राणियों में भ्रान्ति-रूप से स्थित हैं, उनको हम लोग बार-बार प्रणाम करते हैं। ७४-७६। जो देवी सब इन्द्रियों की और संसारभर के प्राणियों की अधि-

या देवी सर्वभूतेषु भ्रान्तिरूपेण संस्थिता। नमस्तस्यै ॥ ७४ ॥ नमस्तस्यै ॥ ७५ ॥ नमस्तस्यै नमोनमः ॥ ७६ ॥ इन्द्रियाणामधिष्ठात्री भूतानां चाखिलेषु या। भूतेषु सततं तस्यै व्याप्तिदेव्यै नमोनमः ॥ ७७ ॥ चितिरूपेण या कृत्स्नमेतद् व्याप्य स्थिता जगत्। नमस्तस्यै॥७८॥नमस्तस्यै॥७९॥नमस्तस्यै नमोनमः॥८०॥

ष्ठात्री हैं और सब प्राणियों में निरंतर व्याप्त हैं, उनको हम लोग बार-बार प्रणाम करते हैं। ७७। जो देवी चैतन्य-रूप से सम्पूर्ण जगत् में व्याप्त हैं, उनको हम लोग बार-बार

प्रणाम करते हैं। ७८–८०। पूर्व समय में अभीष्ट फल पाने के लिये देवताओं ने जिनकी स्तुति की थी और देवराज इन्द्र ने बहुत दिनों तक जिनकी सेवा की थी; जो देवी मंगल का कारण हैं, वह हमलोगों का कल्याण करें और सब विपत्तियाँ दूर करें। ८१।

स्तुता सुरैः पूर्वमभीष्टसंश्रयात्तथा सुरेन्द्रेण दिनेषु सेविता। करोतु सा नः शुभहेतुरीश्वरी शुभानि भद्राण्यभिहन्तु चापदः ॥ ८१ ॥ या साम्प्रतं चोद्धतदैत्यतापितैरस्माभिरीशा च सुरैर्नमस्यते। या च स्मृता तत्क्षणमेव हन्ति नः सर्वापदो भक्तिविनम्रमूर्तिभिः॥ ८२॥ ऋषिरुवाच॥८३॥ एवं स्तवादियुक्तानां देवानां तत्र पार्वती। स्नातुमभ्या-

प्रबल दैत्यों से पीड़ित होकर, हम लोग इस समय जिनको प्रणाम करते हैं, जो स्मरण करते ही हम लोगों की विपत्तियाँ दूर करती हैं, वह देवी हमारी सब विपत्तियों का नाश करें। ८२। मेधा ऋषि कहते हैं—राजन्, इस प्रकार देवताओं के स्तुति करने पर

पार्वती प्रसन्न होकर गंगा स्नान के बहाने देवताओं के सामने प्रकट होकर बोलीं—तुम लोग यहाँ किसकी स्तुति करते हो। उसी समय पार्वती की देह से उत्पन्न होकर शिवा देवी ने उत्तर दिया—शुम्भ-निशुम्भ ने इनको युद्ध में परास्त करके राज्य से निकाल

ययौ तोये जाह्नव्या नृपनन्दन ॥ ८४ ॥ साब्रवीत्तान् सुरान् सुभ्रूर्भवद्भिः स्तूयतेऽत्र का। शरीरकोशतश्चास्याः समुद्भूताऽब्रवीच्छिवा ॥ ८५ ॥ स्तोत्रं ममैतत् क्रियते शुम्भ-दैत्यनिराकृतैः। देवैः समस्तैः समरे निशुम्भेन पराजितैः ॥ ८६ ॥ शरीरकोशाद्यत्तस्याः पार्वत्या निःसृताम्बिका। कौशिकीति समस्तेषु ततो लोकेषु गीयते ॥ ८७ ॥

दिया है, इसलिए यह सब देवता यहाँ एकत्र होकर हमारी स्तुति करते हैं। ८३–८६। शिवा देवी पार्वती के शरीर-कोश से निकली थीं इसलिए लोकों में कौशिकी नाम से

प्रसिद्ध हुई । ८७ । पार्वती की देह से जब कौशिकी निकल आईं, तब पार्वती काली हो गईं और कालिका नाम से प्रसिद्ध होकर हिमालय पर्वत पर रहने लगीं । ८८ । दैवयोग से शुम्भ-निशुम्भ के नौकरों ने, जिनका नाम चण्ड-मुण्ड था, उन परम सुन्दरी

तस्यां विनिर्गतायां तु कृष्णाभूत्सापि पार्वती । कालिकेति समाख्याता हिमाचलकृताश्रया ॥ ८८ ॥ ततोऽम्बिकां परं रूपं बिभ्राणां सुमनोहरम् । ददर्श चण्डो मुण्डश्च भृत्यौ शुम्भनिशुम्भयोः ॥ ८९ ॥ ताभ्यां शुम्भाय चाख्याता अतीव सुमनोहरा । काप्यास्ते स्त्री महाराज भासयन्ती हिमाचलम् ॥ ९० ॥ नैव तादृक् क्वचिद्रूपं दृष्टं

अम्बिका को देखा । ८९ । उन दोनों ने जाकर शुम्भ से कहा—महाराज, एक परम सुन्दरी स्त्री हिमालय पर्वत पर बैठी है । वह अपने तेज से उस पर्वत को प्रकाशित कर रही है । ९० । हे असुरेश्वर, वैसा सुन्दर रूप आज तक किसी ने कहीं नहीं देखा ।

आप मालूम कीजिए कि वह देवी कौन है और उसे ग्रहण कीजिए । ६१ । वह बहुत सुन्दरी है, सुन्दरी स्त्रियों में रत्न-रूप है, वह अपनी कान्ति से सब दिशाओं को प्रकाशित कर रही है । आप चलकर उसे देखिए । ६२ । हे प्रभो, तीनों लोकों में जितने

केनचिदुत्तमम् । ज्ञायतां काप्यसौ देवी गृह्यतां चासुरेश्वर ॥ ६१ ॥ स्त्रीरत्नमतिचार्वङ्गी द्योतयन्ती दिशस्त्विषा । सा तु तिष्ठति दैत्येन्द्र तां भवान्द्रष्टुमर्हति ॥ ६२ ॥ यानि रत्नानि मणयो गजाश्वादीनि वै प्रभो । त्रैलोक्ये तु समस्तानि साम्प्रतं भान्ति ते गृहे ॥ ६३ ॥ ऐरावतं समानीतो गजरत्नं पुरन्दरात् । पारिजाततरुश्चायं तथैवोच्चैःश्रवा

रत्न, मणि, हाथी और घोड़े हैं, वे सब इस समय आपके घर में मौजूद हैं । ६३ । आप हाथियों में श्रेष्ठ ऐरावत हाथी, घोड़ों में श्रेष्ठ उच्चैःश्रवा घोड़ा और पारिजात वृक्ष इन्द्र

से छीन लाये । ६४ । ब्रह्मा का हंसयुक्त अद्भुत विमान भी आपने बलपूर्वक लाकर घर में रक्खा है, जो अब तक मौजूद है । ६५ । महापद्म नामक निधि जो सब निधियों में श्रेष्ठ है, उसे भी आप कुबेर से छीन लाये । समुद्र ने डरकर फूले हुए कमलों की किंज-

हयः ॥ ६४ ॥ विमानं हंससंयुक्तमेतत्तिष्ठति तेऽङ्गने । रत्नभूतमिहानीतं यदासीद्वेधसोऽद्भुतम् ॥ ६५ ॥ निधिरेष महापद्मः समानीतो धनेश्वरात् । किञ्जल्किनीं ददौ चाब्धिर्मालामम्लानपङ्कजाम् ॥ ६६ ॥ छत्रं ते वारुणं गेहे काञ्चनस्रावि तिष्ठति । तथाऽयं स्यन्दनवरो यः पुरासीत्प्रजापतेः ॥ ६७ ॥ मृत्योरुत्क्रान्तिदा नाम शक्तिरीश त्वया हृता ।

ल्किनी नाम की माला आपको दे दी । ६६ । वरुण का छाता, जो सुवर्ण के समान चमकता है, वह भी आपके घर में मौजूद है । प्रजापति के पास जो उत्तम रथ था, वह भी आपके घर में है । ६७ । यमराज की उत्क्रान्तिदा (मौत देनेवाली) शक्ति भी आप

छीन लाये । आपके भाई निशुम्भ ने वरुण का पाश छीनकर अपने घर में रक्खा है। ९८। जितने रत्न समुद्र से उत्पन्न हुए हैं, वे सब निशुम्भ के घर में हैं। अग्नि ने डर के मारे आपको पहनने के लिए दो दिव्य वस्त्र दिये हैं । ९९ । हे दैत्येन्द्र, इसी

पाशः सलिलराजस्य भ्रातुस्तव परिग्रहे ॥ ९८ ॥ निशुम्भ-स्याब्धिजाताश्च समस्ता रत्नजातयः । वह्निरपि ददौ तुभ्यमग्निशौचे च वाससी ॥ ९९ ॥ एवं दैत्येन्द्र रत्नानि समस्तान्याहृतानि ते। स्त्रीरत्नमेषा कल्याणी त्वया कस्मान्न गृह्यते ॥ १०० ॥ ऋषिरुवाच ॥ १०१ ॥ निशम्येति वचः शुम्भः स तदा चण्डमुण्डयोः । प्रेषयामास सुग्रीवं दूतं

तरह और भी सब रत्न आप छीन लाये; फिर इस स्त्री-रत्न को क्यों नहीं ग्रहण करते ? ।१००। मेधा ऋषि कहते हैं—राजन्, चण्ड-मुण्ड की यह बात सुनकर शुम्भ ने सुग्रीव

नाम का एक दूत देवी के पास भेजा और उससे कहा—मेरी यह आज्ञा उसको सुनाओ, और जिस तरह वह राज़ी होकर चली आवे, उसी तरह ले आओ। १०१–१०३। वह दूत हिमालय पर देवी के पास जाकर कोमल और मधुर वचन बोला। १०४। दूत ने

देव्या महासुरम् ॥ १०२ ॥ इति चेति च वक्तव्या सा गत्वा वचनान्मम। यथा चाभ्येति सम्प्रीत्या तथा कार्यं त्वया लघु ॥ १०३ ॥ स तत्र गत्वा यत्रास्ते शैलोद्देशेऽतिशोभने। सा देवी तां ततः प्राह श्लक्ष्णं मधुरया गिरा ॥ १०४ ॥ दूत उवाच ॥ १०५ ॥ देवि दैत्येश्वरः शुम्भस्त्रैलोक्ये परमेश्वरः। दूतोऽहं प्रेषितस्तेन त्वत्सकाशमिहागतः ॥ १०६ ॥ अव्याहताज्ञः सर्वासु यः सदा देवयोनिषु। निर्जिताखिल-

कहा—हे देवि, दैत्यों के राजा शुम्भ, जो इस समय तीनों लोकों के स्वामी हैं, उनका भेजा हुआ मैं आपके पास आया हूँ। १०५–१०६। उन्होंने सब देवताओं को जीत

लिया है, कोई देवता उनकी आज्ञा नहीं टाल सकता। उनका सन्देश मैं आपसे कहता हूँ, सुनिए। १०७। उन्होंने कहा है, हम तीनों लोकों के राजा हैं। सब देवता हमारे वश में हैं। देवताओं के यज्ञ-भाग हम्हीं लेते हैं। १०८। तीनों लोकों में, जितने अच्छे-

दैत्यारिः स यदाह शृणुष्व तत् ॥ १०७ ॥ मम त्रैलोक्यमखिलं मम देवा वशानुगाः। यज्ञभागानहं सर्वानुपाश्नामि पृथक् पृथक् ॥ १०८ ॥ त्रैलोक्ये वररत्नानि मम वश्यान्यशेषतः। तथैव गजरत्नानि हृत्वा देवेन्द्रवाहनम् ॥ १०९ ॥ क्षीरोदमथनोद्भूतमश्वरत्नं ममामरैः। उच्चैःश्रवससंज्ञं तत्प्रणिपत्य समर्पितम् ॥ ११० ॥ यानि चान्यानि देवेषु गन्धर्वे-

अच्छे रत्न हैं, वे सब हमारे पास हैं। हाथियों में श्रेष्ठ ऐरावत हाथी हमने इन्द्र से छीन लिया है। १०९। समुद्र मथने से जो उच्चैःश्रवा घोड़ा निकला था, उसे भी देवताओं ने हमें प्रणाम करके दे दिया है। ११०। देवताओं, गन्धर्वों और नागों के पास जितने

रत्न थे, वे सब इस समय हमारे पास हैं। १११। हम तुमको सब स्त्रियों में रत्नस्वरूप समझते हैं, इसलिए तुम हमारे पास चली आओ; क्योंकि इस समय सब रत्नों का भोग हम्हीं करते हैं। ११२। तुम चाहे हमारे पास रहो, या हमारे छोटे भाई महापराक्रमी

षूरगेषु च। रत्नभूतानि भूतानि तानि मय्येव शोभने ॥१११॥ स्त्रीरत्नभूतां त्वां देवि लोके मन्यामहे वयम्। सा त्वमस्मा-नुपागच्छ यतो रत्नभुजो वयम् ॥ ११२ ॥ मां वा ममानुजं वापि निशुम्भमुरुविक्रमम्। भज त्वं चञ्चलापाङ्गि रत्न-भूतासि वै यतः ॥ ११३ ॥ परमैश्वर्यमतुलं प्राप्स्यसे मत्प-रिग्रहात्। एतद्बुद्ध्या समालोच्य मत्परिग्रहतां व्रज ११४

निशुम्भ के पास; जहाँ तुम्हारी इच्छा हो आकर रहो; क्योंकि तुम रत्न-रूप हो। ११३। हमारे पास रहोगी तो तुमको अतुल ऐश्वर्य प्राप्त होगा। इन बातों का विचार करके तुम

हमारी स्त्री बनो। ११४। मेधा ऋषि कहते हैं—दूत के यह कहने पर जगद्धात्री भगवती दुर्गा मुस्कराकर गम्भीर शब्द बोलीं ११५-११६। देवी ने कहा—तुमने जो कहा है, वह सब सत्य है, उसमें झूठ कुछ भी नहीं है। शुम्भ और निशुम्भ तीनों लोकों के राजा

ऋषिरुवाच॥ ११५॥ इत्युक्ता सा तदा देवी गम्भीरान्तःस्मिता जगौ। दुर्गा भगवती भद्रा ययेदं धार्यते जगत् ११६॥ देव्युवाच॥ ११७॥ सत्यमुक्तं त्वया नात्र मिथ्या किञ्चित्त्वयोदितम्। त्रैलोक्याधिपतिः शुम्भो निशुम्भश्चापि तादृशः॥ ११८॥ किं त्वत्र यत्प्रतिज्ञातं मिथ्या तत्क्रियते कथम्। श्रूयतामल्पबुद्धित्वात्प्रतिज्ञा या कृता पुरा॥ ११९॥ यो मां जयति संग्रामे यो मे दर्पं व्यपोहति। यो मे प्रति-

हैं। ११७-११८। किन्तु मैंने जो प्रतिज्ञा की है, उसे कैसे मिथ्या करूँ। मैंने मूर्खता से जो प्रतिज्ञा कर ली है वह सुनो। ११९। जो युद्ध में मुझे जीत ले, जो मेरा दर्प तोड़

दे, अथवा जो मेरे समान बलवान् हो, वही मेरा पति होगा। १२०। इसलिए महासुर शुम्भ या निशुम्भ, दो में से कोई भी यहाँ आवे और मुझे युद्ध में जीतकर शीघ्र ब्याह ले। १२१। दूत ने कहा—हे देवि, हमारे सामने ऐसी घमंड की बात न कहो। तीनों

बलो लोके स मे भर्ता भविष्यति ॥ १२० ॥ तदा गच्छतु शुम्भोऽत्र निशुम्भो वा महासुरः। मां जित्वा किं चिरेणात्र पाणिं गृह्णातु मे लघु ॥ १२१ ॥ दूत उवाच ॥ १२२ ॥ अव- लिप्तासि मैवं त्वं देवि ब्रूहि ममाग्रतः। त्रैलोक्ये कः पुमाँ- स्तिष्ठेदग्रे शुम्भनिशुम्भयोः ॥ १२३ ॥ अन्येषामपि दैत्यानां सर्वे देवा न वै युधि। तिष्ठन्ति सम्मुखे देवि किं

लोकों में ऐसा समर्थ पुरुष कौन है, जो युद्ध में शुम्भ-निशुम्भ के सामने ठहर सके। १२२–१२३। उनसे युद्ध करना तो दूर रहा, दूसरे दैत्यों से भी देवता युद्ध नहीं कर

सकते। फिर तुम तो स्त्री हो और अकेली, कैसे उनसे युद्ध करोगा। १२४। जिन शुम्भ आदि असुरों से इन्द्र आदि सब देवता मिलकर भी युद्ध न कर सके, तुम स्त्री होकर उनके साथ कैसे युद्ध करोगी। १२५। मेरा कहा मानो, तुम शुम्भ-निशुम्भ के पास

पुनः स्त्री त्वमेकिका ॥ १२४ ॥ इन्द्राद्याः सकला देवास्तस्थुर्येषां न संयुगे। शुम्भादीनां कथं तेषां स्त्री प्रयास्यसि संमुखम् ॥ १२५ ॥ सा त्वं गच्छ मयैवोक्ता पार्श्वं शुम्भनिशुम्भयोः। केशाकर्षणनिर्धूतगौरवा मा गमिष्यसि १२६ देव्युवाच ॥ १२७ ॥ एवमेतद्बली शुम्भो निशुम्भश्चातिवीर्यवान्। किं करोमि प्रतिज्ञा मे यदनालोचिता

चलो; नहीं तो कोई असुर आवेगा और तुम्हारा अपमान करके, तुम्हारे केश पकड़कर ले जायगा। १२६। देवी ने उत्तर दिया—सत्य है, शुम्भ-निशुम्भ ऐसे ही पराक्रमी हैं;

पर क्या करूँ, मैं पहले विना विचारे ऐसी प्रतिज्ञा कर चुकी हूँ। १२७-१२८। अब

पुरा ॥ १२८ ॥ स त्वं गच्छ मयोक्तं ते यदेतत्सर्वमादृतः।
तदाचक्ष्वाऽसुरेन्द्राय स च युक्तं करोतु यत् ॥ १२९ ॥

इति श्रीमार्कण्डेयपुराणे सावर्णिके मन्वन्तरे देवी-माहात्म्ये देव्या दूतसंवादो नाम पञ्चमोऽध्यायः ॥ ५ ॥
उवाच ९ अवदानं ६६ श्लो० ५४ मं० १२९ एव-मादितः ३८८

तुम जाओ और जो कुछ मैंने कहा है, वह सब असुरों के स्वामी शुम्भ से कहो। वह जो उचित समझेंगे सो करेंगे। १२९।

मेधा ऋषि कहते हैं—हे सुरथ, देवी की यह बातें सुनकर वह दूत क्रुद्ध होकर लौटा। उसने दैत्यराज शुम्भ के पास जाकर देवी की कही हुई सब बातें विस्तार-पूर्वक कह

अथ ध्यानम् ॥ नागाधीश्वरविष्टरां फणिफणोत्तंसोरु-
रत्नावलीं भास्वद्देहलतां दिवाकरनिभां नेत्रत्रयोद्भासिताम्।
मालाकुम्भकपालनीरजकरां चन्द्रार्धचूडां परां सर्वज्ञेश्वर-
भैरवाङ्कनिलयां पद्मावतीं चिन्तये ॥ ६ ॥

ऋषिरुवाच ॥ १ ॥ इत्याकर्ण्य वचो देव्याः स दूतोऽ-
मर्षपूरितः। समाचष्ट समागम्य दैत्यराजाय विस्तरात्॥२॥
तस्य दूतस्य तद्वाक्यमाकर्ण्यासुरराट् ततः। सक्रोधः प्राह

सुनाईं। १-२। दूत की बात सुनते ही असुरराज शुम्भ कुपित होकर सेनापति धूम्र-

लोचन से बोला—हे धूम्रलोचन, तुम अपनी सेना लेकर शीघ्र जाओ और उस दुष्टा को बलपूर्वक केश पकड़कर ले आओ। ३–४। यदि कोई उसके बचाने का उद्योग करे,

दैत्यानामधिपं धूम्रलोचनम् ॥ ३ ॥ हे धूम्रलोचनाशु त्वं स्वसैन्यपरिवारितः। तामानय बलाद्दुष्टां केशाकर्षणविह्वलाम् ॥ ४ ॥ तत्परित्राणदः कश्चिद्यदि वोत्तिष्ठतेऽपरः। स हन्तव्योऽमरो वापि यक्षो गन्धर्व एव वा ॥ ५ ॥ ऋषिरुवाच ॥ ६ ॥ तेनाज्ञप्तस्ततः शीघ्रं स दैत्यो धूम्रलोचनः। वृतः षष्ट्या सहस्राणामसुराणां द्रुतं ययौ ॥ ७ ॥ स दृष्ट्वा

चाहे वह देवता हो, चाहे यक्ष या गन्धर्व, उसे मार डालो। ५। ऋषि कहते हैं—शुम्भ की आज्ञा पाकर धूम्रलोचन साठ हजार असुर लेकर शीघ्रता से हिमालय पर्वत पर गया।

वहाँ देवी को देखकर ऊँचे स्वर से बोला—तुम शुम्भ-निशुम्भ के पास चलो। ६—८। यदि प्रसन्नता से मेरे स्वामी के पास नहीं चलोगी तो तुम्हारे केश पकड़कर बलपूर्वक ले जाऊँगा। ९। देवी ने कहा—तुम दैत्यराज की आज्ञा से सेना लेकर आये

तां ततो देवीं तुहिनाचलसंस्थिताम्। जगादोच्चैः प्रयाहीति मूलं शुम्भनिशुम्भयोः ॥ ८ ॥ न चेत्प्रीत्याद्य भवती मद्भर्तारमुपैष्यति। ततो बलान्नयाम्येष केशाकर्षणविह्वलाम् ९ ॥ देव्युवाच ॥ १० ॥ दैत्येश्वरेण प्रहितो बलवान् बलसंवृतः। बलान्नयसि मामेवं ततः किं ते करोम्यहम् ॥ ११ ॥ ऋषिरुवाच ॥ १२ ॥ इत्युक्तः सोऽभ्यधावत्तामसुरो धूम्रलोचनः।

हो और बलवान् भी हो। यदि बलपूर्वक मुझे ले जाओगे तो मैं क्या करूँगी। १०—११। ऋषि कहते हैं—देवी के यह कहने पर धूम्रलोचन क्रुद्ध होकर दौड़ा। तब अम्बिका ने

हूंकार करके उसे भस्म कर दिया। १२—१३। यह देखकर असुरों की सेना कुपित होकर देवी पर शक्ति, परशु और तीक्ष्ण बाण बरसाने लगे। १४। देवी का वाहन सिंह बड़े क्रोध से गरजकर गर्दन के बाल हिलाता हुआ असुरों की सेना में घुस गया। १५।

हूङ्कारेणैव तं भस्म सा चकाराम्बिका ततः ॥ १३ ॥ अथ क्रुद्धं महासैन्यमसुराणां तथाम्बिका। ववर्ष सायकैस्तीक्ष्णैस्तथा शक्तिपरश्वधैः ॥ १४ ॥ ततो धुतसटः कोपात्कृत्वा नादं सुभैरवम्। पपातासुरसेनायां सिंहो देव्याः स्ववाहनः ॥ १५ ॥ काँश्चित् करप्रहारेण दैत्यानास्येन चापरान्। आक्रान्त्या चाधरेणान्यान् संजघान महासुरान् ॥ १६ ॥ केषाञ्चित्पाटयामास नखैः कोष्ठानि केसरी।

उसने किसी को थप्पड़ से, किसी को मुँह के थपेड़ से, किसी को झपटने के वेग से और किसी को होठ से धक्का देकर मार डाला। १६। किसी का नख से पेट फाड़

डाला और किसी का सिर थप्पड़ मारकर धड़ से अलग कर दिया। १७। कितने ही
असुरों के सिर और बाहु काट डाला और कितनों के पेट फाड़कर रुधिर पी लिया।१८।
इस प्रकार देवी के वाहन सिंह ने क्रुद्ध होकर क्षणभर में असुरों की सेना का

तथा तलप्रहारेण शिरांसि कृतवान् पृथक् ॥ १७ ॥ विच्छि-
न्नबाहुशिरसः कृतास्तेन तथापरे । पपौ च रुधिरं कोष्ठा-
दन्येषां धुतकेसरः ॥ १८ ॥ क्षणेन तद्बलं सर्वं क्षयं नीतं
महात्मना । तेन केसरिणा देव्या वाहनेनातिकोपिना ॥ १९ ॥
श्रुत्वा तमसुरं देव्या निहतं धूम्रलोचनम् । बलञ्च क्षयितं
कृत्स्नं देवीकेसरिणा ततः ॥ २० ॥ चुकोप दैत्याधिपतिः
शुम्भः प्रस्फुरिताधरः । आज्ञापयामास च तौ चण्डमुण्डौ

संहार कर दिया। १९। देवी के हाथ से धूम्रलोचन का मरना और उनके वाहन सिंह
द्वारा सेना का विनाश सुनकर क्रोध के मारे दैत्यराज शुम्भ का अधर (नीचे का होठ)

काँपने लगा। उसने चण्ड मुण्ड को आज्ञा दी—हे चण्ड-मुण्ड, तुम बहुत बड़ी सेना लेकर जाओ और उस स्त्री को शीघ्र पकड़ लाओ। २०-२२। केश पकड़कर या बाँध

महासुरौ ॥ २१ ॥ हे चण्ड हे मुण्ड बलैर्बहुलैः परिवारितौ। तत्र गच्छत गत्वा च सा समानीयतां लघु ॥ २२ ॥ केशेष्वाकृष्य बद्ध्वा वा यदि वः संशयो युधि। तदाशेषायुधैः सर्वैरसुरैर्विनिहन्यताम् ॥ २३ ॥ तस्यां हतायां दुष्टायां सिंहे च विनिपातिते। शीघ्रमागम्यतां बद्ध्वा गृहीत्वा तामथाम्बिकाम् ॥ २४ ॥

इति श्रीमार्कण्डेयपुराणे सावर्णिके मन्वन्तरे देवीमाहा-

कर ले आना। यदि ऐसा न हो सके तो सब दैत्य मिलकर अस्त्रों से उसे मार डालें।२३। उस दुष्टा के मारे जाने पर उसके वाहन सिंह को भी मार डालना। किन्तु जहाँ तक हो सके उसे पकड़कर बाँधकर जीवित ले आना। २४।

त्म्ये शुम्भनिशुम्भसेनानीधूम्रलोचनवधो नाम षष्ठोऽ
ध्यायः॥ ६॥ उवाच ४ श्लो० २० मं० २४ एवमादितः ४१२

अथ ध्यानम् ॥

ध्यायेयं रत्नपीठे शुककलपठितं शृण्वतीं श्यामलाङ्गीं
न्यस्तैकाङ्घ्रिं सरोजैः शशिशकलधरां वल्लकीं वादयन्तीम्।
कह्लाराबद्धमालां नियमितविलसच्चूडिकां रक्तवस्त्रां
मातङ्गीं शङ्खपात्रां मधुरमधुमदां चित्रकोद्भासिभालाम् ७

ऋषिरुवाच॥ १ ॥ आज्ञप्तास्ते ततो दैत्याश्चण्डमुण्ड-

मेधा ऋषि कहते हैं—हे सुरथ, शुम्भ की आज्ञा पाकर चण्ड और मुण्ड चतुरङ्गिणी

सेना लेकर देवी को पकड़ने के लिए चले । १–२ । असुरों ने जाकर हिमालय पर्वत के शिखर पर सिंह पर सवार मुस्कराती हुई देवी को देखा । ३ । वे धनुष और खड्ग आदि अस्त्र-शस्त्र लेकर देवी के समीप गये और उनको पकड़ने का उद्योग करने लगे।४। तब देवी

पुरोगमाः । चतुरङ्गबलोपेता ययुरभ्युद्यतायुधाः ॥ २ ॥ ददृशुस्ते ततो देवीमीषद्धासां व्यवस्थिताम् । सिंहस्योपरि शैलेन्द्रशृङ्गे महति काञ्चने ॥ ३ ॥ ते दृष्ट्वा तां समादातुमुद्यमं चक्रुरुद्यताः । आकृष्टचापासिधरास्तथान्ये तत्समीपगाः ॥ ४ ॥ ततः कोपं चकारोच्चैरम्बिका तानरीन्प्रति । कोपेन चास्या वदनं मसीवर्णमभूत्तदा ॥ ५ ॥ भ्रुकुटीकुटिलात्तस्या ललाटफलकाद्द्रुतम् । काली

को उन शत्रुओं पर बड़ा क्रोध आया । क्रोध के मारे उनका मुँह काला हो गया । ५ । उसी समय उनके भ्रुकुटीकुटिल-ललाट से काली प्रकट हो गईं । काली का मुँह भयानक

था, हाथों में खड्ग, पाश और विचित्र खट्वाङ्ग (मुर्दे का पञ्जर अथवा खाट की पट्टी) लिये थीं। मुण्ड माला पहिने और बाघ की खाल ओढ़े थीं। बिना मांस की उनकी सूखी देह बड़ी भयानक थी। ६–७। मुँह फैलाये और बड़ी लम्बी जीभ काढ़े थीं।

करालवदना विनिष्क्रान्तासिपाशिनी ॥ ६ ॥ विचित्रखट्वाङ्गधरा नरमालाविभूषणा। द्वीपिचर्मपरीधाना शुष्कमांसातिभैरवा ॥ ७ ॥ अतिविस्तारवदना जिह्वाललनभीषणा। निमग्ना रक्तनयना नादापूरितदिङ्मुखा ॥ ८ ॥ सा वेगेनाभिपतिता घातयन्ती महासुरान्। सैन्ये तत्र सुरारीणामभक्षयत तद्बलम् ॥ ९ ॥ पार्ष्णिग्राहाङ्कुश-

लाल-लाल आँखें गड्डे में घुसी थीं। उनके गरजने का शब्द सब दिशाओं में फैल गया। ८। वह बड़े वेग से असुरों की सेना पर झपटीं और बड़े-बड़े असुरों पर प्रहार करती हुई उनकी सेना का भक्षण करने लगीं। ९। काली ने एक ही हाथ से महावत,

सवार और घंटासमेत हाथियों को पकड़कर अपने मुँह में डाल लिया ।१०। उसी प्रकार घोड़ों, सवारों और सारथियों सहित रथों को भी मुँह में डालकर दाँतों से चबा

ग्राहियोधघण्टासमन्वितान् । समादायैकहस्तेन मुखे चिक्षेप वारणान् ॥ १० ॥ तथैव योधं तुरगै रथं सारथिना सह । निक्षिप्य वक्त्रे दशनैश्चर्वयत्यतिभैरवम् ॥ ११ ॥ एकं जग्राह केशेषु ग्रीवायामथ चापरम् । पादेनाक्रम्य चैवान्यमुरसान्यमपोथयत् ॥ १२ ॥ तैर्मुक्तानि च शस्त्राणि महास्त्राणि तथासुरैः । मुखेन जग्राह रुषा दशनैर्मथिता-

डाला ।११। किसी के केश पकड़कर, किसी का गला दबाकर, किसी को छाती का धक्का देकर और किसी को पैर से दबाकर मार डाला । १२ । देवी ने कुपित होकर, असुरों

के चलाये हुए अस्त्र-शस्त्र मुँह में लेकर दाँतों से पीस डाला । १३ । बड़े-बड़े बलवान् दुरात्मा असुरों को रौंद डाला । बहुतों को घायल कर दिया और बहुतों को खा लिया । १४ । कितने ही असुर तलवार की मार से, कितने ही खट्वाङ्ग की मार से और कितने

न्यपि ॥ १३ ॥ बलिनां तद्‌बलं सर्वमसुराणां दुरात्मनाम्। ममर्दाभक्षयच्चान्यानन्याँश्चाताडयत्तथा ॥ १४॥ असिना निहताः केचित्केचित्खट्वाङ्गताडिताः। जग्मुर्विनाशमसुरा दन्ताग्राभिहतास्तथा ॥ १५ ॥ क्षणेन तद्‌बलं सर्वमसुराणां निपातितम्। दृष्ट्वा चण्डोऽभिदुद्राव तां कालीमतिभीषणाम् ॥ १६ ॥ शरवर्षैर्महाभीमैर्भीमाक्षीं तां महासुरः।

ही दाँतों से नोच डालने से मर गये । १५ । इस प्रकार क्षणभर में असुरों की सेना का विनाश देखकर महासुर चण्ड अतिभयानक काली की ओर दौड़ा । १६ । मुण्ड ने भी

भयंकर बाणों की वर्षा करके और हज़ारों चक्र फेंककर भयानक आँखोंवाली काली को ढक दिया। १७। वे चक्र काली के मुँह में प्रविष्ट होकर ऐसे शोभित हुए जैसे बादलों में सूर्य-मण्डल शोभित हों। १८। काली बड़े क्रोध से भयंकर मुँह और दाँत दिखा-

छादयामास चक्रैश्च मुण्डः क्षिप्तैः सहस्रशः ॥ १७॥ तानि चक्राण्यनेकानि विशमानानि तन्मुखम्। बभुर्यथार्क-बिम्बानि सुबहूनि घनोदरम् ॥ १८॥ ततो जहासातिरुषा भीमं भैरवनादिनी। काली करालवक्त्रान्तर्दुर्दर्शदशनो-ज्ज्वला ॥ १९ ॥ उत्थाय च महासिं हं देवी चण्डमधावत। गृहीत्वा चास्य केशेषु शिरस्तेनासिनाच्छिनत् ॥ २० ॥

कर और भयानक शब्द से गरज कर हँसने लगीं और एक बड़ी तलवार उठाकर 'हं' शब्द करके चण्ड की ओर दौड़ीं। देवी ने केश पकड़कर तलवार से उसका सिर काट

डाला । १९-२० । चण्ड को मरा हुआ देखकर मुण्ड दौड़ा । काली ने उसे भी तलवार
से मारकर पृथ्वी पर गिरा दिया । २१ । इस प्रकार चण्ड-मुण्ड के मारे जाने पर
बाकी सेना डरकर भाग गई । २२ । उसके बाद काली चण्ड और मुण्ड का सिर लेकर

अथ मुण्डोऽभ्यधावत्तां दृष्ट्वा चण्डं निपातितम् । तमप्य-
पातयद्भूमौ सा खड्गाभिहतं रुषा ॥ २१ ॥ हतशेषं ततः
सैन्यं दृष्ट्वा चण्डं निपातितम् । मुण्डं च सुमहावीर्यं दिशो
भेजे भयातुरम् ॥ २२ ॥ शिरश्चण्डस्य काली च गृहीत्वा
मुण्डमेव च । प्राह प्रचण्डाट्टहासमिश्रमभ्येत्य चण्डि-
काम् ॥ २३ ॥ मया तवात्रोपहृतौ चण्डमुण्डौ महापशू ।
युद्धयज्ञे स्वयं शुम्भं निशुम्भञ्च हनिष्यसि ॥ २४ ॥ ऋषि-

चण्डिका के पास गईं और हँसकर बोलीं—मैं चण्ड और मुण्ड, दो महापशुओं को मार-
कर आपकी भेंट करती हूँ । अब शुम्भ और निशुम्भ को आप स्वयं मारिए । २३-२४ ।

मेधा ऋषि कहते हैं—हे राजन्, महासुर, चण्ड-मुण्ड को देखकर चण्डिका देवी ने काली से कहा—तुम चण्ड और मुण्ड को मारकर मेरे सामने लाई हो, इसलिए हे देवि, अब तुम चामुण्डा नाम से जगत् में विख्यात होगी। २५–२७।

ऋषिरुवाच ॥ २५ ॥ तावानीतौ ततो दृष्ट्वा चण्डमुण्डौ महासुरौ। उवाच कालीं कल्याणी ललितं चण्डिकावचः ॥ २६ ॥ यस्माच्चण्डं च मुण्डं च गृहीत्वा त्वमुपागता॥ चामुण्डेति ततो लोके ख्याता देवि भविष्यसि ॥ २७॥

इति श्रीमार्कण्डेयपुराणे सावर्णिके मन्वन्तरे देवीमाहात्म्ये चण्डमुण्डवधो नाम सप्तमोऽध्यायः ॥ ७ ॥ उवाच २ श्लो० २५ मं० २७ एवमादितः ४३६

मेधा ऋषि कहते हैं—हे सुरथ, जब काली ने चण्ड-मुण्ड को उनकी सेना के साथ मार डाला, तब असुरराज महाप्रतापी शुम्भ ने कुपित होकर दैत्यों की सेना को आज्ञा

अथ ध्यानम् ॥ अरुणां करुणातरङ्गिताक्षीं धृतपाशांकुशमुख्यचापहस्ताम् । अणिमादिभिरावृतां मयूखैरहमित्येव विभावये भवानीम् ॥ ८ ॥

ऋषिरुवाच ॥ १ ॥ चण्डे च निहते दैत्ये मुण्डे च विनिपातिते । बहुलेषु च सैन्येषु क्षयितेष्वसुरेश्वरः ॥ २ ॥ ततः कोपपराधीनचेताः शुम्भः प्रतापवान् । उद्योगं सर्वसैन्यानां दैत्यानामादिदेश ह ॥ ३ ॥ अद्य सर्वबलैर्दैत्याः षडशीतिरुदायुधाः । कम्बूनां चतुरशीतिर्निर्यान्तु स्वबलैर्वृताः ॥ ४ ॥

दी । उदायुध नाम के छियासी बलवान् दैत्य, और कम्बू नाम के चौरासी दैत्य अपना

सेना लेकर युद्ध में चलें। १-४। कोटिवीर्य कुल के पचास, और धूम्रवंश के सौ असुर तैयार होकर लड़ने के लिए चलें। ५। काल, दुर्हृद और मुरुवंश के असुर तथा कालिका के पुत्र भी मेरी आज्ञा से शीघ्र तैयार होकर निकलें। ६। यह आज्ञा देकर

कोटिवीर्याणि पञ्चाशदसुराणां कुलानि वै। शतं कुलानि धौम्राणां निर्गच्छन्तु ममाज्ञया ॥ ५॥ कालका दौर्हृदा मौर्याः कालकेयास्तथासुराः। युद्धाय सज्जा निर्यान्तु आज्ञया त्वरिता मम ॥ ६ ॥ इत्याज्ञाप्यासुरपतिः शुम्भो भैरवशासनः। निर्जगाम महासैन्यसहस्रैर्बहुभिर्वृतः ॥ ७॥ आयान्तं चण्डिका दृष्ट्वा तत्सैन्यमतिभीषणम्। ज्यास्वनैः

कठोर शासन करनेवाला असुरराज शुम्भ हज़ारों बड़ी-बड़ी सेनाएँ लेकर युद्ध के लिए गया। ७। चण्डिका देवी ने उसकी भयानक सेना देखकर अपना धनुष चढ़ाया।

उनके धनुष की ज्या का शब्द आकाश और पृथ्वी में फैल गया । ८ । उसी समय देवी का वाहन सिंह भी गरजा, और देवी ने घंटा बजाकर सिंह के गरजने और धनुष की ज्या के शब्द को और भी बढ़ा दिया । ६ । इस भाँति धनुष की ज्या का शब्द, सिंह

पूरयामास धरणीगगनान्तरम् ॥ ८ ॥ ततः सिंहो महा-
नादमतीव कृतवान् नृप । घण्टास्वनेन तन्नादमम्बिका
चोपबृंहयत ॥ ६ ॥ धनुर्ज्यासिंहघण्टानां नादापूरितदिङ्-
मुखा । निनादैर्भीषणैः काली जिग्ये विस्तारिताननना ॥ १० ॥
तं निनादमुपश्रुत्य दैत्यसैन्यैश्चतुर्दिशम् । देवी सिंहस्तथा

के गरजने का शब्द और घंटा का शब्द सब दिशाओं में फैल गया । उसी समय काली भी मुँह फैलाकर भयंकर नाद से गरजीं । उनके गरजने का शब्द उससे भी बढ़कर हुआ । १० । वह शब्द सुनकर दैत्यों की सेना ने बड़े क्रोध से चण्डिका, काली और

सिंह को घेर लिया । ११ । राजन्, उसी समय असुरों का विनाश और देवताओं का कल्याण करने के लिए ब्रह्मा, शिव, स्वामिकार्त्तिक, विष्णु और इन्द्र की शक्तियाँ उन्हीं की देह से निकल कर और उन्हीं देवताओं का रूप धारण करके चण्डिका के पास

काली सरोषैः परिवारिता ॥ ११ ॥ एतस्मिन्नन्तरे भूप विनाशाय सुरद्विषाम् । भवायामरसिंहानामतिवीर्यबलान्विताः ॥ १२॥ ब्रह्मेशगुहविष्णूनां तथेन्द्रस्य च शक्तयः । शरीरेभ्यो विनिष्क्रम्य तद्रूपैश्चण्डिकां ययुः ॥ १३ ॥ यस्य देवस्य यद्रूपं यथाभूषणवाहनम् । तद्वदेव हि तच्छक्तिर-सुरान्योद्धुमाययौ ॥ १४ ॥ हंसयुक्तविमानाग्रे साक्षसूत्र-

आईं । १२-१३ । जिस देवता का जैसा रूप है और जैसा आभूषण और वाहन है, उसकी शक्ति भी वैसा ही रूप, आभूषण और वाहन लेकर असुरों से युद्ध करने के लिए आईं । १४ । ब्रह्मा की शक्ति ब्रह्माणी, हाथ में कमण्डलु और अक्षमाला लिये हुए हंस-

युक्त विमान पर बैठकर आई। १५। महेश्वर की शक्ति माहेश्वरी त्रिशूल धारण करके बैल पर चढ़कर आईं। उनके हाथ में साँप लिपटा था और ललाट में चन्द्ररेखा शोभित थी। १६। कार्त्तिकेय की शक्ति कौमारी, हाथ में शक्ति लेकर, मोर पर चढ़कर, दैत्यों

कमण्डलुः। आयाता ब्रह्मणः शक्तिर्ब्रह्माणी साभिधी-
यते॥ १५॥ माहेश्वरी वृषारूढा त्रिशूलवरधारिणी।
महाहिवलया प्राप्ता चन्द्ररेखा विभूषणा॥ १६॥ कौमारी
शक्तिहस्ता च मयूरवरवाहना। योद्धुमभ्याययौ दैत्यान-
म्बिका गुहरूपिणी॥ १७॥ तथैव वैष्णवी शक्तिर्गरुडो-
परिसंस्थिता। शङ्खचक्रगदाशार्ङ्गखड्गहस्ताभ्युपाययौ १८।
यज्ञवाराहमतुलं रूपं या बिभ्रतो हरेः। शक्तिः साप्याययौ

से युद्ध करने के लिए आईं। १७। विष्णु की शक्ति वैष्णवी शंख, चक्र, गदा, धनुष और खड्ग लेकर गरुड़ पर सवार होकर आईं। १८। वराहरूप भगवान् विष्णु की शक्ति वाराही

रूप धारण करके आईं । १९ । नारसिंही नृसिंह के समान रूप धारण करके आईं, उनकी गर्दन के बाल हिलने से नक्षत्र हिलने लगे । २० । इन्द्र की शक्ति इन्द्राणी हाथ में वज्र लेकर, सहस्र नेत्रों से शोभित होकर, इन्द्र के समान रूप धारण करके ऐरावत पर

तत्र वाराहीं बिभ्रती तनुम् ॥ १९ ॥ नारसिंही नृसिंहस्य बिभ्रती सदृशं वपुः । प्राप्ता तत्र सटाक्षेपक्षिप्तनक्षत्र-संहतिः ॥ २० ॥ वज्रहस्ता तथैवैन्द्री गजराजोपरिस्थिता । प्राप्ता सहस्रनयना यथा शक्रस्तथैव सा ॥ २१ ॥ ततः परिवृतस्ताभिरीशानो देवशक्तिभिः । हन्यन्तामसुराः शीघ्रं मम प्रीत्याह चण्डिकाम् ॥ २२ ॥ ततो देवीशरी-

सवार होकर आईं । २१ । उन देवशक्तियों के बीच में खड़े होकर शिवजी ने चण्डिका से कहा कि असुरों को शीघ्र मारकर मुझे प्रसन्न करो । २२ । उसी समय चण्डिका

देवी के शरीर से अति भयानक शक्ति उत्पन्न हुई। उनके साथ ही सैकड़ों सियारिनें भी पैदा होकर चिल्लाने लगीं। २३। उस अपराजिता देवी ने धूम्रवर्ण जटाओं से शोभित शिवजी से कहा—भगवन्, आप दूतरूप से शुम्भ-निशुम्भ के पास जाइए। २४। अति-

रात्तु विनिष्क्रान्तातिभीषणा । चण्डिका शक्तिरत्युग्रा
शिवाशतनिनादिनी ॥ २३ ॥ सा चाह धूम्रजटिलमीशा-
नमपराजिता । दूतत्वं गच्छ भगवन् पार्श्वं शुम्भनिशु-
म्भयोः ॥ २४ ॥ ब्रूहि शुम्भं निशुम्भं च दानवावतिगर्वितौ ।
ये चान्ये दानवास्तत्र युद्धाय समुपस्थिताः ॥ २५ ॥ त्रैलो-
क्यमिन्द्रो लभतां देवाः सन्तु हविर्भुजः । यूयं प्रयात

गर्वित शुम्भ-निम्शुभ से, और युद्ध के लिए उपस्थित अन्य दानवों से कहिए कि तुम लोग यदि जीवित रहना चाहते हो, तो पाताल को चले जाओ। अब इन्द्र तीनों लोकों

का राज्य पावें और देवता अपना-अपना यज्ञ-भाग लें । २५—२६ । और यदि तुम अपने बल के दर्प से युद्ध करना चाहते हो, तो आओ, तुम्हारे मांस से हमारी सियारिनें तृप्त

पातालं यदि जीवितुमिच्छथ ॥ २६ ॥ बलावलेपादथ चेद्भवन्तो युद्धकांक्षिणः । तदागच्छत तृप्यन्तु मच्छिवाः पिशितेन वः ॥ २७ ॥ यतो नियुक्तो दौत्येन तया देव्या शिवः स्वयम् । शिवदूतीति लोकेऽस्मिंस्ततः सा ख्यातिमागता ॥ २८ ॥ तेऽपि श्रुत्वा वचो देव्याः शर्वाख्यातं महासुराः । अमर्षापूरिता जग्मुर्यतः कात्यायनी स्थिता २९ ततः प्रथममेवाग्रे शरशक्त्यृष्टिवृष्टिभिः । ववर्षुरुद्धतामर्षा-

हों । २७ । देवी ने शिवजी को दूत-कार्य में नियुक्त किया; इसलिए वह शिवदूती नाम से प्रसिद्ध हुई । २८ । शिव के मुँह से देवी की यह बात सुनकर, सब दैत्य कुपित होकर देवी के पास गये । २९ । क्रोध से व्याकुल वे असुर बाण, शक्ति और ऋष्टि, देवी पर

बरसाने लगे। ३०। देवी ने उनके चलाये हुए बाण, शूल, शक्ति और परशु आदि अस्त्रों को अपने बाणों से अनायास काटकर गिरा दिया। ३१। देवी के सामने ही काली

स्तान्देवीममरारयः ॥ ३० ॥ सा च तान्प्रहितान्बाण-
ञ्छूलशक्तिपरश्वधान् । चिच्छेद लीलयाध्मातधनुर्मुक्तै-
र्महेषुभिः ॥ ३१ ॥ तस्याग्रतस्तथा काली शूलपातविदारि-
तान् । खट्वाङ्गपोथितांश्चारीन्कुर्वती व्यचरत्तदा ॥ ३२ ॥
कमण्डलुजलाक्षेपहतवीर्यान्हतौजसः । ब्रह्माणी चाकरो-
च्छत्रून्येन येन स्म धावति ॥ ३३ ॥ माहेश्वरी त्रिशूलेन
तथा चक्रेण वैष्णवी । दैत्याञ्जघान कौमारी तथा शक्त्या-

शत्रुओं को शूल और खट्वाङ्ग से मारती हुई युद्धभूमि में विचरने लगीं। ३२। ब्रह्माणी जिधर जाती थीं उधर कमण्डलु से जल छिड़ककर, शत्रुओं को निर्बल और निस्तेज कर देती थीं। ३३। माहेश्वरी ने त्रिशूल से, वैष्णवी ने चक्र से और कौमारी ने क्रुद्ध

होकर शक्ति से दानवों का संहार किया । ३४ । इन्द्राणी ने वज्र के प्रहार से सैकड़ों दानवों को मार डाला । वे रुधिर बरसाते हुए पृथिवी पर गिर पड़े । ३५ । वाराही ने दानवों की छाती में दाँत मारकर घायल कर दिया । बहुतों को थूथुन से मार डाला

तिकोपना ॥ ३४ ॥ ऐन्द्री कुलिशपातेन शतशो दैत्य-
दानवाः । पेतुर्विदारिताः पृथ्व्यां रुधिरौघप्रवर्षिणः ॥ ३५ ॥
तुण्डप्रहारविध्वस्ता दंष्ट्राग्रक्षतवक्षसः । वाराहमूर्त्या न्यप-
तंश्चक्रेण च विदारिताः ॥ ३६ ॥ नखैर्विदारितांश्चान्या-
न्भक्षयन्ती महासुरान् । नारसिंही चचाराजौ नादापूर्ण-
दिगम्बरा ॥ ३७ ॥ चण्डाट्टहासैरसुराः शिवदूत्यभिदू-

और बहुतों को चक्र के प्रहार से मारकर गिरा दिया ।३६। नारसिंही ने नखों से फाड़कर बहुत-से असुरों को खा लिया । फिर वह गरजकर युद्धभूमि में घूमने लगीं । उनके गरजने का शब्द आकाश और सब दिशाओं में फैल गया । ३७ । शिवदूती भी भया-

नक अट्टहास करके असुरों को पृथिवी पर गिराकर भक्षण करने लगीं । ३८ । इस तरह देवियों ने कुपित होकर अनेक उपाय से बड़े-बड़े असुरों का विनाश कर दिया । यह देखकर दैत्यों की सेना भागने लगी । ३९ । देवियों को मार से पीड़ित

षिताः। पेतुः पृथिव्यां पतितांस्तांश्चखादाथ सा तदा॥३८॥ इति मातृगणं क्रुद्धं मर्दयन्तं महासुरान् । दृष्ट्वाभ्युपायैर्विविधैर्नेशुर्देवारिसैनिकाः ॥ ३९ ॥ पलायनपरान् दृष्ट्वा दैत्यान् मातृगणार्दितान् । योद्धुमभ्याययौ क्रुद्धो रक्तबीजो महासुरः ॥ ४० ॥ रक्तबिन्दुर्यदा भूमौ पतत्यस्य शरीरतः । समुत्पतति मेदिन्यां तत्प्रमाणस्तदासुरः ॥४१॥

सेना को भागते देखकर रक्तबीज नाम का असुर क्रुद्ध होकर युद्ध करने के लिए आया । ४० । उसकी देह से जब एक बूँद रुधिर पृथिवी पर गिरता था तब उसी के समान

दूसरा असुर पैदा हो जाता था। ४१। रक्तबीज हाथ में गदा लेकर इन्द्राणी से युद्ध करने लगा। इन्द्राणी ने रक्तबीज पर वज्र का प्रहार किया। ४२। वज्र लगने से उसकी देह से बहुत-सा रुधिर गिरा और उसी के समान पराक्रमी असुर पैदा हो गये। ४३।

युयुधे स गदापाणिरिन्द्रशक्त्या महासुरः। ततश्चैन्द्री स्ववज्रेण रक्तबीजमताडयत् ॥ ४२ ॥ कुलिशेनाहतस्याशु बहु सुस्राव शोणितम्। समुत्तस्थुस्ततो योधास्तद्रूपास्तत्पराक्रमाः॥ ४३ ॥ यावन्तः पतितास्तस्य शरीराद्रक्तबिन्दवः। तावन्तः पुरुषा जातास्तद्वीर्यबलविक्रमाः॥ ४४ ॥ ते चापि युयुधुस्तत्र पुरुषा रक्तसम्भवाः। समं मातृभिरत्युग्रशस्त्रपा-

उसके शरीर से रुधिर के जितने बूँद गिरते थे, उतने ही पुरुष, वैसे ही बलवान् और पराक्रमी पैदा हो जाते थे। ४४। रुधिर से उत्पन्न असुर तीक्ष्ण अस्त्र-शस्त्र बरसाकर

देवियों से युद्ध करने लगे । ४५ । उसके बाद जब इन्द्राणी ने वज्र मारकर रक्तबीज का सिर फोड़ दिया और उससे रुधिर बहने लगा तब हज़ारों असुर पैदा हो गये । ४६ । वैष्णवी ने चक्र से, और इन्द्राणी ने गदा से रक्तबीज को मारा । ४७ । वैष्णवी का चक्र

तातिभीषणम् ॥ ४५ ॥ पुनश्च वज्रपातेन क्षतमस्य शिरो यदा । ववाह रक्तं पुरुषास्ततो जाताः सहस्रशः ॥ ४६ ॥ वैष्णवी समरे चैनं चक्रेणाभिजघान ह । गदया ताडया- मास ऐन्द्री तमसुरेश्वरम् ॥ ४७ ॥ वैष्णवीचक्रभिन्नस्य रुधिरस्रावसम्भवैः । सहस्रशो जगद्व्याप्तं तत्प्रमाणैर्महा- सुरैः ॥ ४८ ॥ शक्त्या जघान कौमारी वाराही च तथा-

लगने से, रक्तबीज की देह से जो रुधिर निकला, उससे उसी के समान हज़ारों असुर पैदा होकर संसार में भर गये । ४८ । कौमारी ने शक्ति से, वाराही ने तलवार से और

माहेश्वरी ने त्रिशूल से महासुर रक्तबीज को मारा । ४९ । रक्तबीज ने भी कुपित होकर सब देवियों पर गदा का प्रहार किया । ५० । शक्ति और शूल आदि के लगने से, उस असुर की देह से रुधिर की जो बूँदें पृथिवी पर गिरीं उनसे सैकड़ों असुर पैदा हो गये । ५१ ।

सिना । माहेश्वरी त्रिशूलेन रक्तबीजं महासुरम् ॥ ४९ ॥ स चापि गदया दैत्यः सर्वा एवाहनत् पृथक् । मातृः कोपसमाविष्टो रक्तबीजो महासुरः ॥ ५० ॥ तस्याहतस्य बहुधा शक्तिशूलादिभिर्भुवि । पपात यो वै रक्तौघस्तेनासञ्छतशोऽसुराः ॥ ५१ ॥ तैश्चासुरासृक्सम्भूतैरसुरैः सकलं जगत् । व्याप्तमासीत्ततो देवा भयमाजग्मुरुत्तमम् ॥ ५२ ॥ तान्विषण्णान् सुरान् दृष्ट्वा चण्डिका प्राह सत्वरा । उवाच

रक्तबीज के रुधिर से उत्पन्न असुरों से सम्पूर्ण जगत् व्याप्त हो गया । यह देखकर देवता बहुत डरे । ५२ । देवताओं को भयभीत देखकर चण्डिका ने काली से कहा—हे

चामुण्डे, अपना मुँह फैलाओ, और मेरे शस्त्र लगने से इसकी देह से जो रुधिर की बूँदें गिरें, उनको पी लो, और यदि उनसे असुर पैदा हो जायँ तो उनको खा लो। ५३—५४। इस प्रकार तुम असुरों को भक्षण करती हुई युद्धभूमि में विचरो। जब इस दैत्य का रुधिर

कालीं चामुण्डे विस्तरं वदनं कुरु ॥ ५३ ॥ मच्छस्त्रपात-
सम्भूतान् रक्तबिन्दून्महासुरान्। रक्तबिन्दोः प्रतीच्छ त्वं
वक्त्रेणानेन वेगिता ॥ ५४ ॥ भक्षयन्ती चर रणे तदुत्पन्ना-
न्महासुरान्। एवमेष क्षयं दैत्यः क्षीणरक्तो गमिष्यति ५५॥
भक्ष्यमाणास्त्वया चोग्रा न चोत्पत्स्यन्ति चापरे। इत्यु-
क्त्वा तां ततो देवी शूलेनाभिजघान तम् ॥ ५६ ॥ मुखेन

क्षीण हो जायगा, तब यह मर जायगा। ५५। तुम भक्षण करती रहोगी तो असुर नहीं पैदा हो सकेंगे। चण्डिका ने काली से यह कहकर रक्तबीज को शूल से मारा। ५६।

शूल लगने से उसके शरीर से जो रुधिर गिरा उसे काली ने अपने मुँह में ले लिया। फिर उस दैत्य ने चण्डिका को गदा से मारा। ५७। गदा लगने से देवी के शरीर में कुछ भी पीड़ा नहीं हुई, किन्तु देवी का शूल लगने से उसकी देह से बहुत रुधिर बहा। ५८।

काली जगृहे रक्तबीजस्य शोणितम् ॥ ततोऽसावाजघानाथ गदया तत्र चण्डिकाम् ॥ ५७ ॥ न चास्या वेदनां चक्रे गदापातोऽल्पिकामपि । तस्याहतस्य देहात्तु बहु सुस्राव शोणितम् ॥ ५८ ॥ यतस्ततस्तद्वक्त्रेण चामुण्डा सम्प्रतीच्छति । मुखे समुद्गता येऽस्या रक्तपातान्महासुराः ॥ ५९ ॥ तांश्चखादाथ चामुण्डा पपौ तस्य च शोणि-

काली ने मुँह फैलाकर उस रुधिर को पी लिया। उस रुधिर से जो असुर पैदा हुए उनको भी खा लिया। देवी ने शूल, वज्र, बाण, तलवार और ऋष्टि मारकर रक्तबीज

को, जिसका रुधिर काली ने पी लिया था, मार डाला। शस्त्रों के प्रहार से मरा हुआ वह दैत्य पृथिवी पर गिर पड़ा। ५९—६१। राजन्, जब महासुर रक्तबीज विना रुधिर

तम्। देवी शूलेन वज्रेण बाणैरसिभिर्ऋष्टिभिः ॥ ६० ॥ जघान रक्तबीजं तं चामुण्डापीतशोणितम्। स पपात महीपृष्ठे शस्त्रसङ्घसमाहतः ॥ ६१ ॥ नीरक्तश्च महीपाल रक्तबीजो महासुरः। ततस्ते हर्षमतुलमवापुस्त्रिदशा नृप॥६२॥तेषां मातृगणो जातो ननर्तासृङ्मदोद्धतः॥६३॥

इति श्रीमार्कण्डेयपुराणे सावर्णिके मन्वन्तरे देवीमाहात्म्ये रक्तबीजवधो नामाष्टमोऽध्यायः ॥ ८ ॥ उवाच १ अर्ध० १ श्लो० ६१ मं० ६३ एवमादितः ५०२

का हो गया तब देवता बड़े प्रसन्न हुए, और उसका रुधिर पीकर देवियाँ उद्धत होकर नाचने लगीं। ६२—६३।

राजा सुरथ ने कहा—भगवन्, आपने देवी का चरित्र, माहात्म्य और रक्तबीज के

अथ ध्यानम् ॥ बन्धूककाञ्चननिभां रुचिराक्षमालां पाशाङ्कुशौ च वरदां निजबाहुदण्डैः । बिभ्राणमिन्दु-शकलाभरणां त्रिनेत्रामर्धाम्बिकेशमनिशं वपुराश्रयामि ६

राजोवाच ॥ १ ॥ विचित्रमिदमाख्यातं भगवन् भवता मम । देव्याश्चरितमाहात्म्यं रक्तबीजवधाश्रितम् ॥ २ ॥ भूयश्चेच्छाम्यहं श्रोतुं रक्तबीजे निपातिते । चकार शुम्भो यत्कर्म निशुम्भश्चातिकोपनः ॥ ३ ॥ ऋषिरुवाच ॥ ४ ॥

वध की विचित्र कथा का वर्णन किया । रक्तबीज के मरने पर महाक्रोधी शुम्भ और निशुम्भ ने क्या किया था, वह भी मैं सुनना चाहता हूँ । १–३ । मेधा ऋषि कहते

हैं—राजन्, जब रक्तबीज मारा गया और अन्य असुर भी युद्ध में मार डाले गये, तब शुम्भ और निशुम्भ को बड़ा क्रोध आया। ४-५। अपनी सेना को मरी हुई देखकर,

चकार कोपमतुलं रक्तबीजे निपातिते। शुम्भासुरो निशुम्भश्च हतेष्वन्येषु चाहवे ॥ ५ ॥ हन्यमानं महासैन्यं विलोक्यामर्षमुद्वहन्। अभ्यधावन्निशुम्भोऽथ मुख्ययासुरसेनया ॥ ६ ॥ तस्याग्रतस्तथा पृष्ठे पार्श्वयोश्च महासुराः। संदष्टौष्ठपुटाः क्रुद्धा हन्तुं देवीमुपाययुः ॥ ७ ॥ आजगाम महावीर्यः शुम्भोऽपि स्वबलैर्वृतः। निहन्तुं

निशुम्भ कुपित होकर, असुरों की मुख्य सेना लेकर दौड़ा। ६। उसके आगे, पीछे और दोनों ओर बड़े-बड़े असुर क्रोध से होठ चबाते हुए देवी को मारने दौड़े। ७। महापराक्रमी शुम्भ भी कुपित होकर, अपनी सेना लेकर देवियों से युद्ध करके चण्डिका

को मारने के लिए आया । ८ । शुम्भ और निशुम्भ से देवी के साथ युद्ध होने लगा । जैसे बादल पानी बरसाते हैं वैसे ही शुम्भ और निशुम्भ बाण बरसाने लगे । ९ ।

चण्डिकां कोपात्कृत्वा युद्धं तु मातृभिः ॥ ८ ॥ ततो युद्धमतीवासीद्देव्या शुम्भनिशुम्भयोः । शरवर्षमतीवोग्रं मेघयोरिव वर्षतोः ॥ ९ ॥ चिच्छेदास्ताञ्छरांस्ताभ्यां चण्डिकास्वशरोत्करैः । ताडयामास चाङ्गेषु शस्त्रौघैरसुरेश्वरौ १० निशुम्भो निशितं खड्गं चर्म चादाय सुप्रभम् । अताडयन्मूर्ध्नि सिंहं देव्या वाहनमुत्तमम् ॥ ११ ॥ ताडिते

चण्डिका ने अपने बाणों से शुम्भ-निशुम्भ के चलाये हुए बाणों को काट डाला, और उनके अङ्गों में बहुत-से बाण मारे । १० । निशुम्भ ने एक पैनी तलवार और एक चमकती हुई ढाल उठा लिया, और देवी के वाहन सिंह के सिर पर एक प्रहार किया । ११ ।

सिंह के सिर में तलवार लगते ही देवी ने क्षुरप्र नामक शस्त्र से निशुम्भ की तलवार और अष्टचन्द्रक ढाल को काट डाला। १२। ढाल-तलवार कट जाने पर निशुम्भ ने

वाहने देवी क्षुरप्रेणासिमुत्तमम्। निशुम्भस्याशु चिच्छेद चर्म चाप्यष्टचन्द्रकम्॥ १२॥ छिन्ने चर्मणि खड्गे च शक्तिं चिक्षेप सोऽसुरः। तामप्यस्य द्विधा चक्रे चक्रेणाभिमुखागताम्॥ १३॥ कोपाध्मातो निशुम्भोऽथ शूलं जग्राह दानवः। आयातं मुष्टिपातेन देवी तच्चाप्यचूर्णयत्॥१४॥ आविध्याथ गदां सोऽपि चिक्षेप चण्डिकां प्रति। सापि

एक शक्ति चलाई। देवी ने सामने आई हुई शक्ति को चक्र से काटकर दो खण्ड कर दिया। १३। तब निशुम्भ ने एक शूल चलाया। देवी ने घूँसा मारकर उस शूल को चूर कर दिया। १४। तब उसने देवी पर एक गदा चलाई। देवी ने उसे त्रिशूल से

काटकर भस्म कर दिया। १५। उसके बाद निशुम्भ परश लेकर दौड़ा। देवी ने उसे बाणों से मारकर पृथिवी पर गिरा दिया। १६। महापराक्रमी निशुम्भ के गिरने पर

देव्या त्रिशूलेन भिन्ना भस्मत्वमागता ॥ १५ ॥ ततः परशुहस्तं तमायान्तं दैत्यपुङ्गवम्। आहत्य देवी बाणौघैरपातयत भूतले ॥ १६ ॥ तस्मिन्निपतिते भूमौ निशुम्भे भीमविक्रमे। भ्रातर्यतीव संक्रुद्धः प्रययौ हन्तुमम्बिकाम् १७ स रथस्थस्तथात्युच्चैर्गृहीतपरमायुधैः। भुजैरष्टाभिरतुलैर्व्याप्याशेषं बभौ नभः ॥ १८ ॥ तमायान्तं समालोक्य देवी शङ्खमवादयत्। ज्याशब्दं चापि धनुषश्चकारातीव

उसका भाई शुम्भ कुपित होकर देवी को मारने दौड़ा। १७। वह रथ पर सवार होकर हाथों में बड़े-बड़े अस्त्र-शस्त्र लेकर, लम्बा भुजाएँ आकाश में फैलाकर युद्ध-भूमि में आया। १८। उसे देखकर देवी ने शंख बजाया और धनुष की ज्या का टंकार

किया। १९। दैत्यों की सेना का तेज नष्ट करनेवाले घंटा के शब्द से सब दिशाओं को भर दिया। २०। सिंह ने भी बड़े-बड़े हाथियों का मद दूर करनेवाले महानाद से

दुःसहम् ॥ १९ ॥ पूरयामास ककुभो निजघण्टास्वनेन च।
समस्तदैत्यसैन्यानां तेजोवधविधायिना ॥ २० ॥ ततः सिंहो
महानादैस्त्याजितेभमहामदैः। पूरयामास गगनं गां तथो
पदिशो दश ॥ २१ ॥ ततः काली समुत्पत्य गगनं क्ष्मा-
मताडयत्। कराभ्यां तन्निनादेन प्राक्स्वनास्ते तिरो-
हिताः ॥ २२ ॥ अट्टाट्टहासमशिवं शिवदूती चकार ह। तैः

पृथिवी, आकाश और सब दिशाओं को भर दिया। २१। काली ने ऊपर को उछलकर दोनों हाथ पृथिवी पर पटक दिया। उसके शब्द में पहले के सब शब्द विलीन हो गये। २२। उसके बाद शिवदूती भयानक शब्द से गरजीं। वह शब्द सुनकर असुरों

का सेना डर गई। तब शुम्भ को बड़ा क्रोध आया। २३। अम्बिका ने शुम्भ से कहा—रे दुष्ट, खड़ा रह, यह सुनकर आकाश में स्थित देवता 'जय जय' करने लगे। २४। तब शुम्भ ने चमकती हुई भयानक शक्ति चलाई। उसे आग के पर्वत के समान आती

शब्दैरसुरास्त्रेसुः शुम्भः कोपं परं ययौ ॥ २३ ॥ दुरात्मँस्तिष्ठ तिष्ठेति व्याजहाराम्बिका यदा। तदा जयेत्यभिहितं देवैराकाशसंस्थितैः ॥ २४ ॥ शुम्भेनागत्य या शक्तिर्मुक्ता ज्वालातिभीषणा। आयान्ती वह्निकूटाभा सा निरस्ता महोल्कया ॥ २५ ॥ सिंहनादेन शुम्भस्य व्याप्तं लोकत्रयान्तरम्। निर्घातनिःस्वनो घोरो जितवानवनी-

हुई देखकर देवी ने महोल्का नाम की शक्ति से काट डाला। २५। शुम्भ सिंह के समान गरजा। उसके गरजने का शब्द तीनों लोकों में फैल गया। हे राजन्, उसी समय सेना में 'मारो मारो' का शब्द हुआ। उस शब्द में शुम्भ के गरजने का शब्द

विलीन हो गया । २६ । शुम्भ के चलाये हुए सैकड़ों-हज़ारों बाणों को देवी ने, और देवी के चलाये हुए बाणों को शुम्भ ने अपने बाणों से काट डाला । २७ । देवी ने

पते ॥ २६ ॥ शुम्भमुक्ताञ्छरान्देवी शुम्भस्तत्प्रहिताञ्छ-
रान् । चिच्छेद स्वशरैरुग्रैः शतशोऽथ सहस्रशः ॥ २७ ॥
ततः सा चण्डिका क्रुद्धा शूलेनाभिजघान तम् । स तदा-
भिहतो भूमौ मूर्च्छितो निपपात ह ॥ २८ ॥ ततो निशुम्भः
सम्प्राप्य चेतनामात्तकार्मुकः । आजघान शरैर्देवीं कालीं
केसरिणं तथा ॥ २९ ॥ पुनश्च कृत्वा बाहूनामयुतं दनुजे-

कुपित होकर शुम्भ को त्रिशूल से मारा; जिससे वह घायल और मूर्च्छित होकर पृथिवी पर गिर पड़ा । २८ । उसी समय निशुम्भ को चेत आया और वह धनुष लेकर बाणों से काली देवी और सिंह को मारने लगा । २९ । उसके बाद असुरराज शुम्भ ने दस

हजार बाहु धारण करके हाथों में चक्र लेकर देवी को घेर लिया । ३० । संकटनाशिनी भगवती दुर्गा ने क्रुद्ध होकर अपने बाणों से उन चक्रों और बाणों को काट डाला ।३१।

श्वरः । चक्रायुधेन दितिजश्छादयामास चण्डिकाम् ॥ ३० ॥
ततो भगवती क्रुद्धा दुर्गा दुर्गार्तिनाशिनी । चिच्छेद तानि चक्राणि स्वशरैः सायकांश्च तान् ॥ ३१ ॥ ततो निशुम्भो वेगेन गदामादाय चण्डिकाम् । अभ्यधावत वै हन्तुं दैत्य-सेनासमावृतः ॥ ३२ ॥ तस्यापतत एवाशु गदां चिच्छेद चण्डिका । खड्गेन शितधारेण स च शूलं समाददे ॥ ३३ ॥
शूलहस्तं समायान्तं निशुम्भममरार्दनम् । हृदि विव्याध

तब निशुम्भ गदा लेकर दैत्यों की सेना के साथ बड़े वेग से देवी को मारने दौड़ा । ३२। देवी ने अपनी तेज़ तलवार से उसकी गदा काट डाली । तब उस... त्रिशूल उठाया । ३३ । त्रिशूल लेकर आते हुए निशुम्भ को देखकर देवी ने बड़े वेग से उसकी

छाती में एक शूल मारा । ३४ । शूल लगने से उसकी छाती फट गई, और उसमें से एक दूसरा महापराक्रमी पुरुष देवी से "खड़ी रह" कहता हुआ निकला । ३५ । देवी ने

शूलेन वेगाविद्धेन चण्डिका ॥ ३४॥ भिन्नस्य तस्य शूलेन हृदयान्निस्सृतो परः । महाबलो महावीर्यस्तिष्ठेति पुरुषो वदन् ॥ ३५ ॥ तस्य निष्क्रामतो देवी प्रहस्य स्वनवत्ततः । शिरश्चिच्छेद खड्गेन ततोऽसावपतद्भुवि ॥ ३६ ॥ ततः सिंहश्चखादोग्रं दंष्ट्राक्षुण्णशिरोऽधरान् । असुरांस्तांस्तथा काली शिवदूती तथापरान् ॥ ३७ ॥ कौमारीशक्ति-

हँसकर तलवार से उसका सिर काट डाला और वह पृथिवी पर गिर पड़ा । ३६ । देवी का वाहन सिंह अपनी पैनी दाढ़ों से असुरों के सिर और होठ चबाने लगा । काली और शिवदूती भी असुरों को खाने लगीं । ३७ । कितने ही असुर कौमारी की शक्ति से

मारे गये और कितने ही ब्रह्माणी के अभिमन्त्रित जल से नष्ट हो गये । ३८ । कितने ही माहेश्वरी के त्रिशूल से कटकर गिर पड़े और कितने ही वाराही के तुंड-प्रहार से

निर्भिन्नाः केचिन्नेशुर्महासुराः । ब्रह्माणी मन्त्रपूतेन तोये-नान्ये निराकृताः ॥ ३८ ॥ माहेश्वरी त्रिशूलेन भिन्नाः पेतु-स्तथापरे । वाराहीतुण्डघातेन केचिच्चूर्णीकृता भुवि॥३९॥ खण्डं खण्डं च चक्रेण वैष्णव्या दानवाः कृताः । वज्रेण चैन्द्रीहस्ताग्रविमुक्तेन तथापरे ॥ ४० ॥ केचिद्विने-

चूर्ण हो गये । ३९ । वैष्णवी ने चक्र से असुरों को खंड-खंड कर डाला और ऐन्द्री ने बहुत-से असुरों को वज्र से मार डाला । ४० । कितने ही असुर अस्त्र-शस्त्र से मारे गये,

कितने ही घोर संग्राम में डरकर मर गये और बहुतों को काली, शिवदूती और सिंह ने खा लिया। ४१।

शुरसुराः केचिन्नष्टा महाहवात्। भक्षिताश्चापरे काली-शिवदूती मृगाधिपैः॥ ४१॥

इति श्रीमार्कण्डेयपुराणे सावर्णिके मन्वन्तरे देवी-माहात्म्ये निशुम्भवधो नाम नवमोऽध्यायः॥ ९॥ उवाच २ श्लो० ३९ मं० ४१ एवमादितः ५४३

अथ ध्यानम्

उत्तप्तहेमरुचिरां रविचन्द्रवह्निनेत्रां धनुश्शरयुताङ्कुशपाशशूलम्। रम्यैर्भुजैश्च दधतीं शिवशक्तिरूपां कामेश्वरीं हृदि भजामि धृतेन्दुलेखाम्॥ १०॥

मेधा ऋषि कहते हैं-हे राजन्, प्राणों के समान प्रिय अपने भाई निशुम्भ को सेना सहित मरा हुआ देखकर शुम्भ कुपित होकर बोला-हे दुर्गे, तुम अपने बल का गर्व न

ऋषिरुवाच ॥ १ ॥ निशुम्भं निहतं दृष्ट्वा भ्रातरं प्राणसम्मितम्। हन्यमानं बलं चैव शुम्भः क्रुद्धोऽब्रवीद्वचः ॥ २ ॥ बलावलेपाद्दुष्टे त्वं मा दुर्गे गर्वमावह। अन्यासां बलमाश्रित्य युध्यसे याति मानिनी ॥ ३ ॥ देव्युवाच ॥ ४ ॥ एकैवाहं जगत्यत्र द्वितीया का ममापरा। पश्यैता दुष्ट मय्येव विशन्त्यो मद्विभूतयः ॥ ५ ॥ ततः समस्तास्ता

करो; तुम दूसरों के बल पर युद्ध करती हो और अपने पराक्रम का अभिमान करती हो। १-३। देवी ने उत्तर दिया-मैं इस संसार में एक ही हूँ, दूसरा और कौन है; रे दुष्ट, देख यह मेरी शक्तियाँ मुझमें ही लीन होती हैं। ४-५। देवी के यह कहते ही ब्रह्माणी

आदि सब शक्तियाँ देवी के शरीर में लीन हो गईं। केवल एक अम्बिका रह गईं। ६।
देवी ने कहा—मैं अपनी शक्तियों से अनेक रूपों से खड़ी थी; अब उन रूपों को समेटकर

देव्यो ब्रह्माणीप्रमुखा लयम्। तस्या देव्यास्तनौ जग्मुरे-
कैवासीत्तदाम्बिका ॥ ६ ॥ देव्युवाच ॥ ७ ॥ अहं विभूत्या
बहुभिरिह रूपैर्यदा स्थिता। तत्संहृतं मयैकैव तिष्ठा-
म्याजौ स्थिरो भव ॥ ८ ॥ ऋषिरुवाच ॥ ९ ॥ ततः प्रववृते
युद्धं देव्याः शुम्भस्य चोभयोः। पश्यतां सर्वदेवानाम-
सुराणां च दारुणम् ॥ १० ॥ शरवर्षैः शितैः शस्त्रैस्तथा-
स्त्रैश्चैव दारुणैः। तयोर्युद्धमभूद्भूयः सर्वलोकभयंकरम् ॥ ११ ॥

अकेली खड़ी हूँ, तू स्थिर होकर युद्ध कर। ७-८। ऋषि कहते हैं—उसके बाद देवताओं
और असुरों के देखते-देखते देवी और शुम्भ से युद्ध होने लगा। ९—१०। तीक्ष्ण बाणों
और भयानक अस्त्र-शस्त्रों से सब लोकों को भयभीत करनेवाला महायुद्ध हुआ। ११।

अम्बिका ने जो सैकड़ों दिव्य अस्त्र चलाये उन्हें दैत्यराज शुम्भ ने अपने अस्त्रों से काट डाला । १२ । शुम्भ ने जिन अस्त्रों का प्रहार किया, उनको देवी ने हूंकार करके अनायास

दिव्यान्यस्त्राणि शतशो मुमुचे यान्यथाम्बिका । बभञ्ज तानि दैत्येन्द्रस्तत्प्रतीघातकर्तृभिः ॥ १२ ॥ मुक्तानि तेन चास्त्राणि दिव्यानि परमेश्वरी । बभञ्ज लीलयैवोग्रहूङ्कारोच्चारणादिभिः ॥ १३ ॥ ततः शरशतैर्देवीमाच्छादयत सोऽसुरः । सापि तत्कुपिता देवी धनुश्चिच्छेद चेषुभिः ॥ १४ ॥ छिन्ने धनुषि दैत्येन्द्रस्तथा शक्तिमथाददे । चिच्छेद देवी चक्रेण तामप्यस्य करे स्थिताम् ॥ १५ ॥ ततः खड्गमुपा-

तोड़ डाला । १३ । शुम्भ ने कुपित होकर सैकड़ों बाणों से देवी को ढक दिया । देवी ने क्रुद्ध होकर अपने बाणों से उसका धनुष काट डाला । १४ । जब धनुष कटकर गिर पड़ा तब उसने एक शक्ति उठाई । देवी ने उसे भी चक्र से काट डाला । १५ । तब

दैत्यराज शुम्भ चमकती हुई ढाल-तलवार लेकर देवी की ओर दौड़ा। १६। देवी ने अपने तीक्ष्ण बाणों से सूर्य की किरणों के समान चमकती हुई उसकी ढाल-तलवार को भी

दाय शतचन्द्रं च भानुमत्। अभ्यधावत्तदा देवीं दैत्यानामधिपेश्वरः॥ १६॥ तस्यापतत एवाशु खड्गं चिच्छेद चण्डिका। धनुर्मुक्तैः शितैर्बाणैश्चर्म चार्ककरामलम्॥१७॥ हताश्वः स तदा दैत्यश्छिन्नधन्वा विसारथिः। जग्राह मुद्गरं घोरमम्बिकानिधनोद्यतः॥ १८॥ चिच्छेदापततस्तस्य मुद्गरं निशितैः शरैः। तथापि सोऽभ्यधावत्तां मुष्टिमुद्यम्य

काट डाला। १७। उसके सारथि और घोड़ों को भी मार डाला, और उसका धनुष भी काट डाला। तब वह मुद्गर लेकर देवी को मारने दौड़ा। १८। देवी ने उसके मुद्गर को भी तीक्ष्ण बाणों से काटकर गिरा दिया। तब वह घूँसा तानकर बड़े वेग से

दौड़ा । १६ । उसने देवी की छाती में घूँसा मारा और देवी ने उसकी छाती में एक थप्पड़ लगाया । २० । थप्पड़ लगते ही दैत्यराज शुम्भ पृथिवी पर गिर पड़ा और शीघ्र

वेगवान् ॥ १९ ॥ स मुष्टिं पातयामास हृदये दैत्यपुङ्गवः । देव्यास्तं चापि सा देवी तलेनोरस्यताडयत् ॥ २० ॥ तलप्रहाराभिहतो निपपात महीतले । स दैत्यराजः सहसा पुनरेव तथोत्थितः ॥ २१ ॥ उत्पत्य च प्रगृह्योच्चैर्देवीं गगनमास्थितः । तत्रापि सा निराधारा युयुधे तेन चण्डिका ॥ २२ ॥ नियुद्धं खे तदा दैत्यश्चण्डिका च परस्परम् । चक्रतुः प्रथमं

ही फिर उठ खड़ा हुआ ।२१। फिर वह देवी को पकड़कर आकाश को उछल गया । वहाँ भी देवी ने निराधार ठहरकर शुम्भ के साथ युद्ध किया । २२ । आकाश में देवी और शुम्भ का बाहुयुद्ध देखकर सिद्ध और मुनियों को बड़ा आश्चर्य हुआ; क्योंकि उससे पहले

कभी आकाश में युद्ध नहीं हुआ था । २३ । चण्डिका ने बड़ी देर तक आकाश में
उसके साथ युद्ध करके उसे ऊपर को उछालकर घुमाया और पृथिवी पर फेंक दिया ।२४।

सिद्धमुनिविस्मयकारकम् ॥ २३ ॥ ततो नियुद्धं सुचिरं
कृत्वा तेनाम्बिका सह । उत्पात्य भ्रामयामास चिक्षेप
धरणीतले ॥ २४ ॥ स क्षिप्तो धरणीं प्राप्य मुष्टिमुद्यम्य
वेगितः । अभ्यधावत दुष्टात्मा चण्डिकानिधनेच्छया २५
तमायान्तं ततो देवी सर्वदैत्यजनेश्वरम् । जगत्यां पातया-
यामास भित्त्वा शूलेन वक्षसि ॥ २६ ॥ स गतासुः पपा-
तोर्व्यां देवीशूलाग्रविक्षतः । चालयन्सकलां पृथ्वीं साब्धि-

वह दुष्ट पृथिवी पर गिरकर फिर उठ खड़ा हुआ और घूँसा तानकर बड़े वेग से देवी
को मारने दौड़ा । २५ । देवी ने दैत्यराज शुम्भ को आते हुए देखकर, उसकी छाती में
शूल मारकर पृथिवी पर गिरा दिया । २६ । देवी के शूल से घायल होकर शुम्भ मर

गया और सम्पूर्ण पृथिवी, समुद्र, पर्वत तथा द्वीपों को कँपाता हुआ पृथिवी पर गिर पड़ा। २७। उस दुष्ट के मरने पर संसार सुखी हो गया; सब प्राणी प्रसन्न हो गये

द्वीपां सपर्वताम् ॥ २७॥ ततः प्रसन्नमखिलं हते तस्मिन्दुरात्मनि। जगत्स्वास्थ्यमतीवाप निर्मलं चाभवन्नभः ॥ २८॥ उत्पातमेघाः सोल्का ये प्रागासंस्ते शमं ययुः। सरितो मार्गवाहिन्यस्तथासंस्तत्र पातिते ॥ २९ ॥ ततो देवगणाः सर्वे हर्षनिर्भरमानसाः। बभूवुर्निहते तस्मिन्गन्धर्वा ललितं जगुः ॥ ३० ॥ अवादयंस्तथैवान्ये ननृतुश्चाप्सरोगणाः।

और आकाश निर्मल हो गया। २८। पहले जो उत्पात होते थे, वे सब उसके मरने पर शान्त हो गये। उल्कापात मिट गया, नदियाँ अपने मार्ग से बहने लगीं। २९। देवता प्रसन्न हो गये और गन्धर्व मधुर स्वर से गाने लगे। ३०। बाजे बजने लगे, अप्सराएँ

नाचने लगीं, शीतल वायु चलने लगी और सूर्य की किरणें निर्मल हो गईं। ३१। उसके मरने पर यज्ञ की अग्नि फिर से जलने लगी। दिशाओं में जो हाहाकार मचा हुआ था, वह सब शान्त हो गया। ३२।

ववुः पुण्यास्तथा वाताः सुप्रभोऽभूद्दिवाकरः ॥३१॥ जज्वलुश्चाग्नयः शान्ताः शान्तादिग्जनितस्वनाः ॥ ३२ ॥

इति श्रीमार्कण्डेयपुराणे सावर्णिके मन्वन्तरे देवीमाहात्म्ये शुम्भवधो नाम दशमोऽध्यायः ॥ १० ॥ उवाच ४ अर्ध० १ श्लो० २७ मं० ३२ एवमादितः ५७५

अथ ध्यानम् ॥ बालरविद्युतिमिन्दुकिरीटां तुङ्गकुचां नयनत्रययुक्ताम् । स्मेरमुखीं वरदांकुशपाशाभीतिकरां प्रभजे भुवनेशीम् ॥ ११ ॥

मेधा ऋषि कहते हैं—देवी ने जब शुम्भ को मार डाला तब इन्द्र और अग्नि सहित सब देवता अभीष्ट लाभ होने से प्रसन्न होकर कात्यायनी देवी की स्तुति करने लगे। १—२।

ऋषिरुवाच ॥ १ ॥ देव्या हते तत्र महासुरेन्द्रे सेन्द्राः सुरा वह्निपुरोगमास्ताम्। कात्यायनीं तुष्टुवुरिष्टलाभा-द्विकासिवक्त्राब्जविकासिताशाः ॥ २ ॥ देवि प्रपन्नार्त्तिहरे प्रसीद प्रसीद मातर्जगतोऽखिलस्य। प्रसीद विश्वेश्वरि पाहि विश्वं त्वमीश्वरी देवि चराचरस्य ॥ ३ ॥ आधारभूता जगतस्त्वमेका महीस्वरूपेण यतः स्थिताऽसि। अपां स्व-

हे देवि, हे शरणागत का दुःख नष्ट करनेवाली, प्रसन्न हो। हे सम्पूर्ण जगत् की माता, प्रसन्न हो; हे विश्वेश्वरी, प्रसन्न होकर विश्व की रक्षा करो। हे देवि, तुम्हीं चर और अचर की ईश्वरी हो। ३। तुम सम्पूर्ण जगत् की आधार हो और तुम्हीं पृथिवी-रूप होकर

स्थित हो। हे अतुल पराक्रमवाली, तुम्हीं जल-रूप से स्थित हो और सम्पूर्ण जगत् में व्याप्त हो। ४। तुम्हीं अतुल पराक्रमवाली वैष्णवी शक्ति होकर जगत् का पालन करती हो और महामाया तुम्हीं हो। तुमने सम्पूर्ण संसार मोहित कर रक्खा है। हे देवि,

रूपस्थितया त्वयैतदाप्यायते कृत्स्नमलङ्घ्यवीर्ये ॥ ४ ॥
त्वं वैष्णवी शक्तिरनन्तवीर्या विश्वस्य बीजं परमासि माया।
संमोहितं देवि समस्तमेतत्त्वं वै प्रसन्ना भुवि मुक्तिहेतुः ॥५॥
विद्याः समस्तास्तव देवि भेदाः स्त्रियः समस्ताः सकला
जगत्सु। त्वयैकया पूरितमम्बयैतत्का ते स्तुतिस्तव्यपरा-

तुम्हारी प्रसन्नता संसार में मुक्ति का कारण है। ५। हे देवि, संसार में जितनी विद्याएँ हैं, वे सब तुम्हीं हो; और जितनी स्त्रियाँ हैं, वे सब तुम्हारी ही अंश हैं। तुम अकेली ही सम्पूर्ण जगत् में व्याप्त हो। हे देवि, इसके सिवा हम लोग और क्या आपकी स्तुति

करें । ६ । तुम सब प्राणियों में स्थित हो जो कोई तुम्हारी स्तुति करता है, उसे स्वर्ग और मुक्ति देती हो । हम लोग किन शब्दों में तुम्हारी स्तुति करें । ७ । तुम सब प्राणियों के हृदय में बुद्धिरूप से स्थित हो, तुम स्वर्ग और मुक्ति देनेवाली हो । हे देवि, हे

परोक्तिः ॥ ६ ॥ सर्वभूता यदा देवी स्वर्गमुक्तिप्रदायिनी । त्वं स्तुता स्तुतये का वा भवन्तु परमोक्तयः ॥ ७ ॥ सर्वस्य बुद्धिरूपेण जनस्य हृदि संस्थिते । स्वर्गापवर्गदे देवि नारायणि नमोस्तुते ॥ ८ ॥ कलाकाष्ठादिरूपेण परिणामप्रदायिनि । विश्वस्योपरतौ शक्ते नारायणि नमोऽस्तु ते ॥९॥ सर्वमङ्गलमङ्गल्ये शिवे सर्वार्थसाधिके । शरण्ये त्र्यम्बके

नारायणि, हम लोग तुमको प्रणाम करते हैं । ८ । तुम कला-काष्ठा आदि काल के परिमाण से सब प्राणियों का अन्त करती हो । सम्पूर्ण जगत् का संहार करने की शक्ति तुम्हीं हो । हे नारायणि; हम लोग तुमको प्रणाम करते हैं । ६ । तुम सब मंगलों का

स्वरूप हो, सब अर्थों को सिद्ध करनेवाली और कल्याण-रूपिणी हो। शरण देनेवाली त्रिनयनी गौरी तुम्हीं हो। हे नारायणि, हम लोग तुमको प्रणाम करते हैं। १०। संसार की सृष्टि, स्थिति और विनाश की शक्ति तुम्हीं हो। तुम नित्या हो, और सब गुणों की

गौरि नारायणि नमोऽस्तु ते ॥ १० ॥ सृष्टिस्थितिविना-शानां शक्तिभूते सनातनि। गुणाश्रये गुणमये नारायणि नमोऽस्तु ते ॥ ११ ॥ शरणागतदीनार्तपरित्राणपरायणे। सर्वस्यार्त्तिहरे देवि नारायणि नमोऽस्तु ते ॥ १२ ॥ हंसयुक्त विमानस्थे ब्रह्माणी रूपधारिणि। कौशाम्भःक्षरिके देवि

आधार हो। हे गुणमये, ये नारायणि, हम लोग तुमको प्रणाम करते हैं। ११। तुम शरण में आये हुए दीन जनों की दुःख से रक्षा करती हो, सबका दुःख दूर करती हो। हे देवि, हे नारायणि, हम लोग तुमको प्रणाम करते हैं। १२। तुम ब्रह्माणी का रूप धारण करके, हंसयुक्त विमान पर बैठकर, कुश से जल छिड़कती हो। हे देवि, हे

नारायणि, हम लोग तुमको प्रणाम करते हैं । १३ । तुम माहेश्वरी-रूप धारण करके त्रिशूल, चन्द्र और सर्प धारण करती हो तथा बैल पर सवार होती हो । हे नारायणि, हम लोग तुमको प्रणाम करते हैं । १४ । तुम कौमारी-रूप धारण करके, मोर पर सवार

नारायणि नमोऽस्तु ते ॥ १३ ॥ त्रिशूलचन्द्राहिधरे महावृषभवाहिनि । माहेश्वरीस्वरूपेण नारायणि नमोऽस्तु ते ॥ १४ ॥ मयूरकुक्कुटवृते महाशक्तिधरेऽनघे । कौमारीरूपसंस्थाने नारायणि नमोऽस्तु ते ॥ १५ ॥ शङ्खचक्रगदाशार्ङ्गगृहीतपरमायुधे । प्रसीद वैष्णवीरूपे नारायणि नमोऽस्तु ते ॥ १६ ॥ गृहीतोग्रमहाचक्रे दंष्ट्रोद्धृतवसुन्धरे । वाराह-

होकर महाशक्ति धारण करती हो । हे पापरहिते, हे नारायणि, हम लोग तुमको प्रणाम करते हैं । १५ । तुम वैष्णवी-रूप होकर, शंख, चक्र, गदा और धनुष धारण करती हो । हे नारायणि, प्रसन्न हो । हम लोग तुमको प्रणाम करते हैं । १६ । तुम वाराह-

रूप धारण करके, हाथ में महाचक्र लेकर, दाँतों से पृथिवी का उद्धार करती हो। हे कल्याणि, हे नारायणि, हम लोग तुमको प्रणाम करते हैं। १७। तुम भयानक नृसिंह-रूप धारण करके तीनों लोकों की रक्षा के लिए दैत्यों का वध करती हो। हे नारायणि,

रूपिणि शिवे नारायणि नमोऽस्तु ते ॥ १७ ॥ नृसिंह-रूपेणोग्रेण हन्तुं दैत्यान् कृतोद्यमे । त्रैलोक्यत्राणसहिते नारायणि नमोऽस्तु ते ॥ १८ ॥ किरीटिनि महावज्रे सहस्र-नयनोज्ज्वले । वृत्रप्राणहरे चैन्द्रि नारायणि नमोऽस्तु ते ॥ १९ ॥ शिवदूतीस्वरूपेण हतदैत्यमहाबले । घोररूपे

हम लोग तुमको प्रणाम करते हैं। १८। तुम इन्द्र की शक्ति हो; किरीट धारण करके हज़ार नेत्रों से शोभित होकर, महावज्र लेकर, वृत्रासुर का विनाश करनेवाली हो। हे नारायणि, हम लोग तुमको प्रणाम करते हैं। १९। तुम शिवदूती का रूप धारण करके दैत्यों का बल नष्ट करती हो। भयानक-रूप धारण करके महाशब्द करती हो। हे

नारायणि, हम लोग तुमको प्रणाम करते हैं। २०। तुम बड़े-बड़े दाँत निकाले, भयावनी सूरत, मुण्डमाल पहने, चण्डमुण्ड का विनाश करनेवाली चामुण्डा-रूप हो। हे नारायणि, हम लोग तुमको प्रणाम करते हैं। २१। तुम लक्ष्मी, लज्जा, महाविद्या, श्रद्धा,

महारावे नारायणि नमोऽस्तु ते ॥ २० ॥ दंष्ट्राकरालवदने शिरोमालाविभूषणे।चामुण्डे मुण्डमथने नारायणि नमोऽस्तु ते ॥ २१ ॥ लक्ष्मि लज्जे महाविद्ये श्रद्धे पुष्टि स्वधे ध्रुवे। महारात्रि महाविद्ये नारायणि नमोऽस्तु ते ॥ २२ ॥ मेधे सरस्वति वरे भूति बाभ्रवि तामसि। नियते त्वं प्रसीदेशे नारायणि नमोऽस्तु ते ॥ २३ ॥ सर्वस्वरूपे सर्वेशे सर्वशक्ति-

पुष्टि और स्वधारूपिणी हो। महारात्रि और महामाया तुम्हीं हो। हे नारायणि, हम लोग तुमको प्रणाम करते हैं। २२। तुम मेधा, सरस्वती, ऐश्वर्य, सत्त्व, रज और तमोगुणरूपिणी हो। हे ईश्वरि, हे नारायणि, प्रसन्न हो। हम लोग तुमको प्रणाम करते हैं।२३।

हे सर्वस्वरूपे, हे सर्वेश्वरि, हे सर्वशक्तिसमन्विते, हे दुर्गे, भय से हम लोगों की रक्षा करो। हे देवि, हम लोग तुमको प्रणाम करते हैं। २४। तीन नेत्रों से शोभित यह तुम्हारा सुन्दर मुँह सब प्रकार के भय से हमारी रक्षा करे। हे कात्यायनि, हम लोग

समन्विते। भयेभ्यस्त्राहि नो देवि दुर्गे देवि नमोऽस्तु ते॥२४॥ एतत्ते वदनं सौम्यं लोचनत्रयभूषितम्। पातु नः सर्वभीति-भ्यः कात्यायनि नमोऽस्तु ते॥ २५॥ ज्वालाकरालमत्यु-ग्रमशेषासुरसूदनम्। त्रिशूलं पातु नो भीतेर्भद्रकालि नमोऽस्तु ते॥ २६॥ हिनस्ति दैत्यतेजांसि स्वनेनापूर्य्य या जगत्। सा घण्टा पातु नो देवि पापेभ्योऽनस्सुतानिव २७

तुमको प्रणाम करते हैं। २५। हे भद्रकालि, तुमको प्रणाम है। उग्र असुरों का नाश करनेवाला तुम्हारा भयानक त्रिशूल भय से हम लोगों की रक्षा करे। २६। हे देवि, जिसका शब्द संसार भर में फैलकर दैत्यों का तेज नष्ट करता है, वह तुम्हारी घंटा, पुत्रों

के समान हम लोगों की, सब पापों से रक्षा करे। २७। हे चण्डिके, असुरों के रुधिर और चर्बी से लथपथ, यह चमकता हुआ तुम्हारा खड्ग हम लोगों का कल्याण करे। हम लोग तुमको प्रणाम करते हैं। २८। जब तुम प्रसन्न होती हो तब सब रोगों का

असुरासृग्वसापङ्कचर्चितस्ते करोज्ज्वलः। शुभाय खड्गो भवतु चण्डिके त्वां नता वयम्॥ २८॥ रोगानशेषानपहंसि तुष्टा रुष्टा तु कामान्सकलानभीष्टान्। त्वामाश्रितानां न विपन्नराणां त्वामाश्रिता ह्याश्रयतां प्रयान्ति॥ २९॥ एतत्कृतं यत्कदनं त्वयाद्य धर्मद्विषां देवि महासुराणाम्।

नाश कर देती हो और जब रुष्ट होती हो तब सब अभीष्ट कामों को नष्ट कर देती हो। तुम्हारे आश्रित मनुष्यों को दुःख नहीं होता और जो तुम्हारा आश्रय लेते हैं, वे दूसरों को भी आश्रय देने योग्य हो जाते हैं। २९। हे देवि, तुमने अनेक रूप धारण करके

धर्मद्रोही असुरों का विनाश किया। यह काम तुम्हारे सिवा और कौन कर सकता है? ।३०। चौदह विद्याओं, चार वेदों, छः शास्त्रों और ज्ञानरूप दीपक के होने पर

रूपैरनेकैर्बहुधात्ममूर्तिं कृत्वाम्बिके तत्प्रकरोति कान्या ३०
विद्यासु शास्त्रेषु विवेकदीपेष्वाद्येषु वाक्येषु च का त्वदन्या।
ममत्वगर्तेऽतिमहान्धकारे विभ्रामयत्येतदतीव विश्वम् ३१
रक्षांसि यत्रोग्रविषाश्च नागा यत्रारयो दस्युबलानि यत्र।
दावानलो यत्र तथाब्धिमध्ये तत्र स्थिता त्वं परिपासि
विश्वम् ॥ ३२ ॥ विश्वेश्वरि त्वं परिपासि विश्वं विश्वा-

भी इस संसार को ममता-रूपी घोर अन्धकार-गर्त में तुम्हारे सिवा और कौन घुमा सकता है। ३१। जहाँ राक्षस, विषैले साँप, शत्रु और चोर होते हैं, वहाँ तथा समुद्र और दावानल में तुम स्थित होकर संसार की रक्षा करती हो। ३२। तुम विश्वेश्वरी

हो; क्योंकि विश्व का पालन करती हो। तुम विश्वात्मिका हो; क्योंकि विश्व को धारण करती हो। ब्रह्मा, विष्णु और महेश, जो इस विश्व के स्वामी हैं, वे भी तुम्हारी वन्दना करते हैं। जो लोग तुम्हारे विनीत भक्त हैं, वे संसार को आश्रय दे सकते

त्मिका धारयसीति विश्वम्। विश्वेशवन्द्या भवती भवन्ति विश्वाश्रया ये त्वयि भक्तिनम्राः॥ ३३॥ देवि प्रसीद परिपालय नोऽरिभीतेर्नित्यं यथासुरवधादधुनैव सद्यः। पापानि सर्वजगतां प्रशमं नयाशु उत्पातपाकजनितांश्च महोपसर्गान्॥ ३४॥ प्रणतानां प्रसीद त्वं देवि विश्वार्तिहारिणि।

हैं। ३३। हे देवि, जिस प्रकार तुमने इस समय असुरों को मारकर हम लोगों की रक्षा की है, उसी प्रकार सर्वदा शत्रुओं के भय से हमारी रक्षा करती रहो, और सम्पूर्ण जगत् के पापों को नष्ट करके उत्पात करनेवाले विघ्नों को भी दूर करो। ३४। हे देवि,

हे संसार का दुःख हरनेवाली, तीनों लोकों के निवासी तुम्हारी पूजा करते हैं। हम लोग बार-बार तुमको प्रणाम करते हैं, तुम प्रसन्न होकर हमको वरदान दो। ३५। देवताओं की यह स्तुति सुनकर देवी ने कहा—हे देवताओ, तुम जो वर माँगना चाहो,

त्रैलोक्यवासिनामीड्ये लोकानां वरदा भव ॥ ३५ ॥ देव्युवाच ॥ ३६ ॥ वरदाहं सुरगणा वरं यं मनसेच्छथ। तं वृणुध्वं प्रयच्छामि जगतामुपकारकम् ॥ ३७॥ देवा ऊचुः ॥३८॥ सर्वाबाधाप्रशमनं त्रैलोक्यस्याखिलेश्वरि। एवमेतत् त्वया कार्यमस्मद्वैरिविनाशनम् ॥ ३९ ॥ देव्युवाच ॥ ४० ॥ वैव-

वह माँगो। मैं तुमको दूँगी। उससे तुम लोगों का और सम्पूर्ण जगत् का उपकार होगा। ३६-३७। देवताओं ने कहा—हे विश्वेश्वरि, जैसे इस समय तुमने हमारे शत्रुओं को मारकर तीनों लोकों की सब बाधाएँ शान्त की हैं, वैसे ही सदा हमारे शत्रुओं का विनाश करती रहो। ३८-३९। देवी ने कहा—वैवस्वत मन्वन्तर में जब अट्ठाइसवाँ

युग आवेगा; तब महासुर शुम्भ और निशुम्भ फिर जन्म लेंगे। ४०-४१। तब मैं नन्द गोप के घर में यशोदा के गर्भ से जन्म लूँगी और उन दोनों का विनाश करके विन्ध्या-

स्वतेऽन्तरे प्राप्ते अष्टाविंशतिमे युगे। शुम्भो निशुम्भश्चैवा-न्यावुत्पत्स्येते महासुरौ ॥४१॥ नन्दगोपगृहे जाता यशोदा-गर्भसम्भवा । ततस्तौ नाशयिष्यामि विन्ध्याचलनिवा-सिनी ॥ ४२ ॥ पुनरप्यतिरौद्रेण रूपेण पृथिवीतले । अव-तीर्य हनिष्यामि वैप्रचित्तांस्तु दानवान् ॥ ४३ ॥ भक्ष-यन्त्याश्च तानुग्रान्वैप्रचित्तान्महासुरान् । रक्ता दन्ता भविष्यन्ति दाडिमीकुसुमोपमाः ॥ ४४ ॥ ततो मां देवताः

चल पर निवास करूँगी। ४२। उसके बाद फिर अत्यन्त भयानक-रूप से पृथिवी में अवतार लेकर वैप्रचित्त असुरों को मारूँगी। ४३। उन वैप्रचित्तों को भक्षण करते-करते मेरे दाँत अनार के फूल के समान लाल हो जायँगे। ४४। स्वर्ग में देवता और मृत्यु-

लोक में मनुष्य मेरी स्तुति करेंगे और मुझे रक्तदन्तिका कहेंगे । ४५ । उसके बाद एक ऐसा समय आवेगा, जब सौ वर्ष तक वर्षा नहीं होगी और मुनि लोग जल के लिए

स्वर्गे मर्त्यलोके च मानवाः । स्तुवन्तो व्याहरिष्यन्ति सततं रक्तदन्तिकाम् ॥ ४५ ॥ भूयश्च शतवार्षिक्यामना-वृष्ट्यामनम्भसि । मुनिभिः संस्तुता भूमौ संभविष्याम्य-योनिजा ॥ ४६ ॥ ततः शतेन नेत्राणां निरीक्षिष्यामि यन्मुनीन् । कीर्तयिष्यन्ति मनुजाः शताक्षीमिति मां ततः ॥ ४७ ॥ ततोऽहमखिलं लोकमात्मदेहसमुद्भवैः । भरि-

मेरी स्तुति करेंगे, तब मेरा अयोनिज अवतार होगा । ४६ । फिर मैं सौ नेत्रों से मुनियों को देखूँगी, तब लोग मुझे शताक्षी कहेंगे । ४७ । हे देवताओ, जब तक वर्षा नहीं

होगी, तब तक मैं अपनी देह से शाक उत्पन्न करके संसार का भरण-पोषण करूँगी। ४८।
तब मैं शाकम्भरी नाम से संसार में विख्यात हूँगी। उसी समय दुर्ग नामक महाअसुर

ष्यामि सुराः शाकैरावृष्टेः प्राणधारकैः ॥ ४८ ॥ शाकम्भ-
रीति विख्यातिं तदा यास्याम्यहं भुवि। तत्रैव च वधि-
ष्यामि दुर्गमाख्यं महासुरम् ॥ ४९ ॥ दुर्गा देवीति विख्यातं
तन्मे नाम भविष्यति। पुनश्चाहं यदा भीमं रूपं कृत्वा
हिमाचले ॥ ५० ॥ रक्षांसि भक्षयिष्यामि मुनीनां त्राण-
कारणात्। तदा मां मुनयः सर्वे स्तोष्यन्त्यानम्रमूर्त्तयः ५१॥
भीमादेवीति विख्यातं तन्मे नाम भविष्यति। यदारुणा-

को भी मारूँगी। ४९। तब मेरा नाम दुर्गा होगा। उसके बाद जब मैं भयानक रूप
धारण करके, मुनियों की रक्षा के लिए हिमालय पर्वत पर, राक्षसों का भक्षण करूँगी,
तब मुनि लोग विनम्र होकर मेरी स्तुति करेंगे। ५०—५१। तब मेरा नाम भीमा होगा।

फिर जब अरुण नाम का दैत्य तीनों लोकों में उपद्रव करेगा, तब मैं असंख्य भ्रमरों का रूप धारण करके तीनों लोकों के हित के लिए उस महाअसुर का वध करूँगी। ५२-५३।

ख्यस्त्रैलोक्ये महाबाधां करिष्यति ॥ ५२ ॥ तदाहं भ्रामरं रूपं कृत्वा संख्येयषट्पदम्। त्रैलोक्यस्य हितार्थाय वधिष्यामि महासुरम् ॥ ५३ ॥ भ्रामरीति च मां लोकास्तदा स्तोष्यन्ति सर्वतः। इत्थं यदा यदा बाधा दानवोत्था भविष्यति ॥ ५४ ॥ तदा तदावतीर्याहं करिष्याम्यरिसंक्षयम् ॥ ५५ ॥

इति श्रीमार्कण्डेयपुराणे सावर्णिके मन्वन्तरे देवी-

तब लोग मुझे भ्रामरी कहेंगे और मेरी स्तुति करेंगे। इस प्रकार जब कभी दानव उपद्रव करेंगे, तब मैं अवतार लेकर उन शत्रुओं का संहार करूँगी। ५४-५५।

देवी ने कहा—जो पुरुष सावधान होकर इन स्तोत्रों से नित्य मेरी स्तुति करेगा, मैं

माहात्म्ये देव्याः स्तुतिर्नामैकादशोऽध्यायः ॥ ११ ॥
उवाच ४ अर्ध० १ श्लो० ५० मं० ५५ एवमादितः ६३०

अथ ध्यानम् ॥ विद्युद्दामसमप्रभां मृगपतिस्कन्धे स्थितां भीषणां कन्याभिः करवालखेटविलसद्धस्ताभिरासेविताम्। हस्तैश्चक्रगदासिखेटविशिखाँश्चापं गुणं तर्जनीं बिभ्राणामनलात्मिकां शशिधरां दुर्गां त्रिनेत्रां भजे ॥१२॥

देव्युवाच ॥ १ ॥ एभिः स्तवैश्च मां नित्यं स्तोष्यते यः समाहितः। तस्याहं सकलां बाधां शमयिष्याम्यसंशयम् २ मधुकैटभनाशं च महिषासुरघातनम्। कीर्तयिष्यन्ति ये

निस्सन्देह उसकी सब बाधाएँ दूर करूँगी। १-२। जो लोग मधु-कैटभ के विनाश,

महिषासुर के वध और शुम्भ-निशुम्भ के वध की कथा कहेंगे, अथवा अष्टमी, चतुर्दशी या नवमी के दिन एकाग्रचित्त होकर भक्तिपूर्वक मेरे इस उत्तम माहात्म्य को सुनेंगे, उनसे

तद्वद्वधं शुम्भनिशुम्भयोः ॥ ३ ॥ अष्टम्यां च चतुर्दश्यां नवम्यां चैकचेतसः । श्रोष्यन्ति चैव ये भक्त्या मम माहात्म्यमुत्तमम् ॥ ४ ॥ न तेषां दुष्कृतं किञ्चिद्दुष्कृतोत्थानचापदः । भविष्यति न दारिद्र्यं न चैवेष्टवियोजनम् ॥ ५ ॥ शत्रुतो न भयं तस्य दस्युतो वा न राजतः । न शस्त्रानलतो यौघात्कदाचित्सम्भविष्यति ॥ ६ ॥ तस्मान्ममैतन्माहा-

किसी तरह का दुष्कर्म न होगा, और दुष्कर्मों से उत्पन्न आपत्ति न आवेगी । दरिद्रता न होगी और प्रियजनों का वियोग न होगा । ३–५ । शत्रु, चोर, राजा, शस्त्र, अग्नि और जल से कभी भय न होगा । ६ । इसलिए सावधान होकर भक्तिपूर्वक मेरे इस

माहात्म्य को पढ़ना और सुनना चाहिए। यह उत्तम माहात्म्य सदा कल्याण करनेवाला है। ७। यह मेरा माहात्म्य महामारी से उत्पन्न सब उपद्रवों और तीन प्रकार के उत्पातों

त्म्यं पठितव्यं समाहितैः। श्रोतव्यं च सदा भक्त्या परं स्वस्त्ययनं हि तत् ॥ ७॥ उपसर्गानशेषांस्तु महामारी-समुद्भवान्। तथा त्रिविधमुत्पातं माहात्म्यं शमयेन्मम ॥८॥ यत्रैतत्पठ्यते सम्यङ्नित्यमायतने मम । सदा न तद्वि-मोक्ष्यामि सान्निध्यं तत्र मे स्थितम् ॥ ९ ॥ बलिप्रदाने पूजायामग्निकार्ये महोत्सवे । सर्वं ममैतच्चरितमुच्चार्यं श्राव्यमेव च ॥ १० ॥ जानताजानता वापि बलिपूजां तथा

को शान्त करता है। ८। जिस घर में यह माहात्म्य प्रतिदिन पढ़ा जाता है, उस घर को मैं कभी नहीं छोड़ती हूँ, उसी के समीप स्थित रहती हूँ। ९। बलिप्रदान, पूजा, हवन और महोत्सव में मेरे इस सम्पूर्ण चरित्र को पढ़ना और सुनना चाहिए। १०। ज्ञानी

अथवा अज्ञानी, चाहे जिस तरह भी बलिप्रदान, पूजा या हवन करता है, मैं उसे बड़े प्रेम से ग्रहण करती हूँ। ११। शरद् ऋतु में प्रत्येक वर्ष की महापूजा की जाती है,

कृताम्। प्रतीच्छिष्याम्यहं प्रीत्या वह्निहोमं तथा कृतम् ११॥
शरत्काले महापूजा क्रियते या च वार्षिकी। तस्यां ममै-
तन्माहात्म्यं श्रुत्वा भक्तिसमन्वितः॥ १२॥ सर्वाबाधा-
विनिर्मुक्तो धनधान्यसुतान्वितः। मनुष्यो मत्प्रसादेन
भविष्यति न संशयः॥ १३॥ श्रुत्वा ममैतन्माहात्म्यं
तथा चोत्पत्तयः शुभाः। पराक्रमं च युद्धेषु जायते निर्भयः

उसमें जो मनुष्य मेरे इस माहात्म्य को भक्तिपूर्वक सुनेगा, वह मेरी कृपा से सब बाधाओं से छूटकर धन-धान्य और पुत्र प्राप्त करेगा। इसमें कोई संदेह नहीं है। १२-१३। मेरा यह माहात्म्य, मेरी उत्पत्ति, और युद्ध में मेरा पराक्रम सुनकर मनुष्य निर्भय हो

जाते हैं । १४। उनके शत्रुओं का नाश हो जाता है, कल्याण होता है और उनके कुल की वृद्धि होती है । १५। शान्ति कर्मों में, दुःस्वप्न देखने पर, और ग्रह-पीड़ा होने पर मेरा यह

पुमान् ॥ १४ ॥ रिपवः संक्षयं यान्ति कल्याणं चोपपद्यते । नन्दते च कुलं पुंसां माहात्म्यं मम शृण्वताम् ॥ १५ ॥ शान्तिकर्माणि सर्वत्र तथा दुःस्वप्नदर्शने । ग्रहपीडासु चोग्रासु माहात्म्यं शृणुयान्मम ॥ १६ ॥ उपसर्गाः शमं यान्ति ग्रहपीडाश्च दारुणाः । दुःस्वप्नं च नृभिर्दृष्टं सुस्वप्नमुपजायते १७ बालग्रहाभिभूतानां बालानां शान्तिकारकम् ।

माहात्म्य सुनना चाहिए । १६ । इसके सुनने से ग्रह-पीड़ा और सब उपद्रव शान्त हो जाते हैं, और दुःस्वप्न सुस्वप्न हो जाते हैं । १७ । यह मेरा माहात्म्य बालग्रहों से पीड़ित

बालकों को शान्त करनेवाला, और मनुष्यों के आपस के वैमनस्य को मिटाकर मित्रता करानेवाला है। १८। दुराचारी मनुष्यों का बल नष्ट करनेवाला है। इस माहात्म्य के

संघातभेदे च नृणां मैत्रीकरणमुत्तमम् ॥ १८ ॥ दुर्वृत्ताना-मशेषाणां बलहानिकरं परम्। रक्षोभूतपिशाचानां पठना-देवनाशनम् ॥ १९ ॥ सर्वं ममैतन्माहात्म्यं मम सन्निधिकार-कम्। पशुपुष्पार्घधूपैश्च गन्धदीपैस्तथोत्तमैः ॥ २० ॥ विप्राणां भोजनैर्होमैः प्रोक्षणीयैरहर्निशम्। अन्यैश्च विविधैर्भोगैः प्रदानैर्वत्सरेण या ॥ प्रीतिर्मे क्रियते सास्मि-

पढने से राक्षस, भूत और पिशाचों का नाश हो जाता है। १९। मेरा यह माहात्म्य मनुष्यों को मेरे समीप पहुँचानेवाला है। पशु, पुष्प, अर्घ्य, धूप, गन्ध, दीप, ब्राह्मण-भोजन, होम, वर्षभर तक रात-दिन पंचामृत का अभिषेक और अन्य अनेक प्रकार के भोग, जो

मेरे प्रसन्न करने के लिए लगाये जाते हैं, उनका फल इस माहात्म्य के पढ़ने अथवा सुनने से ही मिल जाता है। इस माहात्म्य के सुनने से सब पाप नष्ट हो जाते हैं और मनुष्य नीरोग हो जाता है। २०–२२। मेरे जन्मों की कथा सुनने से भूतों से रक्षा

न्सकृत्सुचरिते श्रुते। श्रुतं हरति पापानि तथारोग्यं प्रयच्छति ॥ २२ ॥ रक्षां करोति भूतेभ्यो जन्मनां कीर्तनं मम। युद्धेषु चरितं यन्मे दुष्टदैत्यनिबर्हणम् ॥ २३ ॥ तस्मिञ्छ्रुते वैरिकृतं भयं पुंसां न जायते। युष्माभिः स्तुतयो याश्च याश्च ब्रह्मर्षिभिः कृताः ॥ २४ ॥ ब्रह्मणा च कृतास्तास्तु प्रयच्छन्ति शुभां मतिम्। अरण्ये प्रान्तरे वापि दावाग्नि-

होती है, और मैंने युद्ध में जो दुष्ट दैत्यों का विनाश किया है, उस चरित्र के सुनने से मनुष्यों को शत्रुओं का भय नहीं रहता। जो स्तुति तुम लोगों ने, ब्रह्मर्षियों ने, और ब्रह्मा ने की है, उसके पढ़ने से अच्छी बुद्धि मिलती है। जो मनुष्य वन में दावाग्नि से

घिर गया हो, जिसे निर्जन स्थान में चोरों ने घेर लिया हो, जिसे शत्रुओं ने पकड़ लिया हो, वन में सिंह, बाघ या जंगली हाथियों ने घेर लिया हो, राजा ने कुपित होकर जिसे

परिवारितः ॥ २५ ॥ दस्युभिर्वा वृतः शून्ये गृहीतो वापि
शत्रुभिः । सिंहव्याघ्रानुयातो वा वने वा वनहस्तिभिः २६
राज्ञा क्रुद्धेन चाज्ञप्तो वध्यो बन्धगतोऽपि वा । आघूर्णितो
वा वातेन स्थितः पोते महार्णवे ॥ २७ ॥ पतत्सु चापि
शस्त्रेषु संग्रामे भृशदारुणे । सर्वाबाधासु घोरासु वेदनाभ्य-
र्दितोऽपि वा ॥ २८ ॥ स्मरन्ममैतच्चरितं नरो मुच्येत सङ्क-

प्राणदंड की आज्ञा दी हो, जो बन्धन में पड़ा हो, जिसकी नाव समुद्र में तूफान में पड़ गई हो, युद्ध में जिसपर तीक्ष्ण शस्त्रों का प्रहार हो रहा हो अथवा भयानक बाधाओं की वेदना से जो पीड़ित हो, वह मनुष्य मेरे इस माहात्य का स्मरण करने से सब दुःखों से

छूट जाता है। मेरे चरित्र का पाठ करने से, मेरे प्रभाव से, सिंह, चोर और शत्रु आदि दूर से ही भाग जाते हैं। २३–३०। मेधा ऋषि कहते हैं—यह कहकर भगवती चण्डिका

टात्। मम प्रभावात्सिंहाद्या दस्यवो वैरिणस्तथा ॥ २९ ॥ दूरादेव पलायन्ते स्मरतश्चरितं मम ॥ ३० ॥ ऋषिरुवाच ॥ ३१ ॥ इत्युक्त्वा सा भगवती चण्डिका चण्डविक्रमा ॥ ३२ ॥ पश्यतां सर्वदेवानां तत्रैवान्तरधीयत। तेऽपि देवा निरातङ्काः स्वाधिकारान्यथा पुरा ॥ ३३ ॥ यज्ञभागभुजः सर्वे चक्रुर्विनिहतारयः। दैत्याश्च देव्या निहते शुम्भे देवरिपौ युधि ॥ ३४ ॥ जगद्विध्वंसिनि तस्मिन् महो-

देवताओं के देखते ही देखते उसी स्थान पर अन्तर्द्धान हो गईं। देवता शत्रुओं का विनाश हो जाने से निर्भय हो गये और पहले की तरह अपने अधिकार पाकर यज्ञ का भाग लेने लगे। देवताओं के शत्रु, जगत् का विध्वंस करनेवाले, महापराक्रमी शुम्भ-

निशुम्भ के मारे जाने पर, बचे हुए दैत्य पाताल को चले गये। ३१—३५। हे राजन्, इस प्रकार वह नित्या भगवती बार-बार उत्पन्न होकर संसार की रक्षा करती है। ३६।

ग्रेऽतुलविक्रमे। निशुम्भे च महावीर्ये शेषाः पातालमा-
ययुः ॥ ३५ ॥ एवं भगवती देवी सा नित्यापि पुनः पुनः।
सम्भूय कुरुते भूप जगतः परिपालनम् ॥ ३६ ॥ तयैत-
न्मोह्यते विश्वं सैव विश्वं प्रसूयते। सा याचिता च विज्ञानं
तुष्टा ऋद्धिं प्रयच्छति ॥ ३७ ॥ व्याप्तं तयैतत्सकलं ब्रह्मा-
ण्डं मनुजेश्वर। महाकाल्या महाकाले महामारीस्वरू-

वही संसार को मोहित करती है और वही इस जगत् को उत्पन्न करती है। उसी से याचना करने पर ज्ञान प्राप्त होता है, और जब वह सन्तुष्ट होती है तब ऋद्धि देती है। ३७। हे राजन्, वह इस सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड में व्याप्त है। वह प्रलयकाल में महाकाली

और महामारी का रूप धारण करती है । ३८ । वह प्रलय के समय महामारी हो जाती है और जगत् की उत्पत्ति के समय सृष्टि-रूपा होती है । संसार का पालन करने के

पया ॥ ३८ ॥ सैव काले महामारी सैव सृष्टिर्भवत्यजा ।
स्थितिं करोति भूतानां सैव काले सनातनी ॥ ३९ ॥ भव-
काले नृणां सैव लक्ष्मीर्वृद्धिप्रदा गृहे । सैवाभावे तथा
लक्ष्मीर्विनाशायोपजायते ॥ ४० ॥ स्तुता संपूजिता पुष्पै-

समय वही सनातनी देवी सब प्राणियों का पालन करती है । ३९ । उन्नति के समय वही मनुष्यों के घरों में लक्ष्मी-रूप होकर स्थित होती है । वही वृद्धि करती है, और आपत्ति के समय वही लक्ष्मी विनष्ट हो जाती है । ४० । स्तुति करने से, तथा पुष्प धूप

और गन्ध आदि से पूजन करने से वही भगवती धन, पुत्र और धर्म में सद्बुद्धि देती है। ४१।

धूपगन्धादिभिस्तथा। ददाति वित्तं पुत्राँश्च मतिं धर्मे तथा शुभाम् ॥ ४१ ॥

इति श्रीमार्कण्डेयपुराणे सावर्णिके मन्वन्तरे देवीमाहात्म्ये फलस्तुतिर्नाम द्वादशोऽध्यायः ॥ १२ ॥ उवाच २ अर्ध २ श्लो० ३७ मं० ४१ एवमादितः ६७१

अथ ध्यानम् ॥ बालार्कमण्डलाभासां चतुर्बाहुं त्रिलोचनाम्। पाशाङ्कुशवराभीतीर्धारयन्तीं शिवां भजे ॥१३॥

मेधा ऋषि कहते हैं—हे राजन्, हमने देवी का यह उत्तम माहात्म्य तुमसे कहा। जिस देवी का यह प्रभाव तुमने सुना है, वही देवी इस जगत् को धारण करती है। १—२। वही भगवती ज्ञान उत्पन्न करती है। वह भगवान् विष्णु की माया है, उसी के प्रभाव से

ऋषिरुवाच ॥ १ ॥ एतत्ते कथितं भूप देवीमाहात्म्यमुत्तमम्। एवं प्रभावा सा देवी ययेदं धार्यते जगत् ॥ २ ॥ विद्या तथैव क्रियते भगवद्विष्णुमायया। तया त्वमेष वैश्यश्च तथैवान्ये विवेकिनः ॥ ३ ॥ मोह्यन्ते मोहिताश्चैव मोहमेष्यन्ति चापरे। तामुपैहि महाराज शरणं परमेश्वरीम् ॥ ४ ॥ आराधिता सैव नृणां भोगस्वर्गापवर्गदा ॥ ५ ॥ मार्कण्डेय

तुमको और इस वैश्य को मोह हुआ है। उसके प्रभाव से अन्य बड़े-बड़े ज्ञानी पुरुष मोहित हो चुके हैं, मोहित हैं, और मोहित होंगे। इसलिए हे महाराज, तुम उसी परमेश्वरी की शरण में जाओ। जो मनुष्य उसकी आराधना करते हैं, उनको वह भोग, स्वर्ग

और मोक्ष देती है । ३—५ । मार्कण्डेय कहते हैं—मेधा ऋषि का यह वचन सुनकर, राज्य छिन जाने से और ममता से दुखित, महाराज सुरथ उनको प्रणाम करके शीघ्र तपस्या

उवाच॥ ६ ॥ इति तस्य वचः श्रुत्वा सुरथः स नराधिपः ॥७॥ प्रणिपत्य महाभागं तमृषिं शंसितव्रतम् । निर्विण्णोऽति-ममत्वेन राज्यापहरणेन च ॥ ८ ॥ जगाम सद्यस्तपसे स च वैश्यो महामुने । संदर्शनार्थमम्बाया नदीपुलिनसं-स्थितः ॥ ९ ॥ स च वैश्यस्तपस्तेपे देवीसूक्तं परं जपन् । तौ तस्मिन्पुलिने देव्याः कृत्वा मूर्तिं महीमयीम् ॥ १० ॥ अर्हणां चक्रतुस्तस्याः पुष्पधूपाग्नितर्पणैः । निराहारौ यता-

करने चले गये । हे महामुने, वह वैश्य भी भगवती के दर्शनार्थ तपस्या करने के लिए नदी के किनारे गया । ६—९ । वैश्य ने देवीसूक्त का जप करके कठोर तपस्या की । राजा और वैश्य दोनों, नदी के किनारे देवी की मूर्ति मिट्टी की बनाकर पुष्प, धूप, होम

और तर्पण करके नित्य पूजा करने लगे। वे पहले थोड़ा भोजन करते थे, फिर निराहार रहने लगे। एकाग्रचित्त होकर अपने शरीर के रुधिर से बलि देने लगे। इस प्रकार सावधानी से तीन वर्ष तपस्या करने पर जगद्धात्री चण्डिका प्रसन्न हुईं और उन दोनों

हारौ तन्मनस्कौ समाहितौ ॥ ११ ॥ ददतुस्तौ बलिं चैव निज गात्रासृगुक्षितम्। एवं समाराधयतोस्त्रिभिर्वर्षैर्यतात्मनोः ॥ १२ ॥ परितुष्टा जगद्धात्री प्रत्यक्षं प्राह चण्डिका ॥ १३ ॥ देव्युवाच ॥ १४ ॥ यत्प्रार्थ्यते त्वया भूप त्वया च कुलनन्दन। मत्तस्तत्प्राप्यतां सर्वं परितुष्टा ददामि तत् ॥ १५ ॥ मार्कण्डेय उवाच ॥ १६ ॥ ततो वव्रे नृपो

के सामने आकर बोलीं। १०-१३। देवी ने कहा—हे राजन्, मैं तुमसे सन्तुष्ट हूँ। तुम जो कुछ माँगोगे, वह मैं दूँगी। तुम जो चाहते हो, वह मुझसे प्राप्त करो, और हे वैश्य, तुम भी मुझसे जो प्रार्थना करोगे, वह पाओगे। १४-१५। मार्कण्डेय ऋषि कहते हैं—

देवी का यह वचन सुनकर राजा ने कहा—मुझे दूसरे जन्म में चिरस्थायी राज्य मिले, जो कभी नष्ट न हो और इस जन्म में मैं अपने बल से शत्रुओं को मारकर अपना राज्य

राज्यमविभ्रंश्यन्यजन्मनि। अत्रैव च निजं राज्यं हतशत्रुबलं बलात् ॥ १७ ॥ सोऽपि वैश्यस्ततो ज्ञानं वव्रे निर्विण्णमानसः। ममेत्यहमिति प्राज्ञः सङ्गविच्युतिकारकम् ॥ १८ ॥ देव्युवाच ॥ १९ ॥ स्वल्पैरहोभिर्नृपते स्वं राज्यं प्राप्स्यते भवान् ॥ २० ॥ हत्वा रिपूनस्खलितं तव तत्र भविष्यति ॥ २१ ॥ मृतश्च भूयः संप्राप्य जन्म देवा-

प्राप्त करूँ। उसके बाद समाधि वैश्य ने संसार से विरक्त होकर "यह मेरा है, मैं इसका स्वामी हूँ" इस प्रकार के मोह का नाश करनेवाला तत्त्वज्ञान माँगा। १६–१८। देवी ने कहा—हे राजन्, थोड़े ही दिनों में तुम अपना राज्य पाओगे। तुम अपने शत्रुओं को

मारकर अटल राज्य करोगे, और जब यह शरीर त्यागोगे तब सूर्य से जन्म पाकर सावर्णि नामक मनु होगे। देवी ने समाधि वैश्य से कहा—हे वैश्यवर्य, तुमने जो अभीष्ट वर माँगा

द्विवस्वतः ॥ २२ ॥ सावर्णिको मनुर्नाम भवान् भुवि भविष्यति ॥ २३ ॥ वैश्यवर्य त्वया यश्च वरोऽस्मत्तोऽभिवाञ्छितः ॥ २४ ॥ तं प्रयच्छामि संसिद्ध्यै तव ज्ञानं भविष्यति ॥ २५ ॥ मार्कण्डेय उवाच ॥ २६ ॥ इति दत्त्वा तयोर्देवी यथाभिलषितं वरम्। बभूवान्तर्हिता सद्यो भक्त्या ताभ्यामभिष्टुता ॥ २७ ॥ एवं देव्या वरं लब्ध्वा सुरथः

है, वह मैं तुमको देती हूँ। तुम मोक्ष के लिए ज्ञान प्राप्त करोगे। १९—२५। मार्कण्डेय कहते हैं—इस प्रकार देवी ने राजा और वैश्य का अभीष्ट वर दिया। उन दोनों ने भक्तिपूर्वक देवी की स्तुति की। उसके बाद देवी शीघ्र अन्तर्द्धान हो गईं। २६—२७।

देवी के वरदान से राजा सुरथ सूर्य से जन्म पाकर सावर्णि मनु होंगे। २८—२९।

क्षत्रियर्षभः। सूर्याज्जन्म समासाद्य सावर्णिर्भविता मनुः २८
सावर्णिर्भविता मनुः ॐ॥ २९॥

इति श्रीमार्कण्डेयपुराणे सावर्णिके मन्वन्तरे देवीमाहात्म्ये सुरथवैश्ययोर्वरप्रदानं नाम त्रयोदशोऽध्यायः॥१३॥

उवाच ६ अर्ध० ११ श्लो० १२ मं० २९ एवमादितः७००
समस्त उवाच ५७ अर्ध० ४२ श्लो ५३५ अवदानम् ६६

अथ ऋग्वेदोक्तं देवीसूक्तम्

ॐ अहं रुद्रेभिर्वसुभिश्चराम्यहमादित्यैरुतविश्वदेवैः ॥ अहं मित्राव-
रुणोभाविभर्म्यहमिन्द्राग्नी अहमश्विनोभा ॥१॥ अहं सोममाहनं संवि-
भर्म्यहं त्वष्टारमुतपूषणं भगम् ॥ अहं दधामि द्रविणं हविष्मते सुप्राव्ये ३
यजमानाय सुन्वते ॥ २ ॥ अहं राष्ट्रीसंगमनी वसूनां चिकितुषी प्रथमा
यज्ञियानाम् ॥ तां मा देवा व्यदधुः पुरुत्राभूरिस्थात्रां भूर्यावेशयन्तीम् ॥३॥
मयासोअन्नमत्ति यो विपश्यति यः प्राणिति य ईं शृणोत्युक्तम् । अमन्त-
वोमां तउपक्षियन्ति श्रुधिश्रुतश्रद्धिवं ते वदामि ॥ ४ ॥ अहमेव स्वयमिदं
वदामि जुष्टं देवेभिरुत मानुषेभिः ॥ यं कामये तं तमुग्रं कृणोमि तं ब्रह्माणं
तमृषिं तं सुमेधाम् ॥५॥ अहं रुद्राय धनुरातनोमि ब्रह्मद्विषे शरवे हन्त वाउ ॥

अहं जनाय समदं कृणोम्यहं द्यावापृथिवी आविवेश ॥६॥ अहं सुवे पितर-
मस्यमूर्द्धन्ममयोनिरप्स्वं १ तः समुद्रे ॥ ततोवितिष्ठे भुवनानु विश्वोता-
मूंद्यां वर्ष्मणोपस्पृशामि ॥ ७ ॥ अहमेव वात इव प्रवाम्यारभमाणा
भुवनानि विश्वा ॥ परो दिवा पर एनापृथिव्यैतावती महिना संबभूव ॥८॥

इति ऋग्वेदोक्तं देवीसूक्तं समाप्तम् ।

अथ तन्त्रोक्तं देवीसूक्तम्

देवा ऊचुः । नमो देव्यै महादेव्यै शिवायै सततं नमः । नमः प्रकृत्यै
भद्रायै नियताः प्रणताः स्म ताम् ॥ १ ॥ रौद्रायै नमो नित्यायै गौर्यै
धात्र्यै नमो नमः । ज्योत्स्नायै चेन्दुरूपिण्यै सुखायै सततं नमः ॥ २ ॥

कल्याण्यै प्रणतां वृद्ध्यै सिद्ध्यै कुर्मो नमो नमः । नैर्ऋत्यै भूभृतां लक्ष्म्यै शर्वाण्यै ते नमो नमः ॥ ३ ॥ दुर्गायै दुर्गपारायै सारायै सर्वकारिण्यै । ख्यात्यै तथैव कृष्णायै धूम्रायै सततं नमः ॥ ४ ॥ अतिसौम्यातिरौद्रायै नतास्तस्यै नमो नमः । नमो जगत्प्रतिष्ठायै देव्यै कृत्यै नमो नमः ॥ ५ ॥ या देवी सर्वभूतेषु विष्णुमायेति शब्दिता । नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः ॥ ६ ॥ या देवी सर्वभूतेषु चेतनेत्यभिधीयते । नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः ॥ ७ ॥ या देवी सर्वभूतेषु बुद्धिरूपेण संस्थिता । नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः ॥ ८ ॥ या देवी सर्वभूतेषु निद्रारूपेण संस्थिता । नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः ॥ ९ ॥ या देवी सर्वभूतेषु क्षुधारूपेण संस्थिता । नमस्तस्यै नमस्तस्यै

नमस्तस्यै नमो नमः ॥ १० ॥ या देवी सर्वभूतेषु छायारूपेण संस्थिता ।
नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः ॥ ११ ॥ या देवी सर्वभूतेषु
शक्तिरूपेण संस्थिता । नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः ॥१२॥
या देवी सर्वभूतेषु तृष्णारूपेण संस्थिता । नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै
नमो नमः ॥ १३ ॥ या देवी सर्वभूतेषु क्षान्तिरूपेण संस्थिता । नमस्तस्यै
नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः ॥ १४ ॥ या देवी सर्वभूतेषु जातिरूपेण
संस्थिता । नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः ॥ १५ ॥ या देवी
सर्वभूतेषु लज्जारूपेण संस्थिता । नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो
नमः ॥ १६ ॥ या देवी सर्वभूतेषु शान्तिरूपेण संस्थिता । नमस्तस्यै
नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः ॥ १७ ॥ या देवी सर्वभूतेषु श्रद्धारूपेण

संस्थिता । नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः ॥ १८ ॥ या देवी सर्वभूतेषु कान्तिरूपेण संस्थिता । नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः ॥ १९ ॥ या देवी सर्वभूतेषु लक्ष्मीरूपेण संस्थिता । नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः ॥ २० ॥ या देवी सर्वभूतेषु वृत्तिरूपेण संस्थिता । नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः ॥ २१ ॥ या देवी सर्वभूतेषु स्मृतिरूपेण संस्थिता । नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः ॥ २२ ॥ या देवी सर्वभूतेषु दयारूपेण संस्थिता । नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः ॥ २३ ॥ या देवी सर्वभूतेषु तुष्टिरूपेण संस्थिता । नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः ॥ २४ ॥ या देवी सर्वभूतेषु मातृरूपेण संस्थिता । नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः ॥ २५ ॥

या देवी सर्वभूतेषु भ्रान्तिरूपेण संस्थिता। नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः ॥ २६ ॥ इन्द्रियाणामधिष्ठात्री भूतानां चाखिलेषु या। भूतेषु सततं तस्यै व्याप्त्यै देव्यै नमो नमः ॥ २७ ॥ चितिरूपेण या कृत्स्नमेतद्व्याप्य स्थिता जगत्। नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः २८ स्तुता सुरैः पूर्वमभीष्टसंश्रयात्तथा सुरेन्द्रेण दिनेषु सेविता। करोतु सा नः शुभहेतुरीश्वरी शुभानि भद्राण्यभिहन्तु चापदः ॥ २९ ॥ या साम्प्रतं चोद्धतदैत्यतापितैरस्माभिरीशा च सुरैर्नमस्यते। या च स्मृता तत्क्षणमेव हन्ति नः सर्वापदो भक्तिविनम्रमूर्तिभिः ॥ ३० ॥

इति तन्त्रोक्तं देवीसूक्तं समाप्तम्।

राजा ने कहा—हे भगवन्, आपने चण्डिका देवी के अवतारों का वर्णन किया, किन्तु हे ब्रह्मन्, अब उन अवतारों का मूल मुख्य स्वरूप बतलाइए । १ । और हे द्विज,

अथ प्राधानिकरहस्यम्

राजोवाच ।

भगवन्नवतारा मे चण्डिकायास्त्वयोदिताः । एतेषां प्रकृतिं ब्रह्मन्प्रधानं वक्तुमर्हसि ॥ १ ॥ आराध्यं यन्मया देव्याः स्वरूपं येन च द्विज । विधिना ब्रूहि सकलं यथावत्प्रणतस्य मे ॥ २ ॥

देवी के जिस स्वरूप की आराधना जिस विधि से मुझे करनी चाहिए वह स्वरूप और आराधना करने की विधि मुझ विनीत से विधिपूर्वक कहिए । २ ।

ऋषि ने कहा—यह रहस्य परम गुप्त है, अर्थात् किसी से कहने योग्य नहीं है; परंतु हे राजन्, तुम भक्त हो, इसलिए ऐसा कोई विषय नहीं है, जो तुमसे न कहूँ। ३।

ऋषिरुवाच।

इदं रहस्यं परममनाख्येयं प्रचक्षते। भक्तोऽसीति न मे किंचित्तवावाच्यं नराधिप ॥ ३ ॥ सर्वस्याद्या महालक्ष्मी-स्त्रिगुणा परमेश्वरी। लक्ष्यालक्ष्यस्वरूपा सा व्याप्य कृत्स्नं व्यवस्थिता ॥४॥ मातुलिङ्गं गदां खेटं पानपात्रं च बिभ्रती। नागं लिङ्गं च योनिं च बिभ्रती नृप मूर्द्धनि ॥ ५ ॥ तप्तकाञ्च-

सबकी आदिरूपा सत्त्व रज तम तीनों गुणवाली परमेश्वरी महालक्ष्मी है। वह लक्ष्य और अलक्ष्यस्वरूपा है तथा सम्पूर्ण जगत् में व्याप्त है। ४। हे राजन्, वह हाथों में मातुलिंग (बिजौराफल) गदा, खेट और पानपात्र तथा सिरपर नाग, लिंग और योनि धारण

करती है । ५ । वह तपाये हुए सुवर्ण के समान कान्तिवाली देवी तपाये हुए सोने के सुन्दर आभूषण धारण किये, अपने तेज से सम्पूर्ण आकाश परिपूर्ण करती है । ६ । उस परमेश्वरी ने सम्पूर्ण संसार को शून्य देखकर केवल तमोगुण से एक दूसरा श्रेष्ठरूप

नवर्णाभा तप्तकाञ्चनभूषणा । शून्यं तदखिलं स्वेन पूरयामास तेजसा ॥ ६ ॥ शून्यं तदखिलं लोकं विलोक्य परमेश्वरी । बभार परमं रूपं तमसा केवलेन हि ॥ ७ ॥ सा भिन्नाञ्जनसंकाशा दंष्ट्राङ्कितवरानना । विशाललोचना नारी बभूव तनुमध्यमा ॥ ८ ॥ खड्गपात्रशिरःखेटैरलंकृतचतुर्भुजा । कबन्धहारं शिरसा बिभ्राणाऽहि शिरःस्रजम् ९

धारण किया । ७ । वह काजल के ढेर के समान कान्तिवाली, दाढ़ों से शोभायमान सुन्दर मुखवाली, विशाल नेत्रों से शोभित तथा सूक्ष्म कटिवाली स्त्री हुई । ८ । खड्ग, पानपात्र, सिर तथा खेट से शोभित चार भुजावाली और कबंध का हार तथा साँपों के

सिर की माला धारण किये हुए उस तामसी स्त्री ने महालक्ष्मी से कहा—हे माता, तुम मेरा नाम रक्खो और मुझे काम बताओ, मैं तुमको नमस्कार करती हूँ। ६–१०। महा-

सा प्रोवाच महालक्ष्मीं तामसी प्रमदोत्तमा। नाम कर्म च मे मातर्देहि तुभ्यं नमो नमः॥ १०॥ तां प्रोवाच महा-लक्ष्मीस्तामसीं प्रमदोत्तमाम्। ददामि तव नामानि यानि कर्माणि तानि ते॥११॥ महामाया महाकाली महामारी क्षुधा तृषा। निद्रा तृष्णा चैकवीरा कालरात्रिर्दुरत्यया १२ इमानि तव नामानि प्रतिपाद्यानि कर्मभिः। एभिः कर्माणि

लक्ष्मी ने उस तामसी स्त्री से कहा—मैं तुम्हारे नाम और कर्म बताता हूँ।११। महामाया, महाकाली, महामारी, क्षुधा, तृषा, निद्रा, तृष्णा, एकवीरा, कालरात्रि और दुरत्यया, यह तुम्हारे नाम कर्म के अनुसार हैं। इन नामों से तुम्हारे कर्मों को जानकर जो मनुष्य

इनको पढ़ता है वह सुख पाता है । १२–१३ । हे राजन्, महालक्ष्मी ने उससे यह कहकर अतिशुद्ध, सतोगुणी चन्द्रमा के समान कान्तिवाला दूसरा स्वरूप धारण किया । १४ ।

ते ज्ञात्वा योऽधीते सोश्नुते सुखम् ॥ १३ ॥ तामित्युक्त्वा महालक्ष्मीः स्वरूपमपरं नृप । सत्त्वाख्येनातिशुद्धेन गुणेनेन्दुप्रभं दधौ ॥ १४ ॥ अक्षमालाङ्कुशधरा वीणापुस्तकधारिणी । सा बभूव वरा नारी नामान्यस्यैव सा ददौ १५ महाविद्या महावाणी भारती वाक्सरस्वती । आर्या ब्राह्मी कामधेनुर्बीजगर्भा च धीश्वरी ॥ १६ ॥ अथोवाच महा-

वह उत्तम स्त्री अक्षमाला, अंकुश, वीणा और पुस्तक धारण किये थी । महालक्ष्मी ने उसके भी ये नाम रख दिये–महाविद्या, महावाणी, भारता, वाक्, सरस्वती, आर्या, ब्राह्मी, कामधेनु, बीजगर्भा और धीश्वरी । १५–१६ । उसके बाद महालक्ष्मी ने महाकाली

और महासरस्वती से कहा—तुम दोनों देवी अपने स्वरूप के अनुसार स्त्री पुरुष का जोड़ा उत्पन्न करो। १७। महालक्ष्मी ने उन दोनों से यह कहकर हिरण्यगर्भ, सुन्दर कमल पर

लक्ष्मीर्महाकाली सरस्वतीम्। युवां जनयतां देव्यौ मिथुने स्वानुरूपतः॥ १७॥ इत्युक्त्वा ते महालक्ष्मीः ससर्ज मिथुनं स्वयम्। हिरण्यगर्भौ रुचिरौ स्त्रीपुंसौ कमलासनौ १८ ब्रह्मन्विधे विरंचेति धातरित्याह तं नरम्। श्रीः पद्मे कमले लक्ष्मीत्याह माता च तां स्त्रियम्॥ १९॥ महाकाली भारती च मिथुने सृजतः सह। एतयोरपि रूपाणि नामानि च

बैठा हुआ स्त्री-पुरुष का एक जोड़ा स्वयं उत्पन्न किया। १८। पुरुष को हे ब्रह्मन्, हे विधे, हे विरंचि, हे धातः, स्त्री को श्री, पद्मे, कमले और लक्ष्मी नाम से संबोधित किया। १९। महाकाली और महासरस्वती ने भी स्त्री-पुरुष के जोड़े उत्पन्न किये। हे राजन्, उनके

भी स्वरूप और नाम कहता हूँ । २० । महाकाली ने नीलकण्ठ, रक्तबाहु, श्वेताङ्ग, चन्द्रशेखर पुरुष और एक गौरी स्त्री उत्पन्न किया । २१ । पुरुष के रुद्र, शंकर, स्थाणु, कपर्दी

वदामि ते ॥ २० ॥ नीलकण्ठं रक्तबाहुं श्वेताङ्गं चन्द्रशेखरम् । जनयामास पुरुषं महाकाली सितां स्त्रियम् ॥ २१ ॥ स रुद्रः शङ्करः स्थाणुः कपर्दी च त्रिलोचनः । त्रयी विद्या कामधेनुः सा स्त्री भाषाक्षरा स्वरा ॥ २२ ॥ सरस्वती स्त्रियं गौरीं कृष्णं च पुरुषं नृप । जनयामास नामानि तयोरपि वदामि ते ॥ २३ ॥ विष्णुः कृष्णो हृषीकेशो वासुदेवो

और त्रिलोचन, तथा स्त्री के त्रयी, विद्या, कामधेनु, भाषा, अक्षरा और स्वरा नाम रक्खे । २२ । हे राजन्, सरस्वती ने गौरी स्त्री और कृष्ण पुरुष उत्पन्न किया । उन दोनों के भी नाम कहता हूँ । २३ । पुरुष के विष्णु, कृष्ण, हृषीकेश, वासुदेव और

जनार्दन तथा स्त्री के उमा, गौरी, सती, चण्डी, सुन्दरी, सुभगा और शिवा नाम रक्खा ।२४। इस प्रकार वे तीनों स्त्रियाँ शीघ्र ही पुरुषत्व को प्राप्त हो गईं । उनको दिव्य दृष्टिवाले पुरुष ही देखते हैं, दूसरे लोग नहीं देखते । २५ । हे नृप, महालक्ष्मी ने वेद-

जनार्दनः। उमा गौरी सती चण्डी सुन्दरी सुभगा शिवा २४
एवं युवतयः सद्यः पुरुषत्वं प्रपेदिरे । चक्षुष्मन्तोऽपश्यन्ति नेतरे तद्विदो जनाः ॥ २५ ॥ ब्रह्मणे प्रददौ पत्नीं महालक्ष्मी-र्नृप त्रयीम् । रुद्राय गौरीं वरदां वासुदेवाय च श्रियम् ॥२६॥
स्वरया सह संभूय विरञ्च्योऽण्डमजीजनत् । बिभेद भगवान् रुद्रस्तद्गौर्या सह वीर्यवान् ॥ २७ ॥ अण्डमध्ये

त्रयी पत्नी ब्रह्मा को, वर देनेवाली गौरी शिव को और लक्ष्मी विष्णु को दिया । २६ । ब्रह्मा ने स्वरा के साथ मिलकर एक अण्ड उत्पन्न किया और वीर्यवान् रुद्र भगवान् ने गौरी के साथ मिलकर उसे फोड़ा । २७ । हे राजन्, उस अण्ड से महत्तत्त्व आदि

स्थावर-जंगमरूप महाभूतात्मक सम्पूर्ण जगत् उत्पन्न हुआ। २८। भगवान् विष्णु ने लक्ष्मी के साथ उसका पालन किया और महादेव ने गौरी के साथ उस सम्पूर्ण जगत्

प्रधानादि कार्यजातमभून्नृप। महाभूतात्मकं सर्वं जगत्स्थावरजंगमम्॥ २८॥ पुपोष पालयामास तल्लक्ष्म्या सह केशवः। संजहार जगत्सर्वं सह गौर्या महेश्वरः॥२९॥ महालक्ष्मीर्महाराज सर्वसत्त्वमयीश्वरी। निराकारा च साकारा सैव नानाभिधानभृत्॥ ३०॥ नामान्तरैर्निरूप्यैषा नाम्ना नान्येन कुत्रचित्॥ ३१॥

इति प्राधानिकरहस्यं समाप्तम्।

का संहार किया। २९। हे महाराज, महालक्ष्मी सर्वसत्त्वमयी ईश्वरी है। वह निराकार है और साकार भी, उसके अनेक नाम हैं। ३०। वह अपने नामों के सिवा अन्य किसी प्रत्यक्ष प्रमाण से नहीं जानी जा सकती। ३१।

ऋषि ने कहा—हे राजन्, मैंने जिस तामसी, सात्त्विकी और राजसी (त्रिगुणा) देवी का वर्णन किया है वह शर्वा, चण्डिका, दुर्गा, भद्रा और भगवती भी कहाती है। १।

अथ वैकृतिकरहस्यम्

ऋषिरुवाच।

त्रिगुणा तामसी देवी सात्त्विकी या त्रिधोदिता। सा शर्वा चण्डिका दुर्गा भद्रा भगवतीर्यते ॥ १ ॥ योगनिद्रा हरेरुक्ता महाकाली तमोगुणा। मधुकैटभनाशार्थं यां तुष्टावाम्बुजासनः ॥ २ ॥ दशवक्त्रा दशभुजा दशपादाञ्जन-

तमोगुणवाली महाकाली विष्णु भगवान् की योगनिद्रा है, जिसकी स्तुति मधुकैटभ के नाश के लिए ब्रह्मा ने की थी। २। वह काजल के समान काली है उसके दस मुँह, दस

भुजाएँ, दस पैर और तीस विशाल नेत्र हैं। ३। हे राजन्, वह सुन्दर दाढ़ों और दाँतोंवाली महाकाली भयंकररूपिणी होने पर भी भक्तों को रूप, सौभाग्य और कान्ति

प्रभा। विशालया राजमाना त्रिंशल्लोचनमालया ॥ ३ ॥ स्फुरद्दशनदंष्ट्रा सा भीमरूपापि भूमिप। रूपसौभाग्यकान्तीनां सा प्रतिष्ठा महाश्रियः॥ ४ ॥ खड्गबाणगदाशूलशङ्खचक्रभुशुण्डिभृत्। परिघं कार्मुकं शीर्षं निश्च्योतद्रुधिरं दधौ ॥ ५ ॥ एषा सा वैष्णवी माया महाकाली दुरत्यया। आराधिता वशीकुर्यात्पूजाकर्तुश्चराचरम् ॥ ६ ॥

आदि महाश्री देनेवाली है। ४। वह खड्ग, बाण, गदा, शूल, शंख, चक्र, भुशुंडी, परिघ, धनुष और रुधिर टपकता हुआ सिर धारण करती है। ५। वह दुरत्यया महाकाली विष्णु की माया है, जिसकी आराधना करने से चराचर जगत् वश में हो जाता है। ६।

जो सम्पूर्ण देवताओं के शरीर से उत्पन्न हुई है वह अतुल कान्तिवाली महिषमर्दिनी त्रिगुणा साक्षात् महालक्ष्मी है । ७ । उसका मुख श्वेत, भुजाएँ नीली, स्तनमंडल श्वेत,

सर्वदेवशरीरेभ्यो याऽविर्भूताऽमितप्रभा । त्रिगुणा सा महालक्ष्मीः साक्षान्महिषमर्दिनी ॥ ७ ॥ श्वेतानना नील-भुजा सुश्वेतस्तनमण्डला । रक्तमध्या रक्तपादा नील-जङ्घोरुरुन्मदा ८ सुचित्रजघना चित्रमाल्याम्बरविभूषणा । चित्रानुलेपना कान्तिरूपसौभाग्यशालिनी ॥ ६ ॥ अष्टा-दशभुजा पूज्या सा सहस्रभुजा सती । आयुधान्यत्र वक्ष्य-

कटि और चरण लाल, जाँघें नीली हैं । वह उत्कट मदवाली है । ८ । उसका जघन विचित्र है और वह चित्र-विचित्र माला, वस्त्र और आभूषण धारण करती है । वह विचित्र लेपन करती है । वह रूप-लावण्यवती और सौभाग्यवती है । ६ । वह पूज्य देवी अठारह भुजावाली

और सहस्र भुजावाली है। अब क्रम से उसके दाहने और बाएँ हाथों के आयुध कहते हैं।१०।
उसके हाथों में अक्षमाला, कमल, बाण, तलवार, वज्र, गदा, चक्र, त्रिशूल, फरसा, शंख,

न्ते दक्षिणाधः करक्रमात् ॥ १० ॥ अक्षमाला च कमलं
बाणोऽसिः कुलिशं गदा। चक्रं त्रिशूलं परशुः शङ्खो घण्टां
च पाशकः ॥ ११ ॥ शक्तिर्दण्डश्चर्म चापं पानपात्रं कम-
ण्डलुः। अलंकृतभुजामेभिरायुधैः कमलासनाम् ॥ १२ ॥
सर्वदेवमयीमीशां महालक्ष्मीमिमां नृप। पूजयेत्सर्व-
लोकानां स देवानां प्रभुर्भवेत् ॥ १३ ॥ गौरीदेहात्समुद्भूता

घंटा, फाँसी, शक्ति, दंड, ढाल, धनुष, पानपात्र और कमंडलु शोभित है। वह कमल
पर बैठी है।११-१२। हे राजन्, जो मनुष्य इस सर्वदेवमयी ईश्वरी महालक्ष्मी
की पूजा करता है वह सब मनुष्यों और देवताओं का स्वामी होता है।१३।

हे नृप, जो गौरी के देह से उत्पन्न हुई है और केवल सत्त्वगुण प्रधान है वह शुम्भासुर को मारनेवाली साक्षात् सरस्वती है। १४। सरस्वती के आठ भुजाएँ

या सत्त्वैकगुणाश्रया। साक्षात्सरस्वती प्रोक्ता शुम्भासुरनिबर्हिणी ॥ १४ ॥ दधौ चाष्टभुजा बाणमुसले शूलचक्रभृत्। शङ्खं घण्टां लाङ्गलं च कार्मुकं वसुधाधिप ॥ १५ ॥ एषा संपूजिता भक्त्या सर्वज्ञत्वं प्रयच्छति। निशुम्भमथिनी देवी शुम्भासुरनिबर्हिणी ॥ १६ ॥ इत्युक्तानि स्वरूपाणि मूर्तीनां तव पार्थिव। उपासनं जगन्मातुः पृथ-

हैं और वह बाण, मुसल, शूल, चक्र, शंख, घंटा, हल तथा धनुष धारण करती है। १५। जो मनुष्य शुम्भ निशुम्भनाशिनी सरस्वती का भक्तिपूर्वक पूजन करते हैं वे सर्वज्ञ हो जाते हैं। १६। हे राजन्, मूर्तियों के ये स्वरूप तुमसे कहे। अब जगन्माताओं की अलग

अलग उपासना सुनो। १७। जब महालक्ष्मी का पूजन करे तब दाहिनी और बाईं ओर क्रम से महाकाली और महासरस्वती का पूजन करना चाहिए और उनके पीछे और देवियों सहित तीनों देवताओं का पूजन करे।१८। मध्य में सरस्वती के साथ ब्रह्मा का,

गासां निशामय ॥ १७ ॥ महालक्ष्मीर्यदा पूज्या महाकाली सरस्वती । दक्षिणोत्तरयोः पूज्ये पृष्ठतो मिथुनत्रयम् ॥ १८ ॥ विरञ्चिः स्वरया मध्ये रुद्रो गौर्या च दक्षिणे। वामे लक्ष्म्या हृषीकेशः पुरतो देवतात्रयम् ॥ १९ ॥ अष्टादशभुजा मध्ये वामे चास्या दशानना । दक्षिणेऽष्टभुजा

दक्षिण में गौरी के साथ रुद्र का और उत्तर में लक्ष्मी के साथ हृषीकेश का पूजन करे और इनके सामने आगे कही हुई तीन देवियों की पूजा करे। १९। मध्य में अर्थात् महालक्ष्मी के सामने अष्टादशभुजी लक्ष्मी का और उनके वामभाग में अर्थात् महाकाली के सामने दशमुखी महाकाली का और दक्षिणभाग में महासरस्वती का, इस प्रकार महा-

लक्ष्मी का पूजन करना चाहिए । २० । हे राजन्, यदि केवल अष्टादशभुजी का अथवा दशानना का अथवा अष्टभुजी का पूजन करना हो तो सम्पूर्ण अरिष्ट शांति के लिए

लक्ष्मीर्महतीति समर्चयेत् ॥ २० ॥ अष्टादशभुजा चैषा यदा पूज्या नराधिप । दशानना चाष्टभुजा दक्षिणोत्तर-योस्तदा ॥ २१ ॥ कालमृत्यू च संपूज्यौ सर्वारिष्टप्रशा-न्तये । यदा चाष्टभुजा पूज्या शुम्भासुरनिबर्हिणी ॥ २२॥ नवास्याः शक्तयः पूज्यास्तथा रुद्रविनायकौ । नमो देव्या इति स्तोत्रैर्महालक्ष्मीं समर्चयेत् ॥ २३ ॥ अवतारत्रया-

दक्षिण और उत्तर की ओर काल और मृत्यु का पूजन करे । जब आठ भुजावाली शुंभासुरमर्दिनी का पूजन करना हो तो इसकी नव शक्तियों का तथा रुद्र और गणेश का भी पूजन करे । 'नमो देव्यै' इस स्तोत्र से महालक्ष्मी की स्तुति करे । २१–२३ । देवी के

तीनों अवतारों के पूजन में उन्हीं अवतारों के चरित्र के स्तोत्र से स्तुति करे। यह अष्टादशभुजावाली देवी पूजनीय है। यही महिषमर्दिनी महालक्ष्मी, महाकाली और महासरस्वती है। यही पुण्य-पापों की ईश्वरी और सम्पूर्ण लोकों की महेश्वरी है। २४-२५।

र्चायां स्तोत्रमन्त्रास्तदाश्रयाः। अष्टादशभुजा चैषा पूज्या महिषमर्दिनी ॥ २४ ॥ महालक्ष्मीर्महाकाली सैव प्रोक्ता सरस्वती। ईश्वरी पुण्यपापानां सर्वलोकमहेश्वरी ॥ २५ ॥ महिषान्तकरी येन पूजिता स जगत्प्रभुः। पूजयेज्जगतां धात्रीं चण्डिकां भक्तवत्सलाम् ॥ २६ ॥ अर्घ्यादिभिरलङ्कारैर्गन्धपुष्पैस्तथाक्षतैः। धूपैर्दीपैश्च नैवेद्यैर्नानाभक्ष्य-

जो पुरुष महिषासुरमर्दिनी का पजन करता है वह जगत् का स्वामी होता है। तीनों लोकों को धारण करनेवाली तथा भक्तों से प्रीति करनेवाली चण्डिका का अर्घ्य, आभूषण, गन्ध, पुष्प, अक्षत, धूप, दीप, नैवेद्य और अनेक प्रकार के भक्ष्य पदार्थों से

पूजन करना चाहिए।२६–२७। रुधिर मिले हुए मांस के बलि से तथा मदिरा से पूजा करनी चाहिए। प्रणाम, आचमनीय, चन्दन, सुगन्ध, कपूर और ताम्बूल से भक्तिपूर्वक

समन्वितैः ॥ २७ ॥ रुधिराक्तेन बलिना मांसेन सुरया नृप। प्रणामाचमनीयेन चन्दनेन सुगन्धिना ॥ २८ ॥ सकर्पूरैश्च ताम्बूलैर्भक्तिभावसमन्वितैः। वामभागेऽग्रतो देव्याश्छिन्न-शीर्षं महासुरम् ॥ २९ ॥ पूजयेन्महिषं येन प्राप्तं सायुज्य-मीशया। दक्षिणे पुरतः सिंहं समग्रं धर्ममीश्वरम् ॥ ३० ॥ वाहनं पूजयेद्देव्या धृतं येन चराचरम्। कुर्याच्च स्तवनं

पजन करनी चाहिए। देवी के आगे वाम भाग में कटे हुए सिरवाले ईश्वरी द्वारा मोक्ष को प्राप्त महासुर महिष का पूजन करे। दक्षिण की ओर अग्रभाग में समग्र धर्मरूप ईश्वर चराचर को धारण करनेवाले देवी के वाहन सिंह की पूजा करे और बुद्धिमान् पुरुष

करे। यदि समय न मिले तो एकाग्रचित्त होकर, हाथ जोड़कर इन चरित्रों से स्तुति करे, किन्तु केवल प्रथम या उत्तम चरित्र का पाठ न केवल मध्यम चरित्र से ही स्तुति करे, करे। आधे चरित्र का भी पाठ न करना चाहिए, ऐसा करने से निस्सन्देह विघ्न होता

धीमांस्तस्या एकाग्रमानसः ॥ ३१ ॥ ततः कृताञ्जलिर्भूत्वा स्तुवीत चरितैरिमैः । एकेन वा मध्यमेन नैकेनेतरयोरिह ॥ ३२ ॥ चरितार्धं तु न जपेज्जपञ्छिद्रमवाप्नुयात् । प्रदक्षिणानमस्कारान्कृत्वा मूर्ध्नि कृताञ्जलिः ॥ ३३ ॥ क्षमापयेज्जगद्धात्रीं मुहुर्मुहुरतन्द्रितः । प्रतिश्लोकं च जुहुयात्पायसं तिलसर्पिषा ॥ ३४ ॥ जुहुयात्स्तोत्रमन्त्रैर्वा

है। स्तोत्र और मंत्रों से जगदम्बिका की स्तुति करे और प्रदक्षिणा तथा नमस्कार करके हाथ जोड़कर सावधान होकर जगद्धात्री से वारंवार क्षमा माँगे। सप्तशती स्तोत्र के प्रत्येक मन्त्र अथवा महालक्ष्मी स्तोत्र (देव्या यया ततमित्यादि) से तिल, घी और खीर

की आहुति दे। फिर सावधान होकर नाम और पदों से देवी का पूजन करे। २८-३५।
उसके बाद एकाग्रचित्त होकर हाथ जोड़कर आत्मा में प्राणों को रोककर नम्रता से

चण्डिकायै शुभं हविः। भूयो नामपदैर्देवीं पूजयेत्सुसमा-
हितः॥ ३५॥ प्रयतः प्राञ्जलिः प्रह्वः प्राणानारोप्य चा-
त्मनि। सुचिरं भावयेदीशां चण्डिकां तन्मयो भवेत् ३६
एवं यः पूजयेद्भक्त्या प्रत्यहं परमेश्वरीम्। भुक्त्वा कामा-
न्यथाकामं देवीसायुज्यमाप्नुयात्॥ ३७॥ यो न पूजयते
नित्यं चण्डिकां भक्तवत्सलाम्। भस्मीकृत्यास्य पुण्यानि

बहुत देरतक चण्डिका देवी का ध्यान करे और उन्हीं में तन्मय हो जाय। ३६। इस प्रकार जो मनुष्य भक्तिपूर्वक परमेश्वरी का प्रतिदिन पूजन करता है वह अभीष्ट सुख-भोग करके अन्त में देवी के लोक को जाता है। ३७। जो पुरुष भक्तों पर दया करने-

वाली चण्डिका की प्रतिदिन पूजा नहीं करता, परमेश्वरी उसके पुण्यों को विफल करके उसे जन्मभर दुःख शोक से भस्म करती है। ३८। इसलिए हे राजन्, तुम सम्पूर्ण

निर्दहेत्परमेश्वरी ॥ ३८ ॥ तस्मात्पूजय भूपाल सर्वलोक-महेश्वरीम् । यथोक्तेन विधानेन चण्डिकां सुखमा-प्स्यसि ॥ ३९ ॥

इति वैकृतिकरहस्यं समाप्तम्।

लोकों की महेश्वरी चण्डिका का कथित विधान से पूजन करो। इसके करने से तुम सुख पावोगे। ३९।

ऋषि ने कहा—हे राजन्, नन्दा भगवती नामवाली जो नन्द से उत्पन्न होगी, उसकी भक्तिपूर्वक स्तुति और पूजा करने से मनुष्य तीनों लोकों को वश में कर लेता है। १।

अथ मूर्तिरहस्यम्

ऋषिरुवाच।

नन्दा भगवती नाम या भविष्यति नन्दजा। सा स्तुता पूजिता भक्त्या वशीकुर्याज्जगत्त्रयम् ॥ १ ॥ कनकोत्तम-कान्तिः सा सुकान्तिकनकाम्बरा। देवी कनकवर्णाभा कनकोत्तमभूषणा ॥ २ ॥ कमलाङ्कुशपाशाब्जैरलंकृत-

वह देवी सुवर्ण के उत्तम आभूषणों से शोभित है, उसकी कान्ति सुवर्ण के समान उत्तम है, उसके वस्त्र सुवर्णसदृश सुन्दर हैं, और वह देवी सुवर्ण के समान दीप्तिमान् है। २। कमल, अंकुश, पाश आर शंख से उसकी चारों भुजाएँ शोभित हैं और उसके

इन्दिरा, कमला, लक्ष्मी, श्री, रुक्मा और कमलासना ये नाम हैं । ३ । हे निष्पाप, मैंने रक्तदन्तिका नाम जिस देवी का वर्णन किया है, उसका सम्पूर्ण भयनाशक स्वरूप कहता

चतुर्भुजा । इन्दिरा कमला लक्ष्मीः सा श्रीरुक्माम्बुजा-
सना ॥ ३ ॥ या रक्तदन्तिका नाम देवी प्रोक्ता मयाऽनघ ।
तस्याः स्वरूपं वक्ष्यामि शृणु सर्वभयापहम् ॥ ४ ॥ रक्ता-
म्बरा रक्तवर्णा रक्तसर्वाङ्गभूषणा । रक्तायुधा रक्तनेत्रा रक्त-
केशातिभीषणा ॥ ५ ॥ रक्ततीक्ष्णनखा रक्तदशना रक्त-
दन्तिका । पतिं नारीवानुरक्ता देवी भक्तं भजेज्जनम् ॥ ६ ॥

हूँ, सुनो । ४ । रक्तवस्त्र, रक्तवर्ण, रक्त ही सब अंगों के आभूषणों से शोभित, रक्तआयुध, रक्तनेत्र, रक्तकेशवाली, अतिभयंकर, रक्त-तीक्ष्ण-नखवाली, रक्तआसन पर स्थित, रक्तदाँत-वाली देवी भक्तों के वश में उसी प्रकार रहती है जैसे स्त्री पति के अनुकूल रहती है ।

वह देवी पृथ्वी के समान विशाल है और उसके दोनों स्तन सुमेरु पर्वत के समान हैं। वे दोनों स्तन बड़े लम्बे, बड़े मोटे, अत्यन्त मनोहर, कड़े, शोभायमान और आनन्द के समुद्ररूप हैं। सब कामनाओं को देनेवाले दोनों स्तनों का देवी अपने भक्तजनों को

वसुधेव विशाला सा सुमेरुयुगलस्तनी। दीर्घौ लम्बावतिस्थूलौ तावतीव मनोहरौ ॥ ७ ॥ कर्कशावतिकान्तौ तौ सर्वानन्दपयोनिधी। भक्तान्संपाययेद्देवी सर्वकामदुघौ स्तनौ ॥ ८ ॥ खड्गं पात्रं च मुसलं लाङ्गलं च बिभर्ति सा। आख्याता रक्तचामुण्डा देवी योगीश्वरीति च ॥ ९ ॥ अनया व्याप्तमखिलं जगत्स्थावरजङ्गमम्। इमां य पूजये-

पिलाती है। ५-८। देवी की चारों भुजाएँ खड्ग, पात्र, हल और मुसल से शोभित हैं। वह देवी रक्तचामुण्डा और योगेश्वरी नाम से विख्यात है और वह स्थावर-जंगमरूप सम्पूर्ण जगत् में व्याप्त है। जो पुरुष भक्तिपूर्वक उसकी पूजा करता है, वह चराचर में

व्याप्त होता है । ९-१० । जो पुरुष रक्तदन्तिका के इस स्तोत्र को पढ़ता है, देवी उसकी ऐसी सेवा करती है, जैसे स्त्री अपने प्रिय पति की । ११ । शाकंभरी देवी का नीलवर्ण

द्भक्त्या स व्याप्नोति चराचरम् ॥ १० ॥ अधीते य इमं नित्यं रक्तदन्त्या वपुः स्तवम् । तं सा परिचरेद्देवी पतिं प्रियमिवाङ्गना ॥ ११ ॥ शाकम्भरी नीलवर्णा नीलोत्पल-विलोचना । गम्भीरनाभिस्त्रिवलीविभूषिततनूदरी ॥ १२ ॥ सुकर्कशसमोत्तुङ्गवृत्तपीनघनस्तनी । मुष्टिं शिलीमुखापूर्णं कमलं कमलालया ॥ १३ ॥ पुष्पपल्लवमूलादिफलाढ्यं

है, नील कमल के समान उसके नेत्र हैं, गंभीर नाभि है, और त्रिवली से भूषित उसका सूक्ष्म उदर है । १२ । कड़े, ऊँचे, गोल, मोटे, समान और मांसल स्तन हैं, उसके हाथ में कमल है, उसपर भौंरे गुंजार रहे हैं और कमल पर ही वह विराजमान है । १३ । पुष्प,

पल्लव, मूल और फल से युक्त, अनेक सुन्दर रसोंवाले, क्षुधा, तृष्णा, मृत्यु और वृद्धावस्था को दूर दूर करनेवाले शाकसमूह तथा चमकता हुआ धनुष धारण करती है। वह परमेश्वरा शाकंभरी शताक्षी है और वहा दुर्गा कही गई है। १४-१५। वहा विशोका,

शाकसञ्चयम् । काम्यानन्तरसैर्युक्तं क्षुत्तृण्मृत्युजरापहम् ॥ १४ ॥ कार्मुकं च स्फुरत्कान्ति बिभर्ति परमेश्वरी। शाकम्भरी शताक्षी सा सैव दुर्गा प्रकीर्तिता ॥ १५॥ विशोका दुष्टदमनी शमनी दुरितापदाम्। उमा गौरी सती चण्डी कालिका सापि पार्वती ॥ १६ ॥ शाकम्भरीं स्तुवन्ध्यायञ्जपन्संपूजयन्नमन्। अक्षय्यमश्नुते शीघ्रमन्नपानामृतं

दुष्टदमनी, उमा, गौरी, सती, चण्डी, कालिका और विपत्तियों का विनाश करनेवाली पार्वती है। १६। जो मनुष्य शाकंभरी का ध्यान, जप, पूजन, उसकी स्तुति और उसको नमस्कार करता है, वह शीघ्र ही अन्न, पान, अमृत और फल पाता

है । १७। भीमा देवी भी नीलवर्ण है, उसकी दाढ़ें और दाँत बड़े सुन्दर हैं, उसके नेत्र विशाल हैं, गोल और स्थूल कुच हैं । १। वह डमरु, कपाल और ढाल, तलवार धारण किये है ।

फलम् ॥ १७ ॥ भीमाऽपि नीलवर्णा सा दंष्ट्रादशनभासुरा ।
विशाललोचना नारी वृत्तपीनपयोधरा ॥ १८ ॥ चन्द्रहासं
च डमरुं पानपात्रं च बिभ्रती । एकवीरा कालरात्रिः सैवोक्ता
कामदा स्तुता ॥ १९ ॥ तेजोमण्डलदुर्दर्शा भ्रामरी चित्र-
कान्तिभृत् । चित्रानुलेपना देवी चित्राभरणभूषिता ॥ २० ॥
चित्रभ्रमरपाणिः सा महामारीति गीयते । इत्येता मूर्तयो
देव्या व्याख्याता वसुधाधिप ॥ २१ ॥ जगन्मातुश्चण्ड-

वह एकवीरा, कालरात्रि, कामदा, तेजोमण्डलदुर्दर्शा, भ्रामरी, चित्रकांतिभृत्, चित्रानुलेपना, चित्राभरणभूषिता, चित्रभ्रमरपाणि और महामारी इन नामों से प्रसिद्ध है । हे नृप, ये देवी की मूर्तियाँ शास्त्र में वर्णित हैं । १९–२१ । ये मूर्तियाँ जगन्माता चण्डिका

को कामधेनु कहलाती हैं। हे राजन्, यह चरित्र परम गुप्त है इसको किसी से कहना नहीं चाहिए। २२। हे राजन्, इन दिव्य मूर्तियों का अभीष्ट फल देनेवाला चरित्र बड़े यत्न

कायाः कीर्तिताः कामधेनवः। इदं रहस्यं परमं न वाच्यं कस्यचित्त्वया ॥ २२ ॥ आख्यानं दिव्यमूर्तीनामभीष्ट-फलदायकम्। तस्मात् सर्वप्रयत्नेन देवीं जप निरन्तरम् २३ सप्तजन्मार्जितैर्घोरैर्ब्रह्महत्यासमैरपि। पाठमात्रेण मन्त्राणां मुच्यते सर्वकिल्बिषैः २४ देव्या ध्यानं मयाख्यातं गुह्याद्-गुह्यतरं महत्। तस्मात् सर्वप्रयत्नेन सर्वकामफलप्रदम् २५

इति मूर्तिरहस्यं समाप्तम्।

से निरन्तर पढ़ो। इन मन्त्रों के पढ़ने से ब्रह्महत्या के समान घोर सात जन्म के पाप नष्ट हो जाते हैं। हे राजन्, मैंने अत्यन्त गुप्त देवी का ध्यान तुमसे कहा। विधिपूर्वक यह ध्यान करने से अभीष्ट फल मिलता है। २३-२५।

अथ नवचण्डीशतचण्डीसहस्रचण्डीप्रयोगः ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ यजमानः शुभदिने सपत्नीकस्तिलतैलेन कृताभ्यंगः स्नात्वा संपूर्ण-कलशहस्तो मंडपं प्रदक्षिणीकृत्य पश्चिमद्वारेण प्रविश्योपविश्य देशकालौ स्मृत्वा ममेह जन्मनि दुर्गाप्रीतिद्वारा सर्वापच्छान्तिपूर्वकदीर्घायुर्विपुलधनधान्यपुत्रपौत्राद्यनवच्छिन्नसन्ततिस्थिर-लक्ष्मीकीर्तिलाभशत्रुपराजयसदभीष्टसिद्ध्यर्थं ममामुककार्यसिद्ध्यर्थं वा सनवग्रहमखां-नवचण्डीं शतचण्डीं सहस्रचण्डींवा ब्राह्मणद्वारा करिष्ये॥तदंगतया गणेशपूजनंपुण्याहवाचनंमातृकापूजनं नान्दीश्राद्धमाचार्यादिवरणं च करिष्ये ॥ इति संकल्प्य तानि कृत्वा आचार्यादीन्वृत्वा तान्यथा-विभवं वस्त्रादिना संपूज्य प्रार्थयेच्च ॥ तेच शतचंड्यां दश ॥ सहस्रचंड्यां शतं ॥ केचिदत्र ग्रह-जपार्थमेकमृत्विजं वरयंति ॥ अथाचार्य आचम्य देशकालौ संकीर्त्य यजमानेन वृतोहमाचार्य-कर्म करिष्ये इति संकल्प्य यदत्रेतिगौरसर्षपान्विकीर्य पंचगव्येन कुशोदकेन वा मंडपं प्रोक्षेत् ॥ शुचीवो हव्या० आपोहिष्ठा० अपवित्रा० ॥ पृथ्वि त्वया० इत्युपविश्य अनंतासनाय नमः ॥ विमलासनाय० ॥ पद्मासनाय०॥ अपक्रामंतु०इतिभूमौ वामपादघातत्रयं कृत्वा यथोपदेशं विस्त-रतःसंक्षेपेणवाभूतशुद्ध्यादिकृत्वानवार्णविध्युक्तैकादशन्यासान्कुर्यात्॥अथवैकादशमेवं न्यासं

कुर्यात् ॥ ततो योनिमुद्रां प्रदर्श्य ध्यायेत्। श्वेतानना नीलभुजा सुश्वेतस्तनमंडला ॥ रक्तमध्या रक्त-
पादा नीलजंघोरुरुन्मदा ॥ सुचित्रजघना चित्रमाल्यांबरविभूषणा ॥ चित्रानुलेपनाकांतिरूप-
सौभाग्यशालिनी ॥ अष्टादशभुजा पूज्या सा सहस्रभुजा सती ॥ आयुधान्यत्र वक्ष्यंते दक्षिणाधः-
करक्रमात् । अक्षमाला च कमलं बाणोऽसिः कुलिशं गदा ॥ चक्रं त्रिशूलं परशुः शंखो घंटा च पाशकः ॥
शक्तिर्दण्डश्चर्म चापं पानपात्रं कमंडलुरिति । ततो वेद्यां सर्वतोभद्रमष्टदलं वा विलिख्य तत्र ब्रह्मादि-
मंडलदेवताः संस्थाप्य तन्मध्ये महीद्यौरित्यादिमंत्रैः कलशं संस्थाप्य तस्मिन्गंधपुष्पफलसर्वौ-
षधीदूर्वापंचपल्लवसप्तमृत्तिकास्तत्तन्मंत्रेण निक्षिप्य वस्त्रद्वयेनावेष्ट्य तदुपरि पूर्णपात्रं निधाय
कलशे वरुणमावाह्य पूजयेत् ॥ ततः कलशे देवताः स्मरेत् ॥ कलशस्य मुखे विष्णुः० देवदानव-
संवादे मथ्य० प्रसन्नो भव सर्वदा इति कलशं प्रार्थयेत् ॥ तथा कलशोपरिस्थपूर्णपात्रे वस्त्रे यंत्रं
लिखेत् ॥ तद्यथा ॥ मध्ये त्रिकोणं तद्बहिः षट्कोणं तद्बाह्ये वृत्तं तद्बाह्येऽष्टौ दलानि तद्बाह्ये चतुर्द्वारं-
चतुरस्रत्रयमिति एवं यंत्रं विलिख्य तत्राष्टादशभुजां अष्टभुजां वा सिंहारूढां सौवर्णीं देवीमूर्ति-
मग्न्युत्तारणप्राणप्रतिष्ठापूर्वकं प्रतिष्ठाप्य पूजयेत् ॥ तद्यथा ॥ स्ववामे कर्पूरादियुतजलपूर्णं
कलशं संपूज्य कलशस्य मुखे० गंगे च यमुने इत्यादि पठित्वा कलशमुद्रां प्रदर्श्य दक्षिणतः
शंखं संपूज्य ॥ शंखं चंद्रार्कदैवत्यमित्यादि पठित्वा शंखमुद्रां प्रदर्श्य शंखोदकेनात्मानं पूजाद्र-

व्याणि च प्रोक्षेत् ॥ अपवित्रः पवित्रो वा० ॥ पीठपूजां कुर्यात् ॥ देवीदक्षिणे गुं गुरुभ्यो नमः ॥ पं परमगुरुभ्यो नमः ॥ पं परात्परगुरुभ्यो नमः ॥ पं परमेष्ठिगुरुभ्यो नमः ॥ वामे गं गणपतये नमः ॥ दुं दुर्गायै नमः ॥ क्षं क्षेत्रपालाय० ॥ मध्ये आधारशक्त्यै नमः ॥ मूलप्रकृत्यै० ॥ कालाग्निरुद्राय० ॥ महामंडूकाय० कूर्माय० वराहाय० अनंताय० भूम्यै० अमृतार्णवाय० रत्नद्वीपाय० हेमगिरये० नंदनोद्यानाय० मणिभूम्यै० रत्नमंडपाय० कल्पतरवे० रत्नसिंहासनाय० ॥ आग्नेयादिकोणेषु धर्माय० ज्ञानाय० वैराग्याय० ऐश्वर्याय० अधर्माय० अज्ञानाय० अवैराग्याय० अनैश्वर्याय० ऊर्ध्वं ब्रह्मणे० अधः अनंताय० मध्ये वास्तुपुरुषाय० सं सत्त्वाय० रं रजसे० तं तमसे० मां मायायै० विं विद्यायै० ॥ पूर्वाद्यष्टदिक्षु उड्डाणपीठेश्वरसहितामुड्डाणपीठेश्वर्यम्बापादुकां पूजयामि ॥ मातृकापीठेश्वरसहितां मातृकापीठेश्वर्यंबापादुकां० ॥ जालंधरपीठेश्वरसहितां जालंधरपीठेश्वर्यम्बापा० ॥ कोल्हागिरिपीठेश्वरसहितां कोल्हागिरिपीठेश्वर्यम्बापादु० ॥ पूर्णगिरिपीठेश्वरसहितां पूर्णगिरिपीठेश्वर्यम्बापादुकांपू० संहारगिरिपीठेश्वरसहितां संहारगिरिपीठेश्वर्यम्बापा० ॥ कोल्हापुरपीठेश्वरसहितां कोल्हापुरपीठेश्वर्यम्बापा० ॥ कामरूपपीठेश्वरसहितां कामरूपपीठेश्वर्यंबापा० ॥ पुनः पूर्वादिचतुर्दिक्षु गं गणेशाय नमः क्षं क्षेत्रपालाय० पां पादुकाभ्यो० वं वटुकेभ्यो० ॥ आग्नेय्यादिविदिक्षु

जायै० गुल्फौ० ॥ अपर्णायै० जानुनी० ॥ हरिप्रियायै० ऊरू० ॥ पार्वत्यै० कटिं० ॥ आर्यायै० नाभिं० ॥ जगन्मात्रे उदरं ॥ मंगलायै० कुक्षिं० ॥ शिवायै हृदयं० ॥ माहेश्वर्यै० कंठं ॥ विश्ववंद्यायै० स्कंधौ० ॥ काल्यै बाहू० ॥ आद्यायै० हस्तौ० ॥ वरदायै० मुखं ॥ सुवाण्यै० नासिकां० ॥ कमलाक्ष्यै० नेत्रे० ॥ अंबिकायै शिरः० ॥ देव्यै० सर्वांगं ॥

अथाष्टोत्तरशतनामानि ॥ माहेश्वर्यै नमः महादेव्यै० जयंत्यै० सर्वमंगलायै० लज्जायै० भगवत्यै० वंद्यायै० भवान्यै० पापनाशिन्यै० चंडिकायै० कालरात्र्यै० भद्रकाल्यै० अपराजितायै० महाविद्यायै० महामेधायै० महामायायै० महाबलायै० कात्यायन्यै० जयायै० दुर्गायै० मंदारवनवासिन्यै० आर्यायै० गिरिसुतायै० धात्र्यै० महिषासुरघातिन्यै० सिद्धिदायै० बुद्धिदायै० नित्यायै० वरदायै० वरवर्णिन्यै० अंबिकायै० सुखदायै० सौम्यायै० जगन्मात्रे० शिवप्रियायै० भक्तसंतापसंहर्त्र्यै० सर्वकामप्रपूरिण्यै० जगत्कर्त्र्यै० जगद्धात्र्यै० जगत्पालनतत्परायै० अव्यक्तायै० व्यक्तरूपायै० भीमायै० त्रिपुरसुंदर्यै० अपर्णायै० ललितायै० वेद्यायै० पूर्णचन्द्रनिभाननायै० चामुंडायै० चतुरायै० चंद्रायै० गुणत्रयविभाविन्यै० हेरंबजनन्यै० काल्यै० त्रिगुणायै० यशोधारिण्यै० उमायै० कलशहस्तायै० दैत्यदर्पनिषूदिन्यै० बुद्ध्यै० कांत्यै० क्षमायै० शांत्यै० पुष्ट्यै० तुष्ट्यै० धृत्यै० मत्यै० वरायुधधरायै०

जं जयायै न० विं विजयायै न० जं जयंत्यै० अं अपराजितायै० ॥ तत्रैव अग्निमुखवेतालाय नमः प्रेतवाहनवेतालाय नमः ज्वालामुखवेताला० धूम्राक्षवेताला० कंदाय० नालाय० दलेभ्यो० केसरेभ्यो नमः कर्णिकायै० अं सूर्यमंडलाय० उं सोममंडलाय० मं वह्निमंडलाय० अं आत्मने० उं अंतरात्मने० पं परमात्मने० उं ज्ञानात्मने० विं विष्णुमायायै० चें चेतनायै बुं बुद्ध्यै० निं निद्रायै० क्षुं क्षुधायै० छां छायायै० शं शक्त्यै० तृं तृष्णायै० क्षां क्षांत्यै० जां जात्यै० लं ललितायै० शां शांत्यै० श्रं श्रद्धायै० कां कांत्यै० लं लक्ष्म्यै० धृं धृत्यै० वृं वृद्ध्यै० स्मृं स्मृत्यै० दं दयायै० तुं तुष्ट्यै० पुं पुष्ट्यै० मां मातृकायै० भ्रां भ्रांत्यै० ह्रींसर्वशक्तिकमलासनाय० सर्वात्मसंसर्गयोगपीठात्मने० इतिपीठपूजा ॥ तथा स्थापितमूर्तौ देवीमावाहयेत् ॥ आगच्छ वरदे देवि दैत्यदर्पनिषूदिनि ॥ पूजां गृहाण सुमुखि नमस्ते शंकरप्रिये ॥ दुर्गे देवि समागच्छ सान्निध्यमिह कल्पय ॥ बलिं पूजां गृहाण त्वमष्टाभिः शक्तिभिः सह । इति मंत्रौ पठित्वा मूर्तौ देवीमावाह्य मूलमंत्रेण जयंतीमंगलाकालीत्यनेनवा आसनपाद्यार्घ्याचमनमधुपर्कान्निवेदयेत् ॥ ततः पंचामृतस्नानं ॥ देवीसूक्तश्रीसूक्तसरस्वतीसूक्तैर्देवीमाहात्म्योक्तैः शक्रादय इत्यादिस्तोत्रैश्चाभिषेकः ॥ ततः पूर्वोक्तमंत्रेण वस्त्रकंचुकाभरणाष्टगंधबिल्वपत्रनानापुष्पहरिद्राकुंकुमसिंदूरालक्तकपरिमलद्रव्याणि समर्पयेत् ॥ अथांगपूजा ॥ दुर्गायै० पादौ० ॥ गिरि-

धीरायै० गौर्यै० शाकंभर्यै० शिवायै० अष्टसिद्धिप्रदायै० वामायै० शिववामांगवासिन्यै० धर्म-
दायै० धनदायै० श्रीदायै० कामदायै० मोक्षदायै० अपरायै० चित्स्वरूपायै० चिदानंदायै०
जयश्रियै० जयदायिन्यै० सर्वमंगलमंगल्यायै० जगत्त्रयहितैषिण्यै० शर्वाण्यै० पार्वत्यै० धन्यायै०
स्कन्दमात्रे० अखिलेश्वर्यै० प्रपन्नार्तिहरायै० देव्यै० सुभगायै० कामरूपिण्यै० निराका-
रायै० साकारायै० महाकाल्यै० सुरेश्वर्यै० शर्वायै० श्रद्धायै० ध्रुवायै० कृत्यायै० मृडान्यै०
भक्तवत्सलायै० सर्वशक्तिसमायुक्तायै० शरण्यायै० सर्वकामदायै० । इत्यष्टोत्तरशतनामानि ॥
अथावरणपूजा ॥ देव्या दक्षिणे ऐं महाकाल्यै विच्चे नमः ॥ वामे ह्रीं महालक्ष्म्यै विच्चे नमः ॥
पुरतः क्लीं महासरस्वत्यै विच्चे नमः । वामे हूं महिषाय नमः ॥ दक्षिणे क्ष्रौं सिंहाय नमः ॥ पुरतः
गं गणपतये नमः ॥ हूं कालाय नमः ॥ पश्चात् हूं मृत्यवे नमः ॥ षड्दलेषु हैं रुद्राय नमः ॥
ह्रौं गौर्यै नमः ॥ श्रीं विष्णवे नमः ॥ श्रीं लक्ष्म्यै नमः ॥ ऐं ब्रह्मणे नमः ॥ ऐं सरस्वत्यै नमः ॥
तत्रैव ह्रां हृदयाय नमः ॥ ह्रीं शिरसे स्वाहा ॥ ह्रूं शिखायै वषट् ॥ ह्रैं कवचायहुं ॥ ह्रौं नेत्र-
त्रयाय वौषट् ॥ ह्रः अस्त्राय फट् ॥ तत्रैव गुं गुरुभ्यो नमः ॥ पं परमगुरुभ्यो नमः ॥ पं पर-
मेष्ठिगुरुभ्यो नमः ॥ हरये नमः ॥ हराय नमः ॥ गणेशाय नमः ॥ तत्रैव नंदजायै नमः० रक्त-
दंतिकायै० शाकंभर्यै० दुर्गायै० भीमायै० भ्रामय०॥ अथाष्टदलेषु ब्राह्मयै० माहेश्वर्यै०

कौमार्यै० वैष्णव्यै० वाराह्यै० इंद्राण्यै० नारसिंह्यै० चामुंडायै० पूर्वादिदिक्षु अं असितांग-भैरवाय० रुं रुरुभैरवाय० चं चंडभैरवाय० क्रों क्रोधभैरवाय० उं उन्मत्तभैरवाय० कं कपालभैरवाय० भीं भीषणभैरवाय० सं संहारभैरवाय० ॥ पुनः पूर्वादिषु लं इन्द्राय० रं अग्नये० मं यमाय० षं निर्ऋतये० वं वरुणाय० यं वायवे० सं सोमाय० हं ईशानाय० ॥ तद्बहिः पूर्वादि० वज्राय० शक्त्यै० दंडाय० खड्गाय० पाशाय० अंकुशाय० गदायै० त्रिशूलाय० इत्यावरणपूजा ॥ ततः पूर्वोक्तमंत्रेण धूपदीपनैवेद्यादिमंत्रपुष्पांतपूजां कृत्वा नमो देव्यै महादेव्यै इत्यादि मंत्रैर्नमस्कृत्य यथासंभवं छत्रचामरगीतनृत्यवाद्यादिसमर्प्य कूष्मांडनारीकेलकदलीफलादिबलिं दत्त्वा मंत्रहीनं क्रियाहीनं० आवाहनं न जानामि० ॥ अनेन पूजनेन श्रीमहाकालीमहालक्ष्मीमहासरस्वत्यः प्रीयंतां ॥ ततः कुमारीपूजा ॥ देशकालौ संकीर्त्य शतचंडीजपांगत्वेन कुमारीपूजां करिष्ये इतिसंकल्प्य मूलेन षडंगं कृत्वा मूलमंत्रमुच्चार्य ॥ मंत्राक्षर-मयीं देवीं मातृणां रूपधारिणीं ॥ नवदुर्गात्मिकां साक्षात्कन्यामावाहयाम्यहम् ॥ इतिकुमारी-मावाह्य यथासंभवं पूजयेत् ॥ कुमार्यश्च प्रत्यहं शतं नव एका वा यथाशक्ति वा पूज्याः ॥ प्रत्यहमेक-वृद्ध्या वा पूजयेत् ॥ ततो ब्राह्मणसुवासिनीपूजा ॥ एवं देवीकुमार्यादिपूजा प्रत्यहं कार्या ॥ ततः सर्वे विप्राः कृतांगन्यासाः शतं नवार्णमंत्रं जप्त्वा कवचार्गलाकीलकानि सकृज्जप्त्वा सप्तशतीं

जप्त्वांते रहस्यानि नवार्णशतं च जपेत्।। एकस्मिन्दिने अनेकावृत्तौ तु कवचादीनां प्रत्यावृत्तिना-
वृत्तिः।।एवमृत्विजः प्रथमदिने एकं द्वितीये द्वे तृतीयेत्रीणि चतुर्थे चत्वारि रूपाणीत्येवं जपं कुर्युः ।।
ऋत्विजां यजमानस्य च प्रत्यहं क्षीरमात्राशनं अशक्तौ हविष्याशनं वा प्रत्यहं सहस्रं शतं दश वा
ब्राह्मणान् भोजयेत् पंचमेऽह्नि होमः । नवरात्रे तु नवम्यामेव होमः ।। केचित्तु अष्टम्यामारभ्य
नवम्यां समापयंति ।। अथ होमः देशकालौ स्मृत्वा मया ब्राह्मणद्वाराकृतस्य शतचंडीजपस्य
तत्संपूर्णतासिद्ध्यर्थं जपदशांशेन तिलादिमिश्रपायसद्रव्येण होमं करिष्ये इतिसंकल्प्य ।। अत्र
केचित्पुण्याहवाचनमपि कुर्वन्ति।।तथा पूर्वोक्तकलशस्थापनं देवतास्थापनंपूजनं चात्रैव कुर्वन्ति ।।
ततःसनवग्रहशतचंडीजपदशांशहोमंकर्तुं स्थंडिलादिकरिष्येइतिसंकल्प्यस्थंडिलमुपलिप्योल्लि
ख्य तत्र (शत) मंगलनामानमग्निं प्रतिष्ठाप्य समिध्य ध्यायेत् ।। ततः प्रागकृतं चेदिदानी-
मीशान्यां दिशि नवग्रहस्थापनं कृत्वा तत्पूर्वतः कलशं स्थापयेत् ।। ततोग्निसमीपमागत्यान्वा-
धानं कुर्यात्।।समिद्द्वयमादाय क्रियमाणेशतचंडीजपांगहोमेदेवतापरिग्रहार्थमन्वाधानंकरिष्ये।।
अस्मिन्नन्वाहितेग्नावित्यादिचक्षुषी आज्येनेत्यंतमुक्त्वा ।। आदित्यादिनवग्रहान् प्रतिद्रव्य-
मष्टाविंशति अष्ट वा संख्याकाभिः समित्तिलाज्याहुतिभिः अधिदेवताः प्रत्यधिदेवताश्च चतुः-
संख्याकाभिः तैरेव द्रव्यैः विनायकाद्या देवता इंद्राद्यष्टौ लोकपालांश्च द्वाभ्यां द्वाभ्यां समित्ति-

लाज्याहुतिभ्यां यक्ष्ये॥ महाकाली—महालक्ष्मी—महासरस्वतीः मूलमंत्रेण शतवारं सप्तशतीमंत्रैः जपदशांशसंख्यया पायसतिलपलाशपुष्पसर्षपपूगीफललाजादूर्वांकुरयवबिल्वफलरक्तचंदन-गुग्गुलद्रव्यैर्यथालाभद्रव्यैर्वा तिलमिश्रितपायसेन वा पुनर्मूलमंत्रेण शतवारं तैरेव द्रव्यैः आधार-शक्त्यादिपीठदेवताः महाकाल्याद्यावरणदेवताश्च एकैकाहुत्या पायसाज्येन यक्ष्ये॥ शेषेण स्विष्टकृतमित्याद्याज्यभागांतं कृत्वा॥ यजमानः इदं हवनीयद्रव्यं यथादैवतमस्तु नममेति त्यजेत्॥ नवग्रहादिभ्यः समित्तिलाज्यानिहुत्वा उक्तद्रव्याणि मूलमंत्रेण शतवारं हुत्वा सप्तशतीमंत्रैर्जपदशां-शेन हुत्वा पुनर्मूलमंत्रेण शतवारं जुहुयात्॥ मूलमंत्रो नवार्णमंत्रः॥ नवार्णमंत्रस्य केवलाज्ये-नैव वा होमः॥ अत्राध्यायसमाप्तौ उवाचस्थले च पत्रपुष्पफलैर्होमः॥ एवं प्रधानहोमं कृत्वा पीठ-देवताभ्यो नामभि राज्यं पायसं च जुहुयात्॥ आधारशक्त्यै० मूलप्रकृत्यै० कालाग्निरुद्राय० महामंडूकाय० कूर्माय० वराहाय० अनंताय० भूम्यै० अमृतार्णवाय० रत्नद्वीपाय० हेमगि-रये० नंदनोद्यानाय० मणिभूम्यै० रत्नमंडपाय० कल्पतरवे० रत्नसिंहासनाय० धर्माय० ज्ञानाय० वैराग्याय० ऐश्वर्याय० अधर्माय० अज्ञानाय० अवैराग्याय० अनैश्वर्याय० ब्रह्मणे० अनंताय० वास्तुपुरुषाय० सं सत्याय० रं० रजसे० तं तमसे० मां मायायै० विं विद्यायै० उड्डाणपीठेश्वरसहितोड्डाणपीठेश्वर्यम्बायै० मातृकापीठेश्वरसहितमातृकापीठेश्वर्यम्बायै० जालं-

धरपीठेश्वरसहितजालंधरपीठेश्वर्यम्बायै० कोल्हागिरिपीठेश्वरसहितकोल्हागिरिपीठेश्वर्यम्बायै० पूर्णगिरिपीठेश्वरसहितपूर्णगिरिपीठेश्वर्यम्बायै० संहारगिरिपीठेश्वरसहितसंहारगिरिपीठेश्वर्यम्बायै० कोल्हापुरपीठेश्वरसहितकोल्हापुरपीठेश्वर्यम्बायै० कामरूपपीठेश्वरसहितकामरूपपीठेश्वर्यम्बायै० गं गणेशाय० क्षं क्षेत्रपालाय० पां पादुकाभ्यो० बं बटुकेभ्यो० जं जयायै० विं विजयायै० जं जयंत्यै० अं अपराजितायै० अग्निमुखवेतालाय० प्रेतवाहनवेतालाय० बालामुखवेतालाय० धूम्राक्षवेतालाय० कंदाय० नालाय० दलेभ्यो० केसरेभ्यो० कर्णिकायै० अं सूर्यमंडलाय० उं सोममंडलाय० मं वह्निमंडलाय० आं आत्मने० उं अंतरात्मने० पं परमात्मने० उं ज्ञानात्मने० विं विष्णुमायायै० चें चेतनायै० बुं बुद्ध्यै० निं निद्रायै० क्षुं क्षुधायै० छां छायायै० शं शक्त्यै० तृं तृष्णायै० क्षां क्षांत्यै० जां जात्यै० लं ललितायै० शां शांत्यै० श्रं श्रद्धायै० कां कांत्यै० लं लक्ष्म्यै० धृं धृत्यै० वृं वृद्ध्यै० स्मृं स्मृत्यै० दं दयायै० तुं तुष्ट्यै० पुं पुष्ट्यै० मां मातृकायै० भ्रां भ्रांत्यै० ह्रीं सर्वशक्तिकमलासनाय० सर्वात्मसंसर्गयोगपीठात्मने० इतिपीठदेवताहोमः । अथावरणदेवताः । ऐं महाकाल्यै विच्चे ह्रीं महालक्ष्म्यै विच्चे क्लीं महासरस्वत्यै विच्चे हूं महिषाय० क्षं सिंहाय० गं गणपतये० हूं कालाय० हूं मृत्यवे० ह्रैं रुद्राय० ह्रौं गौर्यै० श्रीं विष्णवे० श्रीं लक्ष्म्यै० ऐं

ब्रह्मणे० ऐं सरस्वत्यै० ह्रां हृदयाय० ह्रीं शिरसे० ह्रूं शिखायै० ह्रैं कवचायहुं ह्रौं नेत्रत्रया-
यवौषट्० ह्रः अस्त्रायफट्० गुं गुरुभ्यो० पं परमगुरुभ्यो० पं परमेष्ठिगुरुभ्यो० हरये०
हराय० गणेशाय० नंदजायै० रक्तदंतिकायै० शाकंभर्यै० दुर्गायै० भीमायै० भ्रामर्यै०
ब्राह्मयै० माहेश्वर्यै० कौमार्यै० वैष्णव्यै० वाराह्यै० इंद्राण्यै० नारसिंह्यै० चामुंडायै० अं
असितांगभैरवाय० रुं रुरुभैरवाय० चं चंडभैरवाय० क्रों क्रोधभैरवाय० उं उन्मत्तभैरवाय०
कं कपालभैरवाय० भीं भीषणभैरवाय० सं संहारभैरवाय० लं इंद्राय० रं अग्नये० मं
यमाय० क्षं निर्ऋतये० वं वरुणाय० यं वायवे० सं सोमाय० हं ईशानाय० वज्राय०
शक्त्यै० दंडाय० खड्गाय० पाशाय० अंकुशाय० गदायै० त्रिशूलाय० ॥ एवं होमं कृत्वा
स्विष्टकृदादिप्रायश्चित्तहोमांतं कृत्वा इंद्रादिनवग्रहक्षेत्रपालादिभ्यो माषभक्तबलींस्तत्तन्मंत्रैर्द-
द्यात् ॥ तत्र मंत्राः ॥ इंद्रं वा० इंद्रः सुरपतिश्चैव वज्रहस्तो महाबलः ॥ शतयागाधिपो देवस्तस्मै
नित्यं नमो नमः ॥ इंद्राय सांगाय सपरिवाराय सायुधाय सशक्तिकाय इमं माषभक्तबलिं समर्प-
यामि भो इंद्र इमं बलिं भक्ष दिशं रक्ष ममयजमानस्यायुःकर्ता शांतिकर्ता पुष्टिकर्ता तुष्टिकर्ता कल्या-
णकर्ता वरदोभव ॥ अनेन बलिदानेन इंद्रः प्रीयतां ॥ १ ॥ अग्निदूतं० आग्नेयः पुरुषो रक्तः
सर्वदेवमयोऽव्ययः ॥ धूम्रकेतुरनाधृष्यस्तस्मै नित्यं नमोनमः ॥ अग्नये० इत्यादि० ॥ २ ॥

यमाय सोमं० । यमश्चोत्पलपत्राक्षः किरीटी दंडधृक्सदा ॥ लोकसाक्षी विशुद्धात्मा तस्मै नित्यं
नमोनमः ॥ यमाय सांगायेत्यादि० ॥ ३ ॥ मोषुणः परापरा० निर्ऋतिस्तु पुमान्कृष्णः सर्व-
रक्षोधिपो महान् ॥ खड्गहस्तो महासत्त्वस्तस्मै नित्यं० निर्ऋतये सांगायेत्यादि० ॥ ४ ॥
तत्त्वायामि० वरुणः सर्वलोकेषु पुरुषो निम्नगाधिपः ॥ पाशहस्तो महाबाहुस्तस्मै नित्यं०
वरुणाय सांगायेत्यादि० ॥ ५ ॥ तववाय० सर्वप्राणात्मको वायुः सर्वजंतुष्ववस्थितः ॥ ध्वज-
हस्तो महाप्राणस्तस्मै नित्यं० वायवे सांगायेत्यादि० ॥ ६ ॥ सोमोधेनुं० गौरो यस्तु पुमान्सौ-
म्यः सर्वौषधिसमन्वितः । नक्षत्राधिपतिः सोमस्तस्मै नित्यं० सोमाय सांगायेत्यादि० ॥ ७ ॥
तमीशानं० ईशानः पुरुषः शुक्लः सर्वदेवाधिपो महान् ॥ शूलहस्तो विरूपाक्षस्तस्मै नित्यं० ईशा-
नाय सांगायेत्यादि० ॥ ८ ॥ आयं गौः पृश्नि० योसावनंतरूपेण ब्रह्मांडं सचराचरं ॥ पुष्प-
वद्धारयेन्मूर्ध्नि तस्मै नित्यं० अनंताय सांगायेत्यादि० ॥ ९ ॥ ब्रह्मजज्ञानं पद्मयोनिश्चतुर्मूर्तिर्वेदा-
वासः पितामहः ॥ कमंडलुधरो देवस्तस्मै० ॥ ब्रह्मणेसांगायेत्यादि० ॥ १० ॥ नवग्रहेभ्यः
सांगेभ्य इत्यादिना ग्रहेभ्यो बलिं दत्वा क्षेत्रपालाय दद्यात् ॥ क्षेत्रस्य पतिना० सर्वभूताधिपाय
क्षेत्राधिपतये शाकिनीडाकिनीभूतप्रेतपिशाचादिपरिवारसहिताय इमं बलिं समर्पयामि ॥
भो क्षेत्रपाल इमं बलिं भक्ष दिशो रक्ष मम यजमानस्य वा आयुः कर्तेत्यादि० । बलिं गृह्णंत्विमं देवा

आदित्या वसवस्तथा ॥ मरुतश्चाश्विनौ रुद्राः सुपर्णाः पन्नगाः खगाः॥ असुरा यातुधानाश्च पिशा-
चोरगराक्षसाः ॥ डाकिन्यो यक्षवेताला योगिन्यः पूतनाः शिवाः । जृंभकाः सिद्धगंधर्वा
नागा विद्याधरा नगाः। दिक्पाला लोकपालाश्च ये च विघ्नविनायकाः॥जगतांशांतिकर्तारोब्रह्मा-
द्याश्च महर्षयः ॥ माविघ्नं मा च मे पापं मासंतु परिपंथिनः ॥ सौम्या भवंतु तृप्ताश्च भूतप्रेताः सुखा-
वहाः ॥ इति मंत्रान्पठेत् ॥ अयं बलिः शूद्रेण दुर्ब्राह्मणेन वा नेयः ॥ ततो हस्तौ पादौ प्रक्षाल्याचम्य
पूर्णाहुतिं जुहुयात्॥ स्रुचि स्रुवेण द्वादशवारमाज्यं गृहीत्वा नारिकेलादि च गृहीत्वा॥समुद्रादूर्मि०
३मूर्धानं०१ पुनस्त्वा० पूर्णादर्वि० सप्तते अग्ने० धामं ते विश्वं० मूलमंत्रः नमो देव्यै इत्यादिमंत्राश्च॥
ततो वसोर्धारां हुत्वा प्रणीताविमोकादिकर्मशेषं समाप्य ॥ मूलमन्त्रेण होमदशांशेन दुग्धेन
जलेन वा तर्पणं कृत्वा तेनैव मंत्रेण तद्दशांशेन मार्जयेत् ॥ ततो यजमान आचार्यादीन्वस्त्राद्यैः संपूज्य
तेभ्योगोमिथुनानि हिरण्यं च दद्यात् तत आचार्यादिभ्योऽन्येभ्यो वा कपिलागोनीलमणिश्वेता-
श्वछत्रचामरभूमिशय्यासप्तधान्यानि यथासंभवं वा दद्यात्॥ तत आचार्यादयः कलशोदकेन
सपत्नीकं सकुटुंबं यजमानं समुद्रज्येष्ठाइत्यादिभिः सुरास्त्वेत्यादिभिर्ग्रहमंत्रैश्चाभिषिंचेयुः ॥ ततो
यजमानो ग्रहाणामुत्तरपूजां कृत्वाचार्येण विसर्जने कृते ग्रहपीठदानंकृत्वा देवीं पंचोपचारैःसंपूज्य
महाबलिं दद्यात् ॥ तत्र क्षत्रियादिनाश्वमेषछागमहिषाणामन्यतरो देयः ॥ विप्रेण तु कूष्मांड-

बिल्वमित्तवश्च देयाः ॥ सचेत्थं ॥ देवीं द्रोणपुष्पबिल्वाम्रदलजातीचंपकैः संपूज्य कर्ता उदङ्मुखः देवीमुखं वा बलिं गंधादिनाभ्यर्च्य ॥ पशुस्त्वं बलिरूपेण मम भाग्यादुपस्थितः ॥ प्रणमामि ततः सर्वरूपिणं बलिरूपिणं ॥ चंडिकाप्रीतिदानेन दातुरापद्विनाशनं। चामुंडाबलिरूपाय बले तुभ्यं नमोस्तुते। यज्ञार्थे बलयः सृष्टाः स्वयमेव स्वयंभुवा ॥ अतस्त्वां घातयाम्यद्य तस्माद्यज्ञे बधोऽवधः इति बलिमभिमन्त्र्य ऐं ह्रीं श्रीं इतिमंत्रपुष्पं क्षिप्त्वा॥ रसना त्वं चंडिकायाः सुरलोकप्रसाधकः॥ ह्रांह्रींखड्गश्रांहुंफट्इतिखड्गमन्त्रद्वा शस्त्रं संपूज्य ॐ कालि कालि यज्ञेश्वरि लोहदंडायै नमः॥ इति बलिं छेदयित्वा ॐ ह्रीं ऐं ह्रीं कौशिकरुधिरेणाप्यायतां इतिदेव्यै निवेद्य ततो माषपिष्टमयं शत्रुं कृत्वा खड्गेन छेदयित्वा स्कंदाय त्रिशिखाय च दत्त्वा बलिशेषं रक्षोभ्यो हरेत्॥ मंत्रस्तु ॐ ह्रींस्फुरस्फुर कुंभ २ सूनु २ गुलु २ धुनु २ मारय २ विद्रावय २ विदारय २ कंपय २ कंपातय २ पूरय २ ॐ ह्रीं ॐ हुं फट् २ हुं मर्दय २ हुं ॥ ततः शेषं बहिर्दद्यात्। तत्र मंत्राः बलिं गृह्णंत्विमं देवा इत्यादयः पूर्वोक्ता एव। ततः स्नात्वा तिलकं धृत्वा देवीं प्रार्थयेत् ॥ तत्र मंत्राः ॥ खड्गिनीशूलिनीघोरा० १ शूलेन पाहिनो देवि० ४ नमोदेव्यै महादेव्यै० ६ रूपं देहि यशो देहि भगं भगवति देहि मे। पुत्रान्देहि धनं देहि सर्वान्कामांश्च देहि मे। महिषघ्निमहामाये चामुंडे मुंडमालिनि। आयुरारोग्यमैश्वर्यं देहि देवि नमोस्तुते॥ इति देवीं संप्रार्थ्य गुह्यातिगुह्यगोप्त्री त्वं

गृहाणास्मत्कृतं जपं । सिद्धिर्भवतु मे देवि प्रसादात्तव सुंदरि ।। इतिदेव्यै जपं निवेद्य ।। कृतस्य कर्मणः सांगतासिद्ध्यर्थं कुमारीब्राह्मणसुवासिनीः पूजापूर्वकं संभोज्य संकल्प्य वा न्यूनातिरिक्तदोषपरिहारार्थं ब्राह्मणेभ्यो भयसीं दक्षिणां दत्त्वाग्निं संपूज्य विभूतिं धृत्वा गच्छ गच्छेत्यग्निं विसृज्य मूलमंत्रेण पुष्पेण देवीमुद्वास्य तेनैव षडंगं कृत्वा उत्तिष्ठ ब्रह्मणः अभ्यार० उत्तिष्ठ देवि चंडेशि शुभां पूजां प्रगृह्य च ।। कुरुष्व मम कल्याणमष्टभिः शक्तिभिः सह ।। इति मंत्रैर्विसृज्याचार्याय दत्त्वा मंत्रं पठेत् ।। त्रैलोक्यमातर्देवि त्वं सर्वभूतदयान्विते । दानेनानेन संतुष्टा सुप्रीता वरदा भव ।। ततः यस्य स्मृत्या० प्रमादात्कुर्वतां कर्म० इत्यादि जपित्वा कर्मेश्वरार्पणं कृत्वा सुहृद्युतो भुंजीत ।। इदमेव पूजा होमबल्यादिविधानं नवरात्रेपि ज्ञेयं ।। तत्र विशेषस्तु दशम्यां प्रातर्देवीविसर्जनं ।। अन्यच्च महानिबंधेभ्योवगंतव्यं ।। इति संक्षेपेण नवचंडीशतचंडीसहस्रचंडीप्रयोगः ।।

---

* इति *

दुर्गासप्तशती

भाषानुवादसहिता समाप्ता

केसरीदास सेठ द्वारा, नवलकिशोर-प्रेस लखनऊ में मुद्रित और प्रकाशित सन् १९३६ ई०